Reg. No. A629.

सम्मेलन पत्रिका

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की

मुखपत्रिका।

भाग २ } अश्विन संवत् १९७१ { अङ्क १

विषय सूची।

वार्षिक मूल्य १)] [एक संख्या =)

साहित्य सम्मेलन कार्य्यालय से बा० नरेन्द्रनारा...

सम्मेलन के उद्देश्य

(१) हिन्दी साहित्य के अंगों की उन्नति का प्रयत्न करना।

(२) देवनागरी लिपि का देश भर में प्रचार करना और देश व्यापी व्यवहारों और कार्यों के सुलभ करने के लिये हिन्दी भाषा को राष्ट्र भाषा बनाने का प्रयत्न करना।

(३) हिन्दी को सुगम, मनोरम और लाभदायक बनाने के लिये समय समय पर उसकी शैली के संशोधन और उसकी त्रुटियों और अभावों के दूर करने का प्रयत्न करना।

(४) सरकार, देशी राज्यों, पाठशालाओं, कालेजों, विश्व विद्यालयों और अन्य संस्थाओं, समाजों, जनसमूहों तथा व्यापार ज़मींदार और अदालतों के कार्यों में देवनागरी लिपि और हिन्दी भाषा के प्रचार का उद्योग करते रहना।

(५) हिन्दी के ग्रन्थकारों, लेखकों, पत्रसंपादकों, प्रचारकों और सहायकों को समय समय पर उत्साहित करने के लिये पारितोषिक, प्रशंसापत्र, पदक, उपाधि आदि से सम्मानित करना।

(६) उच्च-शिक्षा प्राप्त युवकों में हिन्दी का अनुराग उत्पन्न करने और बढ़ाने के लिये प्रयत्न करना।

(७) जहां आवश्यकता समझा जाय वहां पाठशाला, समिति तथा पुस्तकालय स्थापित करने और कराने का उद्योग करना तथा इस प्रकार की वर्त्तमान संस्थाओं की सहायता करना।

(८) हिन्दी-साहित्य के विद्वानों को तयार करने के लिए हिन्दी की उच्च परीक्षाएं लेने का प्रबन्ध करना।

(९) हिन्दी भाषा के साहित्य की वृद्धि के लिये उपयोगी पुस्तकें तैयार करना।

(१०) हिन्दी-साहित्य सम्मेलन के उद्देश्यों की सिद्धि और सफलता के लिए अन्य जो उपाय आवश्यक और उपयुक्त समझे जांय उन्हें काम में लाना।

सम्मेलन-पत्रिका का उद्देश्य

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के उद्देश्यों की पूर्ति में सहायता करना, और साहित्य-प्रेमियों से इसीके लिये उपदेश लेना।

सम्मेलनपत्रिका।

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की कार्यकारिणी समिति
की ओर से प्रतिमास प्रकाशित।

भाग २ } आश्विन संवत् १९७१ { अङ्क १

नये वर्ष में पदार्पण।

लीजिये पाठक अनेक विघ्न बाधाओं को पार करके आज आप की सम्मेलन पत्रिका नये वर्ष में पदार्पण करती है। संसार का कोई ऐसा पदार्थ नहीं है जो दोष रहित न हो, कुछ न कुछ दोष अवश्य ही होता है। केवल दोष रहित परमात्मा है। संसार के इस अटल नियम से "पत्रिका" भी मुक्त नहीं है, हम यह मानते हैं कि "पत्रिका" में भी अनेक दोष हैं, अनेक त्रुटियां हैं। पर आपका और हमारा कर्त्तव्य है कि त्रुटियों को दूर करने की चेष्टा करें न कि त्रुटियों से घबड़ा कर "पत्रिका से मुंह मोड़ लें। एक चतुर वैद्य बार बार रोगी को उसके रोग की न याद दिला कर रोग के दूर करने की चेष्टा करता है। "पत्रिका" के प्रेमियों को भी चतुर वैद्य के समान ही "पत्रिका" की त्रुटियों से न घबड़ा कर त्रुटियों को दूर करने का प्रयत्न करना चाहिये। दुर्बल हृदय में केवल आशा ही बलका सञ्चार करती है, संसार आशाही पर खड़ा है। बड़े बड़े सङ्कट आ जाने पर एक आशा ही डूबते को तिनकेके सहारे का काम देती है। गत वर्ष "पत्रिका" अपना यथोचित कर्त्तव्य पालन न करने पर भी आज केवल आशा के भरोसे ही नवीन वर्ष में पदार्पण करती है। "पत्रिका" को आशा है और यह दृढ़ आशा है कि उसके प्रेमी पाठक उसकी त्रुटियों पर ध्यान न देकर उसको अपने कर्त्तव्य

पालन में सहायता देंगे। क्योंकि गत वर्ष हिन्दी साहित्य सम्मेलन के कारण हिन्दीका विशेष प्रचार हुआहै। जिसका विवरण,सम्मेलन के मन्त्री द्वारा लखनऊ में सम्मेलनका जो आगामी अधिवेशन होगा उसमें उपस्थित किया जायगा। इस वर्ष हिन्दी में कई दैनिक और साप्ताहिक पत्र निकले हैं। हिन्दीके लिये यह शुभ लक्षण है। हिन्दी के अनेक नये और पुराने सहयोगी सम्मेलन पत्रिका के परिवर्त्तनमें दर्शन देते रहे हैं। इसलिये गतवर्ष अपना यथोचित कर्त्तव्य पालन न करने पर भी आज "पत्रिका" केवल आशा के भरोसे ही नवीन वर्ष में पदार्पण करती हुई, भगवान से यही प्रार्थना करती है कि गतवर्ष की अपेक्षा इस वर्ष वह हिन्दी भाषा भाषियों की विशेष रूपसे सेवा करने में समर्थ हो।

पिछली बार हम कह चुके हैं कि इस वर्ष हम ने "पत्रिका" को विशेष मनोरञ्जक बनाने के लिये बहुत सी बातें सोची हैं। समय समय पर पाठकोंको हमारी स्कीम का पता लगेगा ही पर यहां पर केवल एक बात कह देना चाहते हैं कि इस वर्ष हम उन लेखकों के लेख "पत्रिका" में छापने का विचार रखते हैं जिनकी लेखनी के बल से सहस्रों मनुष्योंकी रुचि हिन्दी पढ़नेकी हुई है। जिनके लेखों को पढ़ने के लिये पाठक चातक की भांति बाट लगाये रहते हैं। इसके अतिरिक्त हमने एक और भी बात सोची है कि स्वतन्त्र समालोचनाओं का हिन्दी संसार में अभाव रहता है। इस वर्ष पत्रिका में विविध भांति के ग्रन्थों की समय समय पर समालोचनाएं हुआ करेंगी। हिन्दी भाषा के विद्वान लेखकों द्वारा समालोचनाएं लिखायी जावेंगी। जिससे हिन्दी साहित्य में समालोचना करने की जो घृणित प्रणाली प्रचलित है, दूर हो। कहने का साराँश यह है कि हमारे हृदय में पत्रिका को सर्वाङ्ग सुन्दर बनाने की बड़ी भारी लालसा है, उस लालसा को पूरा करना न करना हिन्दी प्रेमियों के हाथ है। इस विषय में जो कुछ हम पिछली बार प्रार्थना कर चुकेहैं उस से अधिक इस वार कुछ कहना नहीं चाहते हैं। पर देखना यही है कि मातृभाषा की उपासना करने के लिये हिन्दी प्रेमी कहां तक तैयार हैं, देखना चाहते हैं कि मातृ भाषा की उपासना के लिये कितने हिन्दी प्रेमी एक एक रुपया वार्षिक न्यौछावर कर सकते हैं जो हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन हिन्दी भाषा भाषियोंकी एक मात्रसंस्था है उस संस्था की मुख्य पत्रिका के कितने हज़ार ग्राहक होते हैं?

हिन्दी संसार।

भरतपुर राज्य में उर्दू

राजपूताने में भरतपुर राज्य इतिहास प्रसिद्ध स्थान है। समय समय पर भरतपुर राज्य के जाट अपनी वीरता का अनुपम परिचय देते आए हैं। भरतपुर में राजपूताने के अन्यान्य स्थानों की भांति बैसवाड़ी, मारवाड़ी आदि मिश्रित हिन्दी न बोली जाकर, विशुद्ध ब्रजभाषा बोली जाती है। भरतपुर नरेश ब्रजेन्द्र कहलाते हैं। पूर्व समय में वहां ब्रजभाषा के कई नामी कवि होगये हैं और काशी नागरी प्रचारिणी सभा वहाँ के सुप्रसिद्ध कवि सूदनकृत—"सुजान चरित्र" भी प्रकाशित कर चुकी है। पर दुख के साथ कहना पड़ता है कि वहां सर्व साधारण में हिन्दी का विशेष प्रचार होने पर भी राजकीय कार्य्यों में उर्दू का डंका बज रहा है। यद्यपि वहां पिछलेदो तीन वर्ष से हिन्दी साहित्य-सभा स्थापित है और उसके द्वारा सर्व साधारण में हिन्दी का प्रचार खूब होरहा है, किन्तु राजकीय कार्यों में उर्दू का डंका बज रहा है। हमारी सम्मति में भरतपुर राज्य की रेजेन्सी कौंसिल को भी मारवाड़ की रेजन्सी कौंसिल तथा राजपूताने के चीफ कमिश्नर की आज्ञा का अनुकरण करके समस्त हिन्दी प्रेमियों की विशेषतः भरतपुर राज्यके हिन्दी भाषा भाषियों की हार्दिक लालसा को पूर्ण करना चाहिये।

* * * *

शोक!!

हमें यह जान कर अत्यन्त शोक हुआ कि काशी के "भारत जीवन" पत्र और प्रेस के स्वामी, बाबू श्रीकृष्ण वर्मा का देहान्त हो गया। बाबू श्रीकृष्ण वर्मा, स्वर्गीय बाबू रामकृष्ण वर्मा के भतीजे थे बाबू रामकृष्ण वर्मा की मृत्यु हो जाने के पीछे आपही भारतजीवन समाचार पत्र और प्रेस चलाते थे। बीच में कुछ दिनों के लिये 'भारत जीवन" समाचार पत्र बन्द हो गया था, परन्तु यूरुप में युद्ध छिड़ जाने से बाबू श्रीकृष्ण वर्मा ने इन दिनों भारत जीवनको

दैनिक कर दिया था। जो अब उनकी मृत्यु हो जाने के कारण बन्द हो गया है। हमारी बाबू श्रीकृष्णवर्मा के कुटुम्बियों के प्रति इस दुःख में हार्दिक सहानुभूति है। एक समय "भारत जीवन" ने हिन्दी की बहुत सेवा की थी। क्या काशीवासियों में ऐसा कोई हिन्दी प्रेमी नहीं है, जो भारत जीवन पत्र को जीवित रखने की चेष्टा करे।

शुद्ध साहित्य समिति—अल्मोड़ा।

अल्मोड़ा से श्रीयुत हरीदत्त सनवाल सूचित करते हैं कि श्रीयुत सत्यदेव जी ने मार्च सन् १९१२ में यहां एक हिन्दी पुस्तकालय स्थानीय बालकों की भलाई के लिये खोला था। इस वर्ष इसकी बड़ी भारी प्रतिष्ठा इस नगर में हुई है। इस समय इसमें प्रायः १७ साप्ताहिक और मासिक पत्र आते हैं। इसके अतिरिक्त वहां इस समिति से हिन्दी का विशेष प्रचार हुआ है। और वहां के नवयुवकों को इस समिति से विशेष लाभ पहुंचा है"। हमारी सम्मति में भारतवर्ष के प्रत्येक स्थान के नवयुवकों को अल्मोड़ा की भांति शुद्ध साहित्य का प्रचार करना चाहिये।

पं० प्रताप नारायण मिश्र।

ऐसे बहुत कम हिन्दी प्रेमी होंगे कि जो स्वर्गीय पं० प्रताप नारायण मिश्र के नाम से परिचित न हों, भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के साथ साथ मातृ भाषा के जिन भक्तों ने हिन्दी साहित्य की सेवा की थी उनमें से एक पं० प्रताप नारायण मिश्र भी थे। पं० प्रताप नारायण मिश्र हिन्दी के अद्भुत कवि और लेखक थे। उन्हों ने वर्षों हानि सहकर "ब्राह्मण" नामक एक मासिक पत्र निकाला था। और हिन्दी साहित्य की अच्छी सेवा की थी। स्वर्गीय बाबू बालमुकुन्द गुप्त और स्वर्गीय पं० प्रभुदयालु पांडे दोनों ने हिन्दी में गद्य पद्य मय लेख लिखना उक्त मिश्र जी से ही सीखा था। अबकी बार आश्विन कृष्ण १० को बांकीपुर की हिन्दी साहित्य सभाने भारतेन्दु जयन्ती के समान उक्त मिश्रजी की भी जयन्ती मनाई थी। बांकीपुर—खड्ग विलास प्रेस के स्वामी बाबू रामरणविजयसिंह ने पं० प्रताप नारायण मिश्र के सम्बन्ध में एक सारगर्भित लेख पढ़ा था। हिन्दी के विषय में इस भांति चर्चा होना जागृति का लक्षण है।

पत्र सम्पादन कला।

लेखक-पं० नन्दकुमार देव शर्मा।

महत्व और जन्म।

अन्य कलाओं की अपेक्षा पत्र-सम्पादन कला का विशेष महत्व है। आज कल सभ्य देशों में पत्र सम्पादन कला का विशेष आदर है। अङ्गरेजी के प्रसिद्ध लेखक—टोमस कारलाई का कहना है—"The Journalists are your true kings and clergy" अर्थात् समाचार पत्र लेखक तुम्हारे सच राजा और धर्मोपदेशक हैं। इसमें सन्देह नहीं है कि पत्र सम्पादन का कार्य कठिन है, एक राजा भय दिखला कर अपनी प्रजा को काबू में लाता है पर एक सम्पादक अपनी स्पष्टवादिता और निर्भीक् लेखनी से सर्वसाधारण के हृदय पर स्वतः ही अधिकार प्राप्त कर लेता है। जैसे डाक्टर रोगों का इलाज करता है, वैसे ही सम्पादक, एक जाति और देश की स्थिति सुधारने की चेष्टा करता है। डाक्टर के हाथ में एक रोगी की मृत्यु और जीवन है वैसे ही सम्पादक के हाथ में एक जाति और समाज का जीवन और मरण है। अमेरिका के प्रसिद्ध विद्वान् वेंडल फिलिप्स का कहना है कि मुझे समाचार पत्र की रचना करने दो, मुझे इस बात की चिन्ता नहीं है कि कौन धर्म अथवा नियमों की रचना करता है। एक और विद्वान का कहना है कि समाचार पत्र भी उच्च शिक्षा का कार्य करते हैं। सच पूछिये तो वर्त्तमान समय में किसी देश की शिक्षा और सभ्यता जाननी हो तो देखना चाहिये कि उस देश में समाचार पत्रों का कितना प्रचार है? जिस देश में समाचार पत्रों का अधिक प्रचार है उस देश में ही लोकमत की जागृति है। लोक शिक्षा के विस्तार करने तथा लोक मत के जागृत करने में समाचार पत्र बड़ा काम करते हैं। राजा और प्रजा के बीच में समाचार पत्र वकील का काम करते हैं। देश और समाज में किस समय किस विषय की आवश्यकता है देश की स्थिति सुधारने के लिये किन किन बातों का प्रयोजन है? संसार में क्या हो रहा है किस किस देश के बीच में समराग्नि प्रज्वलित हुई है? कौन से देश में व्यापार की कैसी दशा

है और उसका हमारे देश पर क्या प्रभाव पड़ेगा, इन सब विषयों के जानने का सुलभ साधन समाचारपत्रों के अतिरिक्त और कोई नहीं है अमेरिका, इङ्गलेण्ड आदि देशों में वृद्धि बनिता आबाल सभी समाचार पत्र बड़े चाव से पढ़ते हैं। शोक है। कि हमारे देश में समाचार पत्रों का उतना प्रचार नहीं हुआ है, जितना होना चाहिये।

सब से प्रथम समाचार पत्रों का जन्म किस देश में हुआ है? इस विषय में निश्चित रूप से कुछ कहा नहीं जा सकता है किसी किसी का मत है कि पहले पहल चीन देश की राजधानी पेकिन से पेकिन गज़ट निकला था पीछे अन्य देशों ने भी समाचार पत्रों को अपनाय लिया. बहुमत इस ओर झुका हुआ है और ठीक भी प्रतीत होता है कि पहले पहले पन्दरवीं शताब्दी में यूरोप के कई देशों में सभाचार पत्रों का जन्म हुआ था। अमेरिका में सन् १६ ९० ई० से समाचार पत्रों का प्रचार हुआ है, और सन् १७७५ ई० में अमेरिका की अखबार संख्या केवल १३ थी। सन् १८०० में लग भग सौ के हुई सन् १९०० में करीब १८ अठारह हज़ार बढ़ी। अब वहां इस समय केवल दैनिक पत्र तेईस हजार हैं, जिनके पाठक अगणित हैं। अमेरिका में कितने ही समाचार पत्र ऐसे हैं जिनका प्रधान कार्य्यालय न्यूयार्क में है और उनके कार्य्यालय की शाखाएँ पेरिस तथा लण्डन में भी हैं। अमेरिका में दैनिक पत्रों की इतनी उन्नति का कारण यह भी प्रतीत होता है कि वहाँ के शासन सम्बन्धी कार्यों का घनिष्ट सम्बन्ध सर्वसाधारण से है। वहां कोई बंश परम्परागत राजा नहीं होता है, वहां के सर्व साधारण मिलकर प्रेज़ीडेन्ट को चुनते हैं। वहां का शासन प्रजाकी सम्मति बिना नहीं होता है इसलिये वहां दैनिक अखबारों की विशेष वृद्धि है। वहां पर अखबारों को पढ़ने के लिये अमीर से लेकर ग़रीब तक सब लालयित रहते हैं। स्त्रियाँ और बच्चे तक अखबार पढ़ते हैं। मज़दूर मज़दूरी करने जारहा है, पर एक अख़बार उसके हाथमें ज़रूर है। मेहतर झाड़ू देता है और साथ ही अख़बार पढ़ता है, केवल इन घटनाओं से ही ज्ञात होता है कि वहां के निवासी अपने देश के कार्यों में कितना भाग लेते हैं।

फ्राँस में भी समाचार पत्रों का जन्म लगभग सन् १९११ के हुआ है। सुना जाता है कि वहां के निवासियों को भी समाचार पत्रों के

पढ़ने की विशेष रुचि है। वहां के प्रसिद्ध टां और जनरल दोनों पत्रों की ग्राहक संख्या पन्दरह पन्दरह लाखसे कम नहीं है। जर्मनी के अकेले वर्लिन नगर में क़रीव पच्चास दैनिक पत्र निकलते हैं। लन्दन से भी कितनेही अच्छे दैनिक पत्र निकलते हैं, रानी एलीजावेथ के समय से इङ्गलैंड की काया बहुत कुछ पलटी है जभी से वहां समाचार पत्रों का प्रचार हुआ है। लन्दन के "टाइम्स" अखबार का बड़ा ही मनोरंजन इतिहास है, जो फिर कभी पाठकों को सुनावेंगे। डेली टेलीग्राफ़, डेली मेल, डेलीन्यूज़, डेली क्रानिकल, मैनचेस्टर गार्जियन आदि कितने ही दैनिक समाचार पत्र निकलते हैं इनके पढ़नेवालेभी लाखों हैं इनमेंसे कितने ही समाचारपत्रों के कार्यालयों की शाखाएं पेरिस आदि में हैं। इन में से कई पत्र ऐसे हैं जो पहले बहुत थोड़ी पूंजी से निकले थे। पर आज उन के दफ्तरों को देखकर स्वप्न में भी अनुमान नहीं होसकता कि इतनी थोड़ी पूंजी से भी इतने टाटबाट से अखवार निकल सकते हैं। इन अख़वारों के दफ्तरों में टेलीफ़ोन, टेलीग्राफ़ वग़ैरह का भी प्रबन्ध तुरन्त ही समाचारों के पहुंचाने का कर रक्खा है। सुना जाता कि इङ्गलेण्ड के निवासी अख़वारों के पढ़ने के लिये बड़े ही उत्सुक रहते हैं। जब कभी पार्लीमेंट आदि की वैठक तथा और कोई देशसे सम्बन्ध रखने वाला कार्य होता है, तब तो पढ़ने वालों की अख़वारों के दफ़्तरों के सामने भीड़ की भीड़ इकट्ठी हो जाती है। क्यों न हो जहां के निवासी "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी", इस मूल मन्त्र के तत्व को समझते हैं, वहां समाचारपत्रों का अधिक प्रचार होना स्वभाविक ही है।

भारतवर्ष में समाचार पत्र।

यह तो सब को एक मत से स्वीकार करना पड़ेगा कि भारतवर्ष में समाचार पत्रों का जन्म अङ्गरेजों के समय से ही हुआ है। इस विषय में अङ्गरेज़ हमारे गुरू हैं। क्योंकि हमने अङ्गरेजोंकी देखा देखी अंखवार निकालना सीखा है। सुना जाता है, सब से पहिले राजा राममोहनराय ने बंगाल में श्रीरामपुर के ईसाई पादरियों को उत्तर देने के लिये अखवार निकाला था। पीछे और भी अखवार निकले। यदि हम भूलते नहीं तो कह सकते हैं कि भारतवर्ष में इस समय सब से पुराना समाचार पत्र "इण्डियन डेली न्यूज" है, देशी

भाषाओं के समाचार पत्रों में हमारा अनुमान है कि "मुम्बई समाचार" सब से पुराना है। शोक है कि भारतवर्ष में अन्य देशों के समाचार पत्रों की दशा देखते हुए समाचार पत्रों का सन्तोषजनक प्रचार नहीं है। इसके अन्य कारणों में से एक कारण यह भी है कि इस देश में पत्र सम्पादकों को देश सम्बन्धी कार्यों की आलोचना करने के लिये जितनी स्वतन्त्रता चाहिये, उतनी नहीं है। इस देश में समाचार पत्रों को अपनी प्रारम्भिक अवस्था से ही स्वतन्त्रता नहीं रही है। यहां समाचार पत्रों की प्रारम्भिक अवस्था में ही एक यूरोपियन सम्पादक को जिसका नाम स्यात् मिस्टर डेन था, देश निर्वासन का दण्ड मिला था। फिर पीछे सन् १८३५ में चार्लस मेटकाफने समाचार पत्रों को स्वाधीनता प्रदान की थी। फिर कुछ दिनों पीछे सन् १८५७ में सिपाही विद्रोह हुआ, उस समय समाचार पत्रों की स्वाधीनता हरण होगई थी। फिर सन् १८७८ में लार्ड लिटन ने "अमृत बाज़ार पत्रिका" के कारण "वर्नेक्यूलरप्रेस एक्ट" बनाया था जिसके कारण बङ्गभाषा के "सहचर" "सोम प्रकाश" "सुलभ समाचार" जैसे प्रभावशाली पत्र बन्द होगये थे। जब स्वर्गीय बाबू लालमोहनघोष ने विलायत में जाकर विशेष आन्दोलन किया, तब कहीं लार्ड रिपन के समय में यह प्रेस एक्ट रद्द हुआ था। जून सन् १९०८ में एक एक्ट और भी बना। और सन् १९१० से जो नया प्रेस एक्ट बना है उस से तो छापे खानों की स्वतन्त्रता बिलकुल हरण होगई है। जिसके कारण समाचार पत्र और सामयिक पुस्तकों की उन्नति में भारी रुकावट है।

सम्पादन कार्य्य।

कवि और सम्पादक में विशेष अन्तर होता है। कवि की भांति सम्पादक को भी प्रतिभा की आवश्यकता अवश्य होती है क्योंकि बिना प्रतिभा के कोई कार्य नहीं होता है पर सम्पादक को केवल एक प्रतिभा के भरोसे ही, कवि की भाँति सफलता प्राप्त नहीं हो सकती है। सम्पादन कार्य करनेवाले को अगाध ज्ञान की आवश्यकता होती है। जिस भांति एक कवि की अश्लील कविता से, चित्रकार के अश्लील चित्र से, मनुष्यों की रुचि बिगड़ने की सम्भावना रहती है। उसी प्रकार एक सम्पादक के लेखों से बुरे प्रभाव की सम्भावना रहती है। जो सम्पादक बिना समझे बूझे देश की

स्थिति को बिना पहचाने अपनी सम्मति देता है, वह लाभ के बदले उलटी हानि पहुंचाता है। प्रभावशाली वक्ता की भांति सच्चे सम्पादक का भी मुख्य कर्तव्य है कि वह जिस विषय पर सम्मति दे, उस पर खूब सोच विचार कर अपना मत प्रकट करें। जिस विषय पर क़लम उठावें उस विषय की पूरी जानकारी हो। देश देशान्तरके इतिहासोंसे परिचय होना बहुत ज़रूरी है। भूगोल अर्थ शास्त्र समाजशास्त्र तथा साहित्यकी विज्ञता प्राप्त करना भी बहुत जरूरी है। समाचारपत्रोंके कार्यालयोंमें एक अच्छा पुस्तकालय होना चाहिये सम्पादक को क़ानूनका जानना भी आवश्यक है। यदि कोई सम्पादक चित्रकारीसे परिचित हो तो वह और भी अच्छा है। समाचार पत्र का सम्पादन करना खिलवाड़ नहीं है। बड़ी टेढ़ी खीर है, पराधीन देशों में तो समाचारपत्रों का सम्पादन करना तलवार की कठिनधार पर चलना है। ऊपर कहा जा चुका है कि अमेरिकादि देशों में समाचार पत्रों का विशेष प्रचार है। पर वहाँ स्कूल व कालेज से निकलतेही कोई सम्पादक नहीं बनजाता है। वहां पर पत्र सम्पादन कला को सिखलाने के लिये विशेष प्रबन्ध है। सम्पादन-कला को सिखलाने के लिये विद्यालय बने हुए हैं। फिर वर्षों किसी सम्पादकीय विभाग में संबाददाता तथा सहकारी सम्पादक रहकर प्रधान सम्पादक होते हैं। पर भारतवर्ष में विशेषता हिन्दी समाचार पत्र-सम्पादकों में यह बात नहीं है यहां अनेक व्यक्ति अनुभव प्राप्त किये बिना ही सम्पादक होजाते हैं। बिना अनुभव प्राप्त किये भलेंही सम्पादक होजाय, पर उनमें से कितने हैं जो अपनी स्वतन्त्र सम्मति किसी विषय पर देसकें, यों दूसरों के सिर पर त्यौहार मनाना जुदी बात है। देखिये अमेरिका में इस कला का कैसा महत्व समझा जाता है। वहां के एक विश्वविद्यालय में इस कला के सिखलाने के लिये जो शिक्षालय हैं उसका संक्षिप्त वृत्तान्त नीचे दिया जाता है:—

इलोनोयस-विश्वविद्यालय।

अमेरिका के इलोनोयस (Illionois) विश्वविद्यालय में पत्र सम्पादन कला का एक शिक्षालय है। इस कला के सीखनेवाले विद्यार्थी को चारवर्ष तक उक्त शिक्षालय में शिक्षा ग्रहण करनी पड़ती है। अङ्गरेज़ी साहित्य, विदेशी भाषाएं, सम्पत्ति शास्त्र, राज

सम्बन्धी विषय समाज शास्त्र और दर्शन शास्त्र का तो अध्ययन करनाही पड़ता है पर इसके अतिरिक्त सम्पादन कला का व्यवहारिक ज्ञान विशेष रूप से प्राप्त करना पड़ता है। सब से प्रथम रिपोर्टर अर्थात् संवाददाता का काम सीखना पड़ता है। विद्यार्थी को बतलाया जाता है किस प्रकार का समाचार, कहाँ से और किस भांति संग्रह करना चाहिये। जब देखा जाता है कि वह इस कार्य में निपुण होगया है तब उसे संवाददाता के बड़े बड़े काम, जैसे बड़ी सभाओं के कार्य की रिपोर्ट करना अथवा * किसी बड़े नेता किसी विद्वान तथा किसी शासक से मिल कर किसी विषय पर सम्मति लेना और उसको अपने पत्र में छापना आदि सौंप दिये जाते हैं। इन कार्य्यों को विद्यार्थी अपनी इच्छानुकूल स्वतन्त्रता पूर्वक करता है। जिससे उसकी मानसिक शक्तियों का विकास होता है और उसको समाचार संग्रह करने का चसका भी पड़ जाता है। नियत समय में जब एक विद्यार्थी इस क्रिया में निपुण होजाता है, तब उसके लिखे हुए समाचार पत्रादि पर विद्यार्थियों के सामने विचार किया जाता है। विद्यार्थियों में परस्पर उसके लिखे हुए समाचारादि पर वादविवाद होता है और जहां कहीं संशोधन की आवश्यकता होती है, वहां संशोधन कर दिया जाता है। अध्यापक प्रत्येक विद्यार्थी से उस विद्यार्थी के लिखे हुए समाचार तथा "इन्टरव्यू" के सम्बन्ध में पूछता है कि समाचार ठीक ठीक संग्रह किये गये हैं या नहीं "इन्टरव्यू" में प्रश्न करने तथा उत्तर लिखने का ढङ्ग ठीक है या नहीं। इस ढंग से प्रश्नोत्तर करने से अन्यान्य विद्यार्थियों को कार्य करने में सुविधा होती है।

इस भांति जब एक विद्यार्थी उपर्युक्त कार्य्यों को सीख जाता है, तब उसको गैली प्रेस के उठाये हुए प्रूफ पढ़ने को दिये जाते हैं। इससे उसको प्रूफ़ संशोधन ता आता ही है पर साथ ही उसको यह बात सिखलाई जाती है कि कहाँ पर कौनसा टाईप रहना चाहिये, कौन से स्थान पर किस टाईप की कमी है।

* इसको "इन्टरव्यू" कहते हैं पत्र सम्पादन कला का आवश्यक अङ्ग है।" रिव्यू आफ़ रिव्यूज़" के स्वर्गीय सम्पादक, मिस्टर डबल्यू० टी० स्टीड ने "इन्टरव्यू" की रीति प्रचलित की थी "इन्टरव्यू" से समाचारपत्रों के पाठकों को बड़ी सुविधा रहती है।

इन सब बातों के आ जाने पर उसको सम्पादकीय लेख और सम्पादन-कार्य्य सिखलाया जाता है। यह सिखाते समय इस पर विशेष ध्यान दिया जाता है कि किस विषय पर किस भांति की सम्मति देनी चाहिये, पढ़नेवालों के हृदय पर कैसे लेखों का प्रभाव हो सकता है। शिक्षक विद्यार्थी के लिखे हुए लेखके एक एक पैरे को अत्यन्त सावधानी से देखता है। जहां कहीं कोई प्रकार की त्रुटि होगई हो, उसको समझाता है। वहां पर पत्र-सम्पादन-कला के विद्यार्थियों को "समाचार पत्रों के इतिहास" का भी अध्ययन करना पड़ता है। पुराने समाचार पत्रों और मासिक पत्रिकाओं की फ़ाईल भी विद्यार्थियों को पढ़नी पड़ती हैं। जिससे पत्र सम्पादन कला के विद्यार्थियों को यह पता लग जाता है कि पहले समाचार पत्रों की क्या दशा थी? फिर उनमें क्या परिवर्तन होता रहा और इस समय उन की स्थिति क्या है?

पत्र-सम्पादन-कला के सम्बन्ध में सब से अन्तिम विषय-सम्पादकीय प्रबन्ध सिखलाया जाता है, जिसमें पत्र की नीति स्थिर रखना, लोकमत को जागृत करना, संबाददाताओं का तथा सम्पादकीय कार्य्यों का संगठन करना तथा पत्र सम्बन्धी सब प्रबन्ध करना सिखलाया जाता है। समझे पाठक! जहाँ इस भाँति सम्पादक होते हैं, वहाँ समाचार पत्रों का आदर होना स्वाभाविक ही है। शोक है कि हमारे देश में इस कला के सम्बन्ध में भिन्न अवस्था है। हिन्दी बिचारी तो दूर रही, अङ्गरेज़ी भाषा के सम्पादकों के लिये इस देश में कोई स्कूल नहीं है। हमारे देश में से अगणित नवयुवक प्रति वर्ष इङ्गलैण्ड और अमेरिका जाते हैं। क्या अच्छा हो कि वे पत्र सम्पादन कला को सीखकर यहां आवें और इस देश में समाचार पत्रों को उन्नतावस्था में लाने का उद्योग करें जिससे भारतवर्ष में भी लोकमत प्रबल हो। यह कार्य तब ही हो सकता है। जब अङ्गरेजी की उच्च शिक्षा प्राप्त नवयुवक इस ओर ध्यान दें।

किन्डरगार्टन बक्स।

जापानादि देशों में किन्डरगार्टन शिक्षा प्रणाली का विशेष प्रचार है। बालकों के लिये यह प्रणाली लाभदायक है क्योंकि इसके

सहारे बालक बहुतसी बातें खेल कूद में सीख लेते हैं। अनेक जानने योग्य बातें बालकों को खेल कूद में आजाती हैं। अब तक हिन्दी में इस विषय के सामान और पुस्तकें न थी। हर्ष है कि पं० देवीदत्त शर्मा ने इस अभाव को दूर करने की चेष्टा की है। उन्होंने हमारे पास अपना बनाया हुआ किन्डरगार्टन बक्स भेजा है। साथ में एक पुस्तक भी भेजी है। पुस्तक में बक्स में सामान से नागरी, उर्दू, अङ्गरेजी, गुजराती, सराफी और मरहटी के अक्षरों के बनाने की बिधि लिखी हुई है इसके अतिरिक्त बक्स के सहारे ड्राइङ्ग की भी कई शक्लें बनाई जासकती हैं। मूल्य एक रुपया—मिलने का पता—पं० देवीदत्त शर्मा—महरागांव डा० ख० भुवाली—जि० नैनीताल।

परीक्षा समिति का दूसरा अधिवेशन।

संयोजक की पूर्व सूचनानुसार समिति का दूसरा अधिवेशन भाद्र कृष्ण ७ गुरुवार सं० १९७१ को आठ बजे प्रारम्भ हुआ। जिस में निम्नलिखित सदस्य उपस्थित थे:—

बाबू पुरुषोत्तम दास टंडन	पं० रामजी लाल शर्मा
पं० जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल	बाबू रामदास गौड़

संयोजक ने गत अधिवेशन की कार्य्य वाही का सारांश पढ़ा जो सर्व सम्मति से स्वीकृत हुआ।

अलीगढ़ के पं० विनोदी लाल उपाध्याय और लखनऊ के बाबू पुत्तनलाल विद्यार्थी के पत्र अलीगढ़ और लखनऊ को भी परीक्षा स्थान बनाने के विषय में पढ़े गये। निश्चय हुआ कि वे स्थान भी परीक्षा स्थान बनाये जांय।

बाबू पुरुषोत्तम दास टंडन के प्रस्ताव पर निश्चित हुआ कि संयोजक सायंकाल में बैठने वाली स्थायी समिति में यह प्रस्ताव उपस्थित करे कि परीक्षाओं के सम्बन्ध में जो कुछ इस वर्ष व्यय होगा उसके लिये परीक्षा समिति को स्थायी समिति १००) देना स्वीकार करे।

संयोजक के प्रस्ताव पर निश्चित हुआ कि १९७२ की प्रथमा परीक्षा और मध्यमा परीक्षा ११ अगस्त सन् १९१५ से ७ बजे

सबेरे से प्रारम्भ हो और इन परीक्षाओं के लिये आवेदन पत्र भेजने की अन्तिम तिथि ३१ मई, १९१५ रक्खी जाय।

संयोजक के प्रस्ताव पर निश्चत हुआ कि उत्तर-पुस्तकें परीक्षार्थियों को बनी बनाई दी जांय, आकर डबाल क्रौन अठपेजी हो, आवरण पत्र श्वेत रंग का हो और आश्विन कृष्ण प्रतिपदा के बाद ही उचित संख्या में उनके बनवाने का प्रबन्ध किया जाय तथा प्राप्ति-स्वीकार पत्र और प्रमाण पत्र भी छपवाये जांय।

यह भी निश्चित हुआ कि १९७२ की परीक्षाओं का विवरण पत्र संयोजक शीघ्र ही छपवा कर प्रकाशित करें।

परीक्षाओं के सम्बन्ध में स्थायी रूप से यह नियम स्वीकृत हुए। * * * *

(जो नियम स्वीकृत हुये स्थानाभाव से उन्हें यहां नहीं दे सकते उपर्युक्त मन्तव्यानुसार विवरण पत्रिका में वह सब नियम उपनियम तथा और सब विवरण छप गये हैं जो महाशय चाहें -)॥ का टिकट (जिसमें डांक महसूल शामिल है) सम्मेलन कार्य्यालय में भेज कर मगवा लें। उसमें १९७२ और १९७३ परीक्षाओं का भी विवरण है।

इन नियमों की सूचना में इतना समय लग गया कि सांझ के पांच बज गये। अतः निश्चय हुआ कि समिति का कार्य्य शनिवार तक के लिये स्थगित रक्खा जाय, तथा समिति शनिवार को चार बजे से फिर बैठे और १९७१ की प्रथमा और मध्यमा और १९७३ की मध्यमा परीक्षाओं के लिये पत्र पाठ्यग्रंथ और विषयों का निश्चय करे।

शनिवार भाद्र कृष्ण ९ सं० १९७१ को

चार बजे पूर्व निश्चयानुसार फिर समिति की बैठक हुई पूर्वोक्त सदस्यों के अतिरिक्त आज के अधिवेशन में पं० इन्द्र नारायण जी द्विवेदी भी उपस्थित थे और उन्होंने पुस्तकों के चुनने में बड़ी सहायता दी।

निश्चय हुआ कि १९७२ की प्रथमा परीक्षा के लिये प्रश्न पत्र, विषय और पाठ्यग्रन्थ नीचे लिखे अनुसार हों।

सर्व सम्मति से निश्चय हुआ कि मध्यमा परीक्षा के लिये यह विषय रक्खे जांय।

प्रश्नपत्र	विषय।	पाठ्यग्रन्थ।
१—पठित और अपठित पद्य जिस में पिंगल और अलङ्कार विषयक प्रश्न होंगे।	पठित पद्यों के भावार्थादि के अतिरिक्त पठित छन्दों के नाम, लक्षण, यतिज्ञान, गणभेद, छन्दप्रभाकर (भानु) छन्दोऽर्णव (दास) या और किसी पिङ्गल-ग्रन्थ के अनुसार पठित पद्यों के भावार्थादि के अतिरिक्त उपमा, प्रतीक रूपक, उत्प्रेक्षा, अतिशयोक्ति, व्याज और साधारण अनुप्रास और उनके साधारण रूप का ज्ञान। इनमें किसी ग्रन्थ के अनुसार-भाषाभूषण, वा अलङ्कार प्रकाश (सेठ कन्हैयालाल पोद्दार रचित वेंकटेश्वर प्रेस) वा शिवराज भूषण वा पद्माभरण।	१-हमीरहठ (चन्द्रशेखर कवि) नागरी प्रचारिणी सभा काशी से प्राप्य। २-मुद्राराक्षस। (हरिश्चन्द्र) ३, ऊजड़ ग्राम (पं० श्रीधर पाठक, लूकरगञ्ज, प्रयाग से प्राप्य)। ४, रामचरित्रमानस (राम जन्म से अयोध्याकांड के अंत तक) २, शिवावावनी (भूषण) साहित्य परिषद् कलकत्ता से प्राप्य।

	अलङ्कार उपयुक्त ।	
२—पठित और अपठित गद्य जिसमें विशेषतः व्याकरण और अलंकार के भी प्रश्न होंगे ।	व्याकरण में भाषाभास्कर अथवा अन्य कोई व्याकरण ग्रन्थ ।	१—सौ अजान और एक सुजान । (पं० बालकृष्ण भट्ट लिखित और पं० महादेव भट्ट अहियापुर प्रयाग से प्राप्य) २—हिन्दी अखबार । बाबू बालमुकुन्द लिखित (गुप्त-निबन्धावली, भारत-मित्र कार्यालय कलकत्ता से प्राप्य ।)
३—लेख जो परीक्षार्थी को दिये हुए विषयों में किसी पर लिखना होगा ।	यदि परीक्षार्थी चाहे तो दिये हुए विषयों पर पद्य लेख भी लिख सकता है किन्तु गद्य लिखना आवश्यक होगा ।	

प्रश्न पत्र ।	विषय ।	पाठ्यग्रन्थ ।
४—भारत का इतिहास ।		पंडित हरिमङ्गल मिश्र एम० ए० लिखित (भारत का इतिहास, खड्गविलास प्रेस, बांकीपुर से प्राप्य ।
५—भूगोल साधारण एवं प्राकृतिक ।	(१) भौगोलिक शब्दों की परिभाषा, भारतवर्ष के मुख्य नगर, प्रदेश, पहाड़ नदी, झील, बन्दर, समुद्र, तीर्थ, आरोग्यस्थान और देशी रजवाड़ों की साधारण जानकारी तथा राजकीय व्यवस्था का साधारण ज्ञान । पृथ्वी के देशों मुख्य नगरों, पहाड़ों नदियों, झीलों, समुद्रों और द्वीपों का स्थूल विवरण और उनकी विशेषता । हिल, चक्रवर्ती लिखित भूगोल प्रथम और द्वितीय भाग अथवा अन्य किसी भूगोल ग्रन्थ से । [कमिश्नरियों के ज़िलों के रटने की आवश्यकता न होगी ।] (२) पृथ्वी का सूर्यमंडल से सम्बन्ध, ग्रहण देशान्तर रेखा, अक्षांश रेखा, ऋतुओं का परिवर्तन, मेघ, वर्षा, कुहरा, ओस और उपलवर्षा का विवरण और उनके कारण, समुद्र धाराएं, और ज्वारभाटा ।	

कारण, समुद्र धाराएं, और ज्वारभाटा।

	पं० लक्ष्मीशंकर रचित प्राकृतिक भूगोल चन्द्रिका वा हिल लिखित भूगोल तीसरा भाग वा अन्य किसी प्राकृतिक भूगोल के ग्रन्थ से।	
६—आरम्भिक विज्ञान और स्वास्थ्य-रक्षा।	आरम्भिक विज्ञान, विज्ञान प्रवेशिका से और स्वास्थ्यरक्षा (१) उस पुस्तक से जो वर्नाक्यूलर फाइनल में पढ़ाई जाती है वा (२) पं० जगन्नाथप्रसाद शुक्ल रचित 'भारत में मंदाग्नि' से (ग्रन्थकार दारागंज, प्रयाग से प्राप्य) अथवा (३) अन्य किसी ग्रन्थ से।	विज्ञान प्रवशिका (मंत्री, विज्ञान परिषत् प्रयाग से प्राप्य।)
७ गणित।	त्रैराशिक व्याज तक।	

(१) साहित्य, जिसमें ४ पत्र होंगे।
(२) इतिहास, जिसमें दो पत्र होंगे।
(३) गणित
(४) दर्शन
(५) विज्ञान
(६) धर्म शास्त्र
(७) अर्थ शास्त्र
(८) ज्योतिष
(९) संस्कृत से अनुवाद
(१०) इंग्लिश से अनुवाद

} जिनमें प्रत्येक में एक एक पत्र होगा।

और यह कि इन में साहित्य और इतिहास परीक्षार्थी को अवश्य ही लेना पड़ेगा और इन दोनों को साथ साथ शेष सात विषयों में से कोई तीन विषय अवश्य लेने होंगे।

सर्व सम्मति से यह निश्चय हुआ कि निम्न लिखित प्रश्न पत्र, विषय और पाठ्य ग्रंथ १९७२ और १९७३ की प्रथमा और मध्यमा परीक्षा के लिये नियत किये जायं—

प्रश्न पत्र	विषय	पाठ्य ग्रन्थ
१ पठित और अपठित पद्य	इस में पिंगल और अलंकार सम्पूर्ण समाविष्ट समझा जायगा जिनका अध्ययन इन ग्रन्थों से किया जायः— छन्द प्रभाकर, कण्ठाभरण (दूलह) काव्य निर्णय (दास) जगद्विनोद (पद्माकर) तथा चित्र चन्द्रिका (काशीराज)	१—बिहारी की सतसई । २—पदमावत जायसी कृत । ३—विनय पत्रिका । ४—जयद्रथवध (इण्डियन प्रेस प्रयाग) ५—शिवराज भूषण ।
२ पठित और अपठित गद्य	सम्पूर्ण अलंकार तथा व्याकरण ।	१—सौन्दर्यपासक (बाबू ब्रजनन्दन सहाय द्वारा रचित) २—गद्य काव्य मीमांसा (पं० अम्बिकादत्त व्यास रचित नागरी प्रचारिणी सभा काशी । ३—निबन्ध माला दर्श (पं० गङ्गा प्रसाद अग्निहोत्री बैकुण्ठ पुर पेंडरा रोड) ४—नाटक (बाबू हरिश्चन्द्र भारतजीवनप्रेस ५—मिश्र बन्धु विनोद (हिन्दी ग्रन्थ प्रसारक मण्डली खंडवा) ६—अंकों और नागराक्षरोंकी उत्पत्ति (द्वितीय सम्मेलनका) वार्षिक विवरण दूसराभाग

प्रश्न पत्र	विषय	पाठ्य ग्रन्थ
३ लेख	गद्य लेख किसी दिये हुए विषय पर (पद्य-रचना वैकल्पिक)।	
४ भाषा और लिपि का इतिहास	हिन्दी की लिपि और भाषा के इतिहास विषयक अन्य ग्रन्थ भी यथा सम्भव पढ़े जायं और पाठ्य ग्रन्थों के साथ उनकी आलोचना पर ध्यान रहे।	उपयुक्त दूसरे प्रश्न पत्रकी पुस्तकें संख्या (४) (५) और (६)
५ इतिहास पहिला पत्र	भारत का सम्पूर्ण इतिहास।	१—भारतवर्ष की सभ्यताका इतिहास (रमेश चन्द्रदत्त ना० प्र० सभा काशी) २—आर्य चरितामृत ३—भारत का अर्वाचीन इतिहास (हिन्दी ग्रन्थ प्रसारक मंडली खंडवा)
६ इतिहास दूसरा पत्र	इतिहास तत्व तथा यूरोप का इतिहास।	१—इतिहास (नागरी प्र० सभा काशी) २—यूरोपका संक्षिप्त इतिहास और वर्तमान परिस्थिति (सुदर्शन प्रेस प्रयाग)।

मान परिस्थिति (सुदर्शन प्रेस प्रयाग)।

गणित १ पत्र	सम्पूर्ण बीज गणित, रेखा गणित ४ अध्याय और त्रिकोणमिति।	(१) बीज गणित २ भाग (बापू देव शास्त्री कृत गणपतिदेव सिद्धेश्वरी गली काशी से प्राप्य)। (२) सरल त्रिकोणगित लक्ष्मीशङ्कर मिश्र चन्द्रप्रभा प्रेस काशी (३) रेखा गणित ४ अध्याय।
दर्शन १ पत्र	यूरोपीय दर्शनों का सार कुछ वेदान्त और तर्क शास्त्र।	(१) यूरोपीय दर्शन ना० प्र० स० काशी (२) भगवद् गीता। (३) तर्क शास्त्र (ना० प्र० स० आरा का अनुवाद) (४) श्वेताश्वेतरोपानिषत् (भीमसेन शर्मा इटावा)।
विज्ञान १ पत्र	भौतिक, रसायन और जीव विज्ञान का साधारण ज्ञान।	(१) पदार्थ विज्ञान विटप (च० प्र० प्रेस काशी)। (२) जीव विज्ञान विटप। (३) वनस्पति शास्त्र (महेशचरण सिंह गुरुकुल काङ्गड़ी)

प्रश्न पत्र	पाठ्य ग्रन्थ	विषय
धर्मशास्त्र १ पत्र	×	(१) मनुस्मृति का अनुवाद (२) कर्तव्याकर्तव्यशास्त्र (ना० प्र० स० काशी।
अर्थ शास्त्र १ पत्र		सम्पत्ति शास्त्र (इण्डियन प्रेस प्रयाग)।
ज्योतिष १ पत्र	खगोल सम्पूर्ण।	(१) सूर्य्य सिद्धान्त का अनुवाद। श्रीवेङ्कटेश्वर प्रेस बम्बई। (२) गोल प्रकाश पं० वंशीधर पुस्तकालय आगरा।
संस्कृत से अनुवाद १ पत्र		
अङ्गरेज़ी से अनुवाद १ पत्र		

२१०—यवन राज वंशावली	मुन्शी देवी प्रसाद	,,	=)
२११—दृष्टान्त समुच्चय	पं० ज्वालादत्त जी जोशी	,,	।)
२१२—कालिदास की निरङ्कुशता	पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी	,,	।।
२१३—कर्त्तव्य शिक्षा	पं० ऋषीश्वर नाथ भट्ट	,,	१)
२२१—दुर्गासप्तशती		,,	=।।)
२१५—गुप्तचर	बाबू गोपालराम म्मूर	भारत मित्र प्रेस	।।।)
२१६—सतीसुखदई	पं० अमृतलाल चक्रवर्ती	भारत मित्र प्रेस	≡)
२१७—विभक्ति विचार	पं० गोविन्द नारायण मिश्र	गोवर्द्धन प्रेस	।)
२१८—भारतवर्ष का आर्य इतिहास	बाबू ब्रजबासीलाल शर्म्मा		।)
२१९—भाग्य का फेर	बाबू पुरुषोत्तमदास	यूनियनप्रेस	।)
२२०—प्राणघातक माला	पं० कृष्णाकान्त मालवीय	अभ्युदय प्रेस	।।।)
२२१—जैन धर्म का महत्व	श्रीसूरजमल जी	जैनमित्र कार्यालय	।।।)
२२२—अमरीका दिग्दर्शन	श्रीयुक्त सत्यदेव	देवनागरी प्रेस कलकत्ता	।।।)
२२३—दुखिया	श्रीराजेन्द्रनाथ बन्ध्योपाध्याय	अभ्युदय प्रेस, प्रयाग	।=)
२२४—धर्म समीक्षा	श्रीहरिदास खंडेलवाल	,,	=)
२२५—ध्रुवनाटक		,,	≡)
२२६—अमर सन्त का चेला	पं० शारदा चरण पाण्डेय	,,	॥)
२२७—फूलों का हार	पं० कृष्णाकान्त मालवीय	,,	।-)

"सम्मेलन पत्रिका" के नियम।

१—"सम्मेलन पत्रिका" हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन कार्य्यालय प्रयाग, से प्रतिमास प्रकाशित होगी।

२—इसका वार्षिक मूल्य १) इसलिये रक्खा गया है कि सर्व-साधारण इसके ग्राहक होसकें।

३—इस समय इसमें प्रतिमास कुल २४ पृष्ठ ही रहा करेंगे। परन्तु आवश्यकता होने पर कभी कभी पृष्ठ संख्या बढ़ा भी दी जाया करेगी। आगे चलकर यदि इसकी सेवा साहित्यसेवियों को रुचिकर हो, और इसके ग्राहकों की यथोचित संख्या होजाय तो यही पत्रिका अधिकतर पृष्ठ-संख्याओं में और अधिकतर उन्नत दशा में प्रकाशित की जायगी।

४—इसके प्रबन्ध-विभाग के पत्र—ग्राहक बनने के लिये आवेदन, विज्ञापन-सम्बन्धी पत्र, मनीआर्डर इत्यादि—मन्त्री, साहित्य-सम्मेलन कार्य्यालय, जानसेनगंज प्रयाग, के नाम भेजे जाने चाहियें।

५—सम्पादक के नाम की चिट्ठियां, बदले के समाचार-पत्रादि समालोचना की पुस्तकें; पत्रिका में प्रकाशित होने के लिये लेखादि भी ऊपर ही के पते से भेजे जाने चाहियें।

विज्ञापनदाताओं के लिये नियम

१—"सम्मेलनपत्रिका" में अश्लील विज्ञापनों को स्थान नहीं मिलेगा।

२—विज्ञापन साधारणतः पूरे और आधे पृष्ठ से कम स्था[न] के लिये स्वीकृत न होंगे।

१—पृष्ठ का मासिक मूल्य ... ४॥) [हो]

२—आधे पृष्ठ का ... २॥) हो[गा]

३—जो लोग १२ संख्याओं में विज्ञापन छपवाने का मूल्य [एक] साथ भेज देंगे, उनका विज्ञापन एक संख्या में बिना मूल्य [छाप] दिया जायगा, अर्थात् १२ की जगह १३ बार उनका विज्ञाप[न] छापा जायगा।

४—किसी दशा में पेशगी मूल्य बिना मिले कोई भी विज्ञा[पन] नहीं छापा जायगा।

५—विक्रयार्थ पुस्तकों के विज्ञापनों पर ऊपर दिये हुए मू[ल्य] से कम मूल्य न लिया जायगा।

१ पृष्ठ का मूल्य १ मास के लिये ३॥) और

आधे " " २) होगा

६—अदालतों में लेखकों की नौकरी, अध्यापक-अध्यापिका[ओं] की नौकरी, इत्यादि हिन्दी-प्रचारार्थ नौकरियों के विज्ञापन एक [बार] बिना मूल्य छाप दिये जायंगे। दूसरी बार और अधिकवार [के] लिये ऐसे विज्ञापनों का मूल्य केवल १) प्रतिमास होगा। विज्ञा[पन] ८ पंक्तियों से अधिक न हो।

मन्त्री, हि० सा० स० कार्य्यालय, प्रयाग

पं० ओंकारनाथ वाजपेयी के प्रबन्ध से ओंकार प्रेस प्रयाग में छपा

सम्मेलन पत्रिका

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की

मुखपत्रिका।

भाग २ } कार्तिक संवत् १९७१ { अङ्क २

विषय सूची।

वार्षिक मूल्य १)] [एक संख्या ≡)

पं० ओंकारनाथ वाजपेयी के प्रबन्ध से ओंकार प्रेस प्रयाग में छपा

सम्मेलन के उद्देश्य

(१) हिन्दी साहित्य के अङ्गों की उन्नति का प्रयत्न करना।

(२) देवनागरी लिपि का देश भर में प्रचार करना और देश व्यापी व्यवहारों और कार्यों के सुलभ करने के लिये हिन्दी भाषा को राष्ट्र-भाषा बनाने का प्रयत्न करना।

(३) हिन्दी को सुगम, मनोरम और लाभदायक बनाने के लिये समय समय पर उसकी शैली के संशोधन और उसकी त्रुटियों और अभावों के दूर करने का प्रयत्न करना।

(४) सरकार, देशी राज्यों, पाठशालाओं, कालेजों, विश्व-विद्यालयों और अन्य संस्थाओं, समाजों, जनसमूहों तथा व्यापार, ज़मींदार और अदालतों के कार्यों में देवनागरी लिपि और हिन्दी भाषा के प्रचार का उद्योग करते रहना।

(५) हिन्दी के ग्रन्थकारों, लेखकों, पत्रसंपादकों, प्रचारकों और सहायकों को समय समय पर उत्साहित करने के लिये पारि-तोषिक, प्रशंसापत्र, पदक, उपाधि आदि से सम्मानित करना।

(६) उच्च-शिक्षा प्राप्त युवकों में हिन्दी का अनुराग उत्पन्न करने और बढ़ाने के लिये प्रयत्न करना।

(७) जहां आवश्यकता समझी जाय वहां पाठशाला, समिति तथा पुस्तकालय स्थापित करने और कराने का उद्योग करना तथा इस प्रकार की वर्त्तमान संस्थाओं की सहायता करना।

(८) हिन्दी-साहित्य के विद्वानों को तैयार करने के लिए हिन्दी की उच्च परीक्षाएं लेने का प्रबन्ध करना।

(९) हिन्दी भाषा के साहित्य की वृद्धि के लिये उपयोगी पुस्तकें तैयार करना।

(१०) हिन्दी-साहित्य सम्मेलन के उद्देश्यों की सिद्धि और सफलता के लिए अन्य जो उपाय आवश्यक और उपयुक्त समझे जांय उन्हें काम में लाना।

सम्मेलन-पत्रिका का उद्देश्य

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के उद्देश्यों की पूर्ति में सहायता करना, और साहित्य-प्रेमियों से इसीके लिये उपदेश लेना।

सम्मेलनपत्रिका

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की कार्यकारिणी समिति
की ओर से प्रतिमास प्रकाशित।

भाग २ | कार्तिक संवत् १९७१ | अङ्क २

हिन्दी संसार।

हिन्दी के दैनिक पत्र

अब तक हिन्दी में केवल एक भारतमित्र ही दैनिक पत्र था। पर यूरोप में महाभारत छिड़ जाने से कई पत्र निकले हैं। कलकत्ते से जिस "कलकत्ता समाचार" के दैनिक निकले की धूम मचरही थी, वह पिछले दो महीने से प्रकाशित होने लगा है और अच्छा सम्पादित होता है। "कलकत्ता समाचार" युद्ध का दैनिक नहीं है, यह स्थायी रूप से दैनिक निकला है और इसके सञ्चालक युद्ध से पहलेही इसे दैनिक निकालने का विचार कर रहे थे। "कलकत्ता समाचार" के अतिरिक्त सुनने में आता है कि युद्ध के कारण बम्बई का श्रीवेङ्कटेश्वर समाचार और हमारा पड़ौसी "अभ्युदय" भी दैनिक हो गया है। इन दोनों पत्रों का भी अच्छा सम्पादन होता है। युद्ध के कारण बाँकीपुर का हिन्दी सहयोगी बिहारी भी दैनिक होगया है। 'बिहारी' भी होनहार दिखलाई पड़ता है। ज्ञात होता है कि युद्ध के कारण, काग़ज़ के अभाव ने सब सहयोगियों से अधिक बिहारी को कष्ट दे रखा है। इसलिये कभी इसका आकार बड़ा और कभी छोटा होता है। हमारी हार्दिक इच्छा यही है कि ये सब दैनिक पत्र चिरस्थायी होकर हिन्दी की शोभा बढ़ावें।

—o—

जयपुरमें उर्दू

हिन्दू राज्यों में हिन्दी का प्रचार न होना बड़ाही दुःखदायीहै। हम पिछली बार पाठकों को सुना चुके हैं कि राजपूताने के प्रसिद्ध देशी राज्य भरतपुर की अदालत में उर्दू का प्रचार है हिन्दी के लिये वहां की अदालतों के द्वार बन्द हैं। इसी प्रकार जयपुर राज्य की अदालतों में भी हिन्दी को दूध में मक्खनी के समान स्थान नहीं दिया जाता है। जिस जयपुर में आज कल के समय में भी संस्कृत के एक से एक विद्वान हैं वहां संस्कृत की बेटी हिन्दी का निरादर होना अत्यन्त दुःखदायी है। क्या जयपुर नरेश अपना यह कर्तव्य नहीं समझते हैं कि वे अपने राज्य में हिन्दी को जो उनकी प्रजा की भाषा है स्थान देने की कृपा करें। मर्दुमशुमारी की रिपोर्ट से तो यही पता लगता है और जिन लोगों ने राजपूताना में भ्रमण किया है, उनको भी प्रत्यक्ष यही बात मालूम हुई है कि राजस्थान की भाषा हिन्दी का ही एक रूप है, उर्दू जानने वालों की वहाँ पर बहुत कम संख्या है। फिर न मालूम जयपुर, भरतपुर आदि राज्यों में उर्दू को प्रजा की इच्छा के विरुद्ध क्यों स्थान दिया जा रहा है?

—o—

राजपूतानेकी प्रजा इतनी अशिक्षिता क्यों है?

राजपूताना में उर्दू हिन्दी की चर्चा करते समय यह प्रश्न स्वभावतः ही उठता है कि राजपूताना की प्रजा इतनी अशिक्षिता क्यों है? राजपूताना में विद्या का विशेष प्रचार क्यों नहीं है? सच पूछिये तो इस प्रश्न का उत्तर केवल हिन्दी का प्रचार न होना ही है। उर्दू फ़ारसी केवल वही मनुष्य पढ़ते हैं जिनकी इच्छा केवल अदालतों में नौकरी करने की होती है। यदि राजपूताना के समस्त देशी नरेश अपने राज्यों में हिन्दी की प्रारम्भिक और अनिवार्य शिक्षा प्रचलित कर दें तो थोड़े ही दिनों में वहां विद्या की ख़ूब चर्चा होने लग जाय।

—o—

आरा नागरीप्रचारिणीसभा का उद्योग।

हमें आरा की नागरी प्रचारिणी सभा की मुख्य पत्रिका "साहित्य पत्रिका" से यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि सभा ने

बिहार के श्रीमान् छोटे लाट की सेवा में एक प्रार्थना पत्र भेजा है कि कैथी लिपि के स्थान पर वहां के सब कागज़ पत्र नागरी लिपि में छापे जांय। क्योंकि नागरी में वे शुद्ध छपेंगे और उसको पढ़ने में लोगों को विशेष सुविधा भी होगी"। आरा की नागरी प्रचारणी सभा का यह उद्योग प्रशंसनीय है। हमें आशा है कि सभा की यह प्रार्थना अवश्य ही स्वीकृत होगी। यदि स्वीकृत न हो, तो भी सभा को निरन्तर इस विषय में उद्योग करना चाहिये।

राजधानी में नवीन सहयोगी।

बहुत दिन हुए, जब दिल्ली वर्त्तमान समय में भारतवर्ष की राजधानी नहीं हुई थी। तब सन् १८७४ में हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक, स्वर्गीय लाला श्रीनिवासदासजी ने वहां से "सदादर्श" नामक साप्ताहिक समाचार पत्र निकाला था। जो केवल दो वर्ष चला था, पीछे भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के "कविवचनसुधा" में सम्मिलित करदिया गया था। तब से फिर दिल्ली में राजधानी होने के समय तक हिन्दी का कोई अख़बार नहीं निकला। क्योंकि वहाँ पर उर्दू का प्रचण्ड राज्य है। वर्त्तमान समय में, राजधानी होने से पूर्व दिल्ली में उर्दू के कितने ही नामी लेखक और कवि होगये हैं और इस समय भी हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि वहां पर उर्दू का खूब प्रचार है। वर्त्तमान समय में दिल्ली राजधानी होते ही वहां उर्दू का और भी प्रचार बढ़ा है। ऐसे कठिन समय में गुरुकुल काँगड़ी से "सद्धर्मप्रचारक" ने वहाँ पहुंचकर मातृभाषा हिन्दी की लाज रखली थी। हर्ष है कि अब वहां से दो और हिन्दी सहयोगी "हिन्दी समाचार" और "विजय" प्रकाशित होने लगे हैं। "हिन्दी समाचार" "आर्ट प्रिन्टिङ्ग प्रेस" से प्रकाशित हुआ है। इसके लेख, छपाई, कागज़ सब सुन्दर हैं। दूसरा साप्ताहिक पत्र "विजय" नामका श्रीयुत पं० हरिचन्द्रजी के प्रबन्ध से से प्रकाशित हुआ है। इसमें चटकीली सम्पादकीय टिप्पणियां; मनोरञ्जक लेख आदि हैं। इसके पहिले अंक से ही अनुमान होता है कि यह पत्र होनहार होगा। वार्षिक मूल्य दोनों सहयोगियों का दो दो रुपया है।

—:o:—

मेरठ में हिन्दी प्रचारिणी सभा ।

मेरठ में हिन्दी प्रचारिणी सभा की स्थापना का शुभ समाचार सुन कर हमें वहां के प्रसिद्ध नागरी भक्त, स्वर्गीय पं० गौरीदत्त जी का स्मरण हो आया। जिन दिनों सम्वत १९ ३९ में संयुक्त प्रान्त की अदालतों में नागरी प्रचार कराने का आन्दोलन हो रहा था। उन दिनों मेरठ में भी हिन्दी की उन्नति के लिये विशेष चेष्टा हो रही थी। वहां के प्रसिद्ध नागरी भक्त, स्वर्गीय पं० गौरीदत्त जी के प्रयत्न से देव नागरी प्रचारिणी सभा स्थापित हुई थी। जो निरन्तर बीस वर्ष तक कितने ही उपयोगी कार्य्य करके, पं० गौरीदत्त जी मृत्यु के साथ ही लोप होगई। अब भी उक्त सभा द्वारा स्थापित "देवनागरी हाई स्कूल" तथा "गौरी पाठशाला" मेरठ की शोभा बढ़ा रहे हैं। हर्ष है कि अब वहां पुनः हिन्दी प्रचारिणी सभा स्थापित हुई है। इस सभा के कितने हो कार्य्य कर्त्ता अङ्गरेज़ी और संस्कृत के अच्छे अच्छे विद्वान् हैं। इस लिये आशा होती है कि यह सभा अपने ज़िले में और अपने समीप के नगरों में भी हिन्दी प्रचार का कार्य कर सकेगी।

"प्रताप" का राष्ट्रीय अंक ।

इस बार विजयादशमी पर सहयोगी "प्रताप"" ने अपना राष्ट्रीय अंक प्रकाशित करके हिन्दी संसार में अच्छा कार्य किया है। इसके लिये "प्रताप" सम्पादक को बधाई है। वास्तव में "प्रताप" का राष्ट्रीय अंक पढ़ने योग्य हुआ है। अनेक लेखकों द्वारा अनेक विषयों पर उत्तम उत्तम लेखों का संग्रह किया गया है। इस अंक का मूल्य भी केवल चार आना है। प्रताप के राष्ट्रीय अंक में जैसे सुन्दर लेख हैं, वैसा ही भावपूर्ण और चित्ताकर्षक टाईटिल पेज है। टाईटिल पेज पर महात्मा गांधी का चित्र है। सारांश यह है कि "प्रताप" का राष्ट्रीय अंक सर्वाङ्ग सुन्दर है।

"ब्रह्मचारी" और "बालमनोरञ्जन"

हम अपने दोनों नवीन सहयोगी 'ब्रह्मचारी' और "बाल

मनोरञ्जन" का सहर्ष स्वागत करते हैं। "ब्रह्मचारी" ऋषिकुल हरिद्वार का मुख पत्र है। इसमें सनातन धर्म सम्बन्धी अच्छे लेख हैं। वार्षिक मूल्य १॥) है। दूसरा मासिक पत्र "बाल मनोरञ्जन" है। इसमें विविध विषयों पर छोटे मोटे सब मिला कर १६ लेख हैं। श्रीयुक्त लाला भगवान दीन की कविता "बाल-कर्त्तव्य" और श्रीयुक्त पं० मन्नन द्विवेदी गजपुरी बी० ए० की कविता 'बाल-मनोरञ्जन" अच्छी हुई हैं। वार्षिक मूल्य डेढ़ रुपया है। मैनेजर-"बाल-मनोरञ्जन आगर (मालवा) स्टेट-ग्वालियर।

सम्मेलन के सभापति।

'गुणाधिके पुंसि जनोऽनु रज्यते,
जनानुराग प्रभवा हि सम्पदा"

महाकवि भारविका ऊपर जो श्लोक उद्धत किया गया है वह इस वर्ष लखनऊ में सम्मेलन का जो अधिवेशन होगा, उसके निर्वाचित सभापति पं० श्रीधर पाठक जी के सम्बन्ध में पूरा चरितार्थ होता है। सब हिन्दी प्रेमियों ने, साहित्यसेवियों ने और समाचारपत्रों ने पाठकजी को एक स्वर से इस पद के लिये स्वीकार किया है। समस्त प्रतिष्ठित सहयोगियों ने इस बार सभापति के निर्वाचन पर सम्मेलन की स्वागत कारिणी सभा को बधाई दी है। हम अपने प्रिय सहयोगियों के इस कथन का हृदय से अनुमोदन करते हुए, इस निर्वाचन पर स्वागतकारिणी सभी तथा समस्त हिन्दी प्रेमियों को बधाई देते हैं। सभापति के निर्वाचन पर इसबार जिस भाँति हिन्दी संसार सन्तुष्ट हुआ है, उस से तो यही आशा होती है कि अबकी बार सम्मेलन में के कार्य अन्य वर्षों की अपेक्षा और भी अधिक सफलता होगी।

पाठक जी अनुभवी विद्वान है। इस समय आप की अवस्था ५५ वर्ष की है। माघ कृष्ण चतुर्दशी संवत् १६१६ तदनुसार ता० ११ जनवरी सन् १८६० को आप का जन्म चौधरी ग्राम में जो आगरे ज़िले के फ़िरोज़ावाद परगने में है, हुआ था। १०, ११ वर्ष की अवस्था तक आप संस्कृत पढ़ते रहे। परन्तु कई कारणों से पढ़ना लिखना छूट गया। पढ़ना छोड़ते ही इनकी रुचि चित्र खींचने और मिट्टी की सुन्दर मूर्तियां बनाने की होगई

थी। परन्तु चौदह वर्ष की अवस्था में फिर पढ़ना आरम्भ किया। फ़ारसी अङ्गरेज़ी आदि भाषाएं पढ़ीं और सन् १८८० में कलकत्ता यूनिवर्सिटी से इन्ट्रेन्सकी परीक्षा उत्तीर्णकी क्योंकि उस समय तक इलाहाबाद यूनिवर्सिटी बनी नहीं थी।

इन्ट्रेंस परीक्षा उत्तीर्ण करने के कुछ दिनों पश्चात् आप कलकत्ते में से सेंसस कमिश्नर के स्थायी दफ्तर में ६०) मासिक पर नियुक्त हुए। पीछे फिर प्रयाग में छोटे लाट साहब के दफ़्तर में ३०) रुपये मासिक पर नौकर हुए। यहां रह कर आप अपनी विद्वत्ता और कार्य कुशलता से ३००) पर छोटे साहब के दफ़्तर में सुपरिण्टेण्डेण्ट होगये। और अब पहिली अक्टूबर से सरकारी पद से पेन्शन लेली है।

पाठकजीने न केवल सरकारी कार्य्योंमेंही अपनी योग्यताका परिचय दिया है किन्तु समय २ पर साहित्य संसारमें अच्छी प्रतिभा का परिचयदिया है। पाठकजी केवल तुकवन्दी कविता करने वाले नहीं हैं।वे हिन्दीके मार्मिक लेखक और सहृदय कवि हैं। तीस, इकतीस वर्ष से हिन्दी संसार में परिचित है। सन् १८८३ में जब वृन्दावन से श्रीयुक्त श्रीराधाचरण गोस्वामीजी ने "भारतेन्दु" नामक मासिक पत्र निकाला था तब आप की कविताएं उसमें छपती थीं हिन्दी प्रदीप में भी समय समय पर बहुत सी कविताएं प्रकाशित हुई थी खड़ी बोली की कविता के तो आप आचार्य कहे जाते हैं। पाठक जी का आदर हिन्दी के नये पुराने सभी साहित्य सेवियों के हृदय में समान है। हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक द्वितीय साहित्य सम्मेलन की स्वागत कारिणी सभा के सभापति स्वर्गीय पं० बालकृष्ण भट्टजी ने अपना वक्तृता में पाठक जी के सम्बन्ध में कहा था—"हिन्दी साहित्य के रसिक जब तक हिन्दी के उत्थान का इतिहास पढ़ेंगे, पण्डित बदरीनारायण चौधरी पं० राधाचरण गोस्वामी और पं० श्रीधर पाठकका नाम सदा स्मरणीय रहेगा*** पण्डित श्रीधर पाठक की प्रखर लेखनी की साखी हिन्दी प्रदीप के कई एक पिछले अंक भर रहे हैं। खड़ी बोली की रूखी कविता में रस और मिठास की खोज की जांय तो पाठक जी ही ऐसे सुलेख-

कों की लेखनी में पाई जाती है। इनका "एकान्त वासी योगी" और 'ऊजड़ गांव' ऐसी कई एक पद्य रचना हिन्दी साहित्य में चिरस्थायी रहेंगी"। बनारससे जो काशी पत्रिका निकली थी, उस में भी सन् १८८७ में आपका 'ऊजड़ ग्राम' छपता रहा था। सुना जाता है कि आपका एक लेख तिलस्माती सुंदरी भी छपता था। पर वह अपूर्ण रहा। जिस समय खड़ी बोली का आन्दोलन मुज़फ़्फ़र पुर के स्वर्गीय बाबू अयोध्या प्रसाद खत्री ने उठाया था उस समय आप के भी खड़ी बोली की कविता के पक्ष में कई लेख समाचार पत्रों में छपे थे। व ऐसे अनुभवी मार्मिक साहित्य सेवी की अध्यक्षता में सम्मेलन को सफलता अवश्यही प्राप्त होने की आशा होती है।

नागरी प्रचारिणी सभाओं के कर्त्तव्य।

(लेखक—पं० नन्दकुमार देवशर्मा)

भगवान की कृपा से इस समय चारों ओर हिन्दी की अच्छी चर्चा हो रही है। हर्ष है कि अब अनेक स्थानोंमें नागरी प्रचारिणी सभाएं स्थापित होगई हैं और होरही हैं। हिन्दी-भाषा-भाषी जो कुछ हिन्दी के लिये कर रहे हैं वह तो उनका कर्त्तव्य ही है। इस विषय में विशेष कहने की आवश्यकता ही क्या है? पर जिन भारत सन्तानों की मातृभाषा हिन्दी नहीं है उनमें से भी बहुत से व्यक्ति हिन्दी को अपना रहे हैं, नागरी प्रचार करने के लिये प्रयत्न कर रहे हैं और देवनागराक्षरों को अपनी लिपि बनाने को तैयार हैं। इस भांति आजकल हिन्दी की चर्चा होना केवल सन्तोषजनक ही नहीं किन्तु भविष्य में आशा जनक है। एक समय वह भी था जब लोग हिन्दी को हिन्दी भाषा कहने में संकुचित होते थे। हिन्दी गंवारों की भाषा समझी जाती थी पर समय ने पलटा खाया है और आज चारों ओर हिन्दी के विषय में आन्दोलन होरहा है। एक समय वह भी था कि उदार हृदय मैकॉले Macaulay तक को देशी भाषाएं शिक्षा का माध्यम बनाने के लिये अपूर्ण जंचती थी। पर आज बहुत सी देशी भाषाओं की अच्छी उन्नति है। यह सच है कि हमारी हिन्दी में आधुनिक समय में मराठी बङ्गाली आदि देशी भाषाओं के समान साहित्य सम्बन्धी ग्रन्थ नहीं बने हैं, परन्तु इस

में सन्देह नहीं कि अब हिन्दी भाषा की उन्नति के लिये विशेष प्रयत्न हो रहा है और नागरी प्रचारिणी सभाएं स्थापित हो रही हैं। परन्तु उनमें से बहुत सो अधिक कार्य नहीं कररही हैं। इस लिये आज हम विचारना चाहते हैं कि नागरीप्रचारिणी सभाओं का कर्त्तव्य क्या है?

सम्मेलन और नागरी प्रचारिणी सभाएं।

नागरी प्रचारिणी सभाओं के कर्त्तव्य लिखने के पूर्व हमें यहां एक बात लिख देनी चाहिये कि हिन्दी साहित्य सम्मेलन और नागरी प्रचारिणी सभाओं का परस्पर सम्बन्ध क्या है? यदि विचार, पूर्वक देखा जाय तो सम्मेलन और नागरी प्रचारिणी सभाओं का सम्बन्ध घनिष्ट है। दोनों एक दूसरे की सहायता पर निर्भर हैं। प्रायः नागरी प्रचारिणी सभाओं के कार्य की सीमा एक स्थान विशेष और ज़िले तकही रहती है। सम्मेलन अपनी अन्तर्गत सभाओं की सहायता से दूर दूर तक अपने कर्त्तव्य पालन करने में समर्थ है। सम्मेलन और नागरी प्रचारिणी सभा दोनों का धुआं और अग्नि का सा सम्बन्ध है। धूप और छाया की भांति दोनों का साथ है। यह निश्चित सिद्धान्त है कि संसारमें जो कार्य संघ शक्ति से होता वह अकेले कदापि नहीं होसकता है। हिन्दुओं के गिरने का कारण संघशक्ति का अभाव है। सम्मेलन का प्रथम कार्य्य हिन्दी भाषा भाषियों और हिन्दी प्रेमियों में संघशक्ति का उत्पन्न करना है। कहावत है कि "अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता" है। इस कहावत के अनुसार ही केवल एक सभा अपने दस पांच सभासदों की सहायता से विशाल भारतवर्ष में कन्याकुमारी से लेकर हिमालय तक, और पेशावर से कलकत्ते तक नागरी के प्रचार करने में समर्थ नहीं होसकती है। इसके लिये संघशक्ति की आवश्यकता है। जिनकी मातृभाषा हिन्दी है, जो हिन्दी के प्रेमी हैं जो देश भर में एक लिपि और एक भाषा का प्रचार करना चाहते हैं। उनको चाहिंये मातृ भाषा का सम्मेलन रूपी जो झण्डा है, उस के नीचे आवें। इस दृष्टि से देखा जाय, तो भारतवर्ष की समस्त नागरी प्रचारिणी सभाओं को सम्मेलन से सम्बन्ध करना चाहिये, जिससे समय समय पर सम्मेलन उनकी सहायता करे और वे

सम्मेलन की सहायता करें। जिससे हिन्दी भाषा भाषियों में संघ-शक्ति का प्रादुर्भाव हो।

अदालतों में नागरी की आवश्यकता।

संयुक्त प्रान्त में जो नागरीप्रचारणी सभाएं स्थापित होती हैं अथवा जहां कहीं नागरी प्रचारिणी सभाएं हैं उन सभाओं का सब से पहिले कर्त्तव्य अपने यहां की अदालतों में नागरी प्रचार कराना है। इतने दिनों से संयुक्त प्रान्त की अदालतों में नागरी के कागज़ दाखिल करने की आज्ञा होजाने पर भी नागरी के यथेष्ट कागज़ पत्र नहीं पहुंचते हैं। बहुतसे स्थान तो ऐसे हैं, जहां जब से नागरी के प्रचार की आज्ञा हुई है, तब से एक भी प्रार्थनापत्र नागरी में नहीं पहुंचा है। इसका कारण हिन्दू वकीलों की उदासीनता है। प्रायः बहुत से वकील ऐसे हैं जो प्रत्यक्ष में हिन्दी हितैषी बनते हैं पर अपना अदालती कार्य उर्दू में ही करते हैं। इसलिये संयुक्तप्रान्त के जिन स्थानों में नागरी प्रचारिणी सभाएं हैं, उनको चाहिये कि वे अपने यहाँ की अदालतों में नागरीप्रचार कराने की चेष्टा करें। उन्हें इस कार्य में सम्मेलन से भी सहायता मिलेगी। कतिपय नागरी प्रचारिणी सभाओं ने इस कार्य्य के करने का बीड़ा उठा भी रक्खा है और सम्मेलन भी यथाशक्ति सहायता देता है? परन्तु अभी तक यह कार्य सन्तोषजनक नहीं है।

इस कार्य्य को करने के लिये प्रत्येक नागरी प्रचारिणी सभा को उचित है कि वह अपने यहां वैतनिक लेखक (मुहर्रिर) रक्खें इस वैतनिक लेखक का कार्य यह हो कि वह हिन्दू वकीलों की सहायतासे सर्व साधारण के प्रार्थनापत्र नागरी में लिख कर अदालतों में दिया करे। वैतनिक लेखकों के अतिरिक्त नागरी प्रचारिणी सभाओं के सभासदों को चाहिये कि वे भी स्वयं अदालतों में हिन्दी में प्रार्थना पत्र पहुंचानेका उद्योग करें केवल वैतनिक लेखकों के भरोसे परही न रहकर, प्रति सप्ताह में बारी बारी से कुछ घण्टे निकाल कर स्वयं अपने नगर व ग्राम के रईसों और ज़मींदारों से मिलकर उनको नागरीमें अपना अदालती काम करनेके लिये उत्साहित करें।

संयुक्त प्रान्त के अतिरिक्त, विहार प्रान्त अथवा राजस्थान में जो नागरी प्रचारिणी सभाएं स्थापित हों, उनका भी इस विषय

में संयुक्तप्रान्त के समान ही कर्त्तव्य है । कौन नहीं जानता कि विहार प्रान्त की अदालतों में कैथी अक्षर प्रचलित है? इसमें सन्देह नहीं कि कैथी अक्षर नागरी लिपिका बदला हुआ रूप है। कैथी, नागरी के शार्ट हैण्ड के संकेत हैं परन्तु इस पर भी वहां भी अदालतों में कैथी के प्रचार होने से नागरी की जो हानि होरही है उसको कौन नहीं जानता? कई वर्ष हुए, जब कि इस लेखके लेखकने "विहारबन्धु"की सेवा करते हुए, अदालतोंमें कैथीके स्थानमें नागरीके प्रचार करनेका आन्दोलन किया था। तब बिहारी भाई, इस आन्दोलन के विरोधी थे, परन्तु अब हमारे विहारी भाई, अदालतों में नागरी के स्थान में, कैथी अक्षरों के प्रचलित होने से जो कठिनाइयां उपस्थित होरही हैं, उन को अनुभव करने लगे हैं। अतएव विहारप्रान्त की नागरी प्रचारिणी सभाओं को इस विषय में उद्योग करना चाहिये। और हर्ष है कि आरा की नागरी प्रचारिणी सभा इस विषय में प्रयत्न कर भी रही है।

राजस्थान के कितनेही राज्यों की अदालतों में उर्दू प्रचलित है। खेद है कि हिन्दू नरेशों के राज्य में हिन्दी का निरादर होरहा है भरतपुर जयपुरादि राज्यों में हिन्दी का प्रचलित न होना अत्यन्त दुःखदायी है। अतएव राजपूताने की नागरी प्रचारिणी सभाओं को इस विषय का प्रयत्न करना चाहिये, जिससे जिन राज्यों में नागरी का प्रचार नहीं है, उनमें नागरी का प्रचार हो।

चलते फिरते पुस्तकालय।

ऊपर हमने नागरी प्रचारिणी सभाओंका जो कुछ कर्तव्य लिखा है वह एक ऐसा कर्त्तव्य है जिसका फल दूसरोंके हाथहै। हम अब यहां पर नागरीप्रचारिणी सभाओं के उन कार्य्यों को लिखना चाहते हैं जिनकेकरने में दूसरों का मुंह न ताकना पड़े। उन कार्य्योंमें सबसे पहले चलते फिरते पुस्तकालयों का स्थापित करना है। चलते फिरते पुस्ताकालयों से (Circulating Libaries) से हमारा तात्पर्य यह है कि नागरी प्रचारिणी सभाओं को अपने यहां से उत्तमोत्तम पुस्तकें सन्दूकों में रखकर अपने स्थानों के प्रत्येक मुहल्लों में नित्यप्रति नियत समय पर भेजनी चाहियें। जिन पुरि

घारों की स्त्रियां या बच्चे पढ़ना चाहतेहों उनसे कुछ मासिक चन्दा लेकर पुस्तकें उन्हें पढ़ने को देनी चाहिये। स्मरण रहे कि पुस्तकें शिक्षाप्रदहों, अश्लील पुस्तकें न रखी जायं पुस्तकें ऐसी हों जो परिवारों में पढ़ने को दी जासकें, जिनके पढ़ने से सुकोमल बालकों देवियों के विचार उच्च और दृढ़ हों अपने यहां के मन्दिरों तथा और और मुख्य स्थानों में भी पुस्तकालय खोलने चाहियें।

रात्रि पाठिशालाएं

प्रायः देखा गया है कि अनेक मनुष्य बालकपन में पढ़ने नहीं पाते हैं बड़े होने पर उनकी इच्छा पढ़ की होता है पर दिन भर काम काज में लगे रहने के कारण वे पढ़ने नहीं सकते हैं। और बहुत से मनुष्य ऐसे होते हैं जिन्होंने बालकपन में हिन्दी नहीं पढ़ी अङ्गरेज़ी फ़ारसी भाषाओं में अच्छी योग्यता प्राप्त करली है परन्तु बड़े होने पर उनकी इच्छा हिन्दी पढ़ने की होती है पर वे अपनी आकांक्षा पूरी नहीं कर सकते हैं। दिन में उन्हें अपने परिवार पालन के लिये जीविका करनी पड़ती है। ऐसे व्यक्तियों को हिन्दी पढ़ाने के लिये नागरी प्रचारिणी सभाओं को अपने स्थानों में नागरी की रात्रि पाठशालाएं (Night schools)खोलने चाहियें। इस से हिन्दी का विशेष प्रचार होगा।

सुबोध व्याख्यान।

समय समय पर नागरी प्रचारिणी सभाओं को अपने यहाँ शिक्षाप्रद व्याख्यान कराने चाहियें। जहां तक हो ये व्याख्यान साहित्य सम्बन्धी हों इन व्याख्यानों में किसी के जी दुखाने वाली बातें न कहीं जावें। ऐतिहासिक वैज्ञानिक और स्वास्थ्य सम्बन्धी व्याख्यान होने चाहियें। यदि सभाएं अपने यहाँ मैजिक लालटेन द्वारा व्याख्यानों का प्रबन्ध कर सकें तो और भी अच्छी बात है। व्याख्यानों का प्रबन्ध भी चलते फिरते पुस्तकालयों के समान नगर के मुख्य मुख्य स्थानों तथा जिलेके अधीन गांवों में हो तो नागरी का विशेष प्रचार होगा।

नाट्य समिति और स्वेच्छा सेवक

जिन नागरी प्रचारिणी सभाओं की शक्ति अपने यहां नाट्य समिति स्थापित करनेकी हो उन्हें अपने यहां नाट्य समिति अवश्य

स्थापित करनी चाहिये। उन्हें अपने यहां हिन्दी के अच्छे अच्छे और शिक्षाप्रद नाटक खेलने चाहियें। नाटकों के अतिरिक्त प्रत्येक सभा को अपने यहांसे कुछ ऐसे व्याख्याता तैयार करने चाहियें जो समय समय पर हिन्दी का प्रचार किया करें। छोटे मोटे अवसरों पर भी बाहर से उपदेशक बुलाने के लिये मुंह न ताकना पड़े। स्थानिक व्याख्यातों द्वारा सुबोध व्याख्यानों का अच्छा प्रबन्ध हो सकता है।

जयन्ती मनाना

हिन्दी सभाओं के कार्य का एक अङ्ग हिन्दी के प्रसिद्ध लेखकों और कवियों की जयन्ती मनाना भी होना चाहिये सूरदास, तुलसीदास हरिश्चन्द्र, आदि कवि और लेखकों के जन्म दिवस पर सभाओं को अपना विशेष अधिवेशन करके जयन्ती मनानी चाहिये। जयन्ती के अवसरों पर सुन्दर कविताएँ, मनोहर निबन्ध और व्याख्यान होने चाहियें। पर साथही स्मरण रखना चाहिये कि जयन्ती का उद्देश्य केवल अच्छे व्याख्यान और निबन्धों में ही समाप्त न हो जाय— जयन्ती के अवसरों पर नागरीप्रचारिणी सभाओं को चारआने फण्ड का कमसे कम चन्दा खोलना चाहिये। इसमें यह नियम रखा जाय कि प्रत्येक सभासद कमसे कम चारआने अवश्यही दे और जो विशेष दें तो और भी अच्छा। इस फण्ड में जो कुछ धन संग्रह हो, वह सब सभाएँ सम्मेलन के स्थायी कोष में भेजने की कृपा किया करें।

अब प्रश्न होता है कि सभाओं का संग्रह किया हुआ धन-"दाल भात में मूसलचन्द" के समान सम्मेलन लेनेवाला कौन होता है? ऐसे प्रश्न करने वाले सज्जनों से हमारा निवेदन है कि सम्मेलन यह धन अपने लिये नहीं चाहता है यह धन सम्मेलन सभाओं की सेवा में ही लगाना चाहता है। प्रत्येक सभाओं से सम्मेलन कार्यालय में हिन्दीभाषा में बोलने वाले उपदेशकों की मांग आया करती है अनेक सभाएँ उपदेशकों के अभाव के कारण वार्षिकोत्सव नहीं कर सकती हैं समय पर बहुत सभाओं की उपदेशकों की मांग पूरी नही होसकतीहै। इसका कारण यह है कि सम्मेलन की इतनी शक्ति नहीं है कि वह बहुत से उपदेशक रख सके। इस धन से इतने उपदेशक रखेजांय कि जिस समय जिस सभा को

उपदेशक की आवश्यकता हो, वह पूरी कीजाय। क्या हिन्दी प्रेमी इस ओर ध्याद देंगे ? वार्षिकोत्सवों में नागरीप्रचारिणी सभाओं को क्या क्या काम करना चाहिये इस विषय में हम अपने विचार किसी आगामी संख्या में पाठकोंकी भेंट करेंगे।

राजा गोपीचन्द की कथा।

(लेखक—श्रीयुक्त बाबू गिरिजा कुमार घोष)

हिन्दी भाषियों में छोटे बड़े स्त्री पुरुष सभी मनुष्य राजा गोपीचन्द के वैराग्य की कथा जानते हैं। परन्तु गोपीचन्द के गीतों को सुनकर कितने विद्वानों ने उनसे कुछ ऐतिहासिक सत्य निकालने की चेष्टा की है ? कुछ बंगाली ऐतिहासिकों ने गोपीचन्द के विषय में एक पुरानी पोथी खोज निकाली है, और वे दिखलाना चाहते हैं कि गोपीचन्द का स्थान शायद बंगाल में रहा होगा। ३५ वर्ष होगये, डाक्टर ग्रियर्सन ने एशियाटिक सुसाइटी से प्रकाशित जर्नल के ४७ वें खंड में "मयनामती को पंथि" नामक एक अति प्राचीन पुस्तक की चर्चा की है। श्रीयुत दिनेशचन्द्र सेन ने भी अपनी 'वङ्गभाषाओ साहित्य' में इसी पोथी की आलोचना की है। साहित्य-परिषत्-पत्रिका, भारतवर्ष, आदि कई मासिक पत्रों में भी बंगवासी विद्वानों ने इस पुरानी पोथी के विषय और उसके ऐतिहासिक स्थान निर्देश, कवित्व समालोचना आदि पर अपनी अपनी सम्मतियाँ प्रकाशित की हैं। ग्रियर्सन साहब और विश्वेश्वर भट्टाचार्य ने गोपीचन्द का स्थान रंगपुर में होना सम्भव समझा है। मौलवी अबदुल करीम ने मयनामती और गोपीचन्द का घर चटगां में बतलाया है। दीनेश बाबू इस पोथी की घटना को बौध्य-युग की बात कहते हैं। वा० बैकुण्ठनाथदत्त का कथन है कि राजा मानिकचन्द बौध्य था। न मालूम किसकी बात सत्य है। क्या यह गोपीचन्द कोई दूसरा गोपीचन्द था या हिन्दी में जिसके वैराग्ययोग की गाथा आज दिन गली गली गायी जाती हैं वही गोपीचन्द यह भी था बंगला की पोथी २०० वर्ष से भी पुरानी है। उसकी भाषा त्रिपुरा की भाषा से मिलती जुलती है। कथा में चाटिग्राम या चटगां, चन्द्रनाथ पर्वत आदिका पता चलता है।

यह त्रिपुरावाली पोथी भी गोपीचन्द के सन्यास सिद्ध योगी गुरू गोरखनाथ, रानियों का रोना धोना इत्यादि का वर्णन करती है। राजा माणिकचन्द और उनकी रानी मयनामतीके पुत्र गोविन्दचन्द्र या गोपीचन्द के संन्यासी होजाने के विषय पर पोथी रचित हुई है। यह कथा १० वर्ष से भी पुरानी बतलायी जाती है। कथा का संक्षेप यों होसकता है—राजा माणिकचन्द के परलोक वास के पीछे उसका पुत्र गोविन्दचन्द्र राजा हुआ और बहुत विलासी और अत्याचारी हो गया। उसकी चार रानियाँ थीं। सदा स्त्रियों के संग रहकर वह निस्तेज हो गया। इसी लिये रानी मयनामती बेटे को अनेक प्रकार के हितोपदेश देने लगी और भोगविलास, और प्रजा पीडन आदि छुड़वाने का यत्न करवाने लगी। फिर रानी मयनामती ही ने अपने पुत्र को योग साधन कराके शारीरिक और मानसिक उन्नति तथा दीर्घ जीवन प्राप्त कराने के लिये भी चेष्टा की। रानी के उपदेशों में बहुत मूल्यवान बातें पायी जाती हैं—जैसा कि हिन्दी गीतों से भी सुने जाते हैं। गुरू गोरखनाथ के करामातों के भी वर्णन इस पोथी में मिलते हैं।

पोथी में लिखा है कि राजा गोपीचन्द बहुत प्रतापी राजा था, एक ही प्रकार से उसके झंडे के नीचे ७२ लाख प्यादे, ६२ वज़ीर या सेनापति, ६४ सिकदार या सहकारी सेनापति, ८२ हज़ार घुड़सवार और ६ हज़ार धनुकधारी सेना बटुर जाते थे। उसके ४० करद राजा भी थे।

यह गोपीचन्द कौन था हिन्दी गीतों का गोपीचन्द था या कोई दूसरा था, इसका निर्णय किसी हिन्दी रसिक ऐतिहासिक को करना चाहिये। हिन्दी बोलने वाले भी शायद गोपीचन्द को ढाके की ओर का रहने वाली ही बतलाते हैं। "मयनामती की पंथि" के विषय में "गृहस्थ" नामक वंगभाषा के मासिक पत्र में आजकल एक बहुत सुन्दर आलोचना प्रकाशित हो रही है।

प्राचीन बंगाल से हिन्दी का सादृश्य।

(लेखक—बाबू गिरिजाकुमार घोष)

यहां पर कुछ प्राचीन बंगला भाषा की कविता के दृष्टान्त उद्धृत किये जाते हैं। इन्हें पढ़ कर हिन्दी के पाठक आप ही

समझ सकेंगे कि वर्त्तमान बंगला का प्राचीन रूप बिलकुल हिन्दी ही था और समय के फेर से तथा दूरदेश के कारण परस्पर अन्तर पड़ जाने से हिन्दी बंगला के वर्त्तमान रूपों में भी बहुत अन्तर हो गया है, नहीं तो असल में दोनों भाषाएं एक ही मूल से निकली हैं।

विद्यापति कवि—एतहुं निदेश कहल तोहिं सुन्दरि,
जानि इह करह विधान।
हृदय-पुतलि तुहुं सो शून कलेवर
कवि विद्यापति भाण॥

विद्यापति मैथिल थे। परन्तु उस समय मिथिला बंगला में भेद नहीं था। बंगाली भी विद्यापति को अपना आदि कवि मानते हैं।

गोविन्ददास कवि—पेखलु अपरुब रामा।

कुटिल कटाख लाख शर वरिखन मन बांधल विनुदामा॥ ध्रुव॥
पहिल वयस धनि मुनि-मन-मोहिनि गजवर जिनि गति मन्दा।
कनकलता तनु वदन भान जनु ऊयल * पुनिमक चन्दा।
काँचा काञ्चन सांच भरि दौ कुच चुचुक मरकत शोभा।
कमल कोरे * जनु मधुकर शूतल † ताहिं बहल मन लोभा॥
विद्यापति पद मोहे उपदेशल राधा रसमय कन्दा।
गोविन्दास कह कैसन हेरल जो हेरि लागय धन्दा॥

गोविन्द दास—अंजन गंजन जग-जन-रंजन
जलद पुंज जिनि वरणा।
तरुणारुण-थल कमल दलारुण
मंजीर रंजित चरणा॥

जयदेव कवि के गीत गोबिन्द के—

"ललित-लवङ्ग-लता परिशीलन-कोमल-मलय समीरे"।
"चन्दन-चर्चित-नील-कलेवर पीत वसन वन माली"।

---

* उदित हुआ *गोद में † सोया

तथा "रति सुखसारे गतमभिसारे मदन मनोहर वेश"।

इत्यादि को कौन नहीं जानता ? ये कविताएं संस्कृत में होने पर भी अनेकांश में बंगला और हिन्दी की भी कविताएं कही जा सकती हैं।

गोबिन्द दास की एक और कविता देखिए—

शारद चन्द, पवन मन्द।
बिपिने भरल; कुसुम गन्ध।
फुल्ल मल्लिका, मालती यूथी।
मत्त-मधुकर-भोरणी।

हेर राति, ऐसन भाति।
श्याम मोहन, मदने माति।
मुरली गान, पंचम तान।
कुलवती-चित चोरणी॥

इत्यादि।

वर्त्तमान कवि रवीन्द्रनाथ ने प्राचीन वैष्णव कवि के पद माधुर्य्य से मोहित होकर उन्हीं के सुर में कैसा सुर मिला कर गाया है सुनिए—

गहन कुसम—कुंज माझे,
मृदुल मधुर—वंशी वाजे,
विसरि त्रास—लोक लाजे,
सजनि आओ आओ लो—इत्यादि॥

विद्या प्रचारिणी सभा का वार्षिकोत्सव।

राजस्थान में नागरी का प्रचार होते हुए देखकर किसको आनन्द न होगा ? चित्तोड़ की विद्या प्रचारणी सभा वहांके कुछ नागरी प्रेमियों और उत्साही भाइयों के पुरुषार्थ का फल है। हर्ष है कि गत आश्विन शु० ६ से ११ तक उक्त सभा का द्वित्तीय वार्षिकोत्सव था। कितने ही विद्वानों के नागरी प्रचार के सम्बन्ध में व्याख्यान हुए और सभा का वार्षिक विवरण सुनाया गया। आशा होती है कि यह सभा अपनी दिन दूनी और रात्रि चौगुनी उन्नति करेगी।

सम्मेलन का समय।

हमारे पाठकों को यह मालूम ही है कि सम्मेलन का समय बहुत निकट आ गया है, उसकी तिथियां मार्ग शीर्ष शुक्ला ९-१०-११ सं० १९७१ तदनुसार २६, २७, २८ नवम्बर है। लखनऊ में पंचम सम्मेलन के लिये तैय्यारियां भी अच्छी होरही हैं और आशा है कि सम्मेलन उर्दू के केन्द्र लखनऊ में बहुत ही सफलता के साथ होगा। आवश्यकता भी इस बात की है कि लखनऊ में इस बात की अच्छी तरह से घोषणा कीजाय कि हमारी जाति का राष्ट्रीय दृष्टि से भाषा और साहित्य की ओर क्या कर्तव्य है? इससे यह पूरी आशा होती है कि हिन्दी प्रेमी, समस्त भारतवर्ष से अच्छी संख्या में जुटेंगे और उन अङ्गरेज़ी और उर्दू की चमक से तिल मिलाये हुए अर्द्धशिक्षित लोगों को जो इस बात के कहने में अपनी बुद्धि और विद्या की सीमा समझते हैं कि हिन्दी एक ग्रामीण भाषा है और सभ्य समाज में आदर पाने योग्य नहीं है, अपने लेखों और व्याख्यानों द्वारा यह दिखलावें कि हिन्दी साहित्य में क्या रत्न हैं और हिन्दी भाषा कहां कहां तक जातीयता उत्पन्न करने में सहायक हो सकती है और हिन्दी संसार में इस समय क्या कार्य्य हो रहा है? इस समय आवश्यकता यह है कि प्रत्येक नगर अथवा ग्राम में जहां हिन्दी प्रेमियों की अच्छी संख्या होवें, सभाएं करना आरम्भ कर दी जावें और सर्व साधारण को सम्मेलन के उद्देश्यों से परिचित कराकर प्रतिनिधियों की अच्छी संख्या भेजने का प्रयत्न किया जाय।

इस समय यह देख कर कुछ आश्चर्य्य होता है कि दो एक ऐसे मित्रों ने, जिनकी सम्मति का हमको बहुत आदर है दो एक समाचार पत्रों में यह लिखा है कि सम्मेलन का समय हटा दिया जावे, कारण हटाने का जहां तक हम समझ सके हैं यह बतलाया गया है कि मुहर्रम की छुट्टियों में रेलवे कनसेशन नहीं मिलता और बड़े दिनों की छुट्टियों में मिलता है, और अब की बार यूरोपीय युद्ध के कारण व्यापार इत्यादि में इतनी गड़बड़ होगई है कि लोगों को कनसेशन न मिलने के कारण बहुत असुविधा होगी। बात तो यह सुनने में बहुत ठीक सी जान पड़ती है, किन्तु हमारा

निवेदन है कि हमारे वे मित्र जिन्होंने ऐसा प्रस्ताव किया है, इस विषय के संबन्ध में कुछ अन्य बातों का भी विचार करें।

सब से पहली बात तो यह है कि समय एक बार समिति से निश्चय होचुका है। स्थायी समिति के निश्चय को न मानना अपने नियमों का अपने आप निरादर करना है। बार बार इस प्रकार से समय बदलने से हिन्दी भाषा भाषी अन्य साहित्य सेवियों के सामने हास्यास्यपद होंगे। दूसरे साहित्य सेवी कहेंगे कि यह हिन्दी वाले खूब हैं जो कभी एक बात का एक मत होकर निर्णय नहीं करते हैं, कभी इनमें समय और कभी सभापति के निर्वाचन पर आपस में कलह मचाही करती है। इस लिये सभी हिन्दी प्रेमियों को स्थायी समिति के नियमों का आदर करना चाहिये।

समय बदलने के आन्दोलन करने के पूर्व देखना चाहिये कि स्थायी समिति ने समय का निर्णय किस प्रकार से किया था? उस समय जब यह प्रश्न किया गया था कि सम्मेलन किस समय हो अधिकांश हिन्दी पत्रों ने और "भारत मित्र" ने भी मुहर्रम में ही सम्मेलन का अधिवेशन करने की सम्मति दी थी। अधिक बोट मुहर्रम के समय के पक्ष में ही आये थे तब स्थायी समिति ने सम्मेलन का समय मुहर्रम का निश्चय किया। स्मरण रखना चाहिये कि स्थायी समिति में भारतवर्ष के समस्त प्रान्तों के प्रतिनिधि हैं।

इससे पहले भी भागलपुर और कलकत्ते में मुहर्रमकी छुट्टियों में होचुका है। जो दलीलें इस समय मुहर्रम की छुट्टियों में सम्मेलन के न करने के सम्बन्ध में दी जा रही हैं वे उस समय भी दी जा सकती थीं।

किराये का प्रश्न अवश्य विचारणीय है किन्तु हमारी सम्मति में कार्य्य की सफलता किराये के विचार के ऊपर है - कनसेशन की जो बात कही गई है, उसके सम्बन्ध में हमारा निवेदन है कि देखना चाहिये उस समय कितना किराया कम हो जाता है। कनसेशन यह होता है कि थर्ड क्लास के दोनों ओर का किराया देने पर इण्टर क्लास में मनुष्य जा सकते हैं और दूसरे और अव्वल दर्जों के लोगों को एक ओर का किराया देना पड़ता है। हिन्दी

साहित्य सेवी अधिकांश इतने धनी नहीं है कि वे दूसरे और पहले दरजे में यात्रा करते हों। कनसेशन का पूरा लाभ सेकण्ड और फर्स्ट क्लास वालोंको होता है किन्तु इण्टर और थर्ड क्लासके किराये में बहुत अन्तर नहीं है।

बड़े दिनों की छुट्टियों में सम्मेलन का अधिवेशन करने में कठिनताएं है। उन दिनों में कांग्रेस होती है कितनी ही जातीय कान्फरेंस होती हैं, संयुक्त प्रान्तकी आर्य प्रतिनिधि सभा के गुरुकुल का वार्षिकोत्सव होता है। आश्विन मास में विजयादशमी के समय का भी विरोध किया गया था तब विचारना यही है कि सम्मेलन किस समय किया जाय?

सबसे बड़ी सम्मेलनके समय बदलनेमें यह कठिनता है कि स्वागत कारिणी सभा के हाथ में सम्मेलन के समय के परिवर्त्तन करने का अधिकार नहीं है। स्थायी समिति की बैठक के लिये कम से कम पन्द्रह दिन पहले नोटिस निकालना चाहिये, उसके लिये समय बहुत कम रह गया है। इस कारण हमारी सभी हिन्दी प्रेमियों और साहित्य सेवियों से प्रार्थना है कि वे समय की असुविधा का विचार न करके अपने प्यारे सम्मेलन में सम्मिलित हों और सदा के लिये इस असुविधा को दूर करने का विचार करें। आशा है कि समस्त हिन्दी प्रेमी विघ्न बाधाओं को दूर करके इस बार सम्मेलन में पधारने की कृपा करेंगे।

पुस्तकों की प्राप्ति स्वीकार ।

[गताङ्क से आगे]

२२८—प्राणघातक माला	पं० कृष्णकान्त मालवीय	अभ्युदय प्रेस	॥=)
२२९—हरि अगोचर प्रकाश	बाबू हरिदास खंडेलवाल	"	१)
२३०—कांग्रेस चरितावली	ठाकुर सूर्य्यकुमार वर्मा	"	१)
२३१—श्रीरामलीला नाटक	पं० रामदत्त ज्योतिर्वेद	"	१)
२३२—हर के हाथ निवाह		"	-)
२३३—प्रियतम	पं० कृष्णकान्त मालवीय	"	।)
२३४—माणिक आदर्श	बाबू हरिदास माणिक		।)
२३५—धर्मनिर्णय	बाबू हरिदास खंडेलवाल	अभ्युदय प्रेस	१)
२३६—गूढ़ विषयों पर सरल विचार	पं० सोमेश्वरदत्त सुकुल	"	।=)
२३७—हिन्दी और नागरी विचार	बाबू मिश्रीलाल बी०ए	"	-)॥
२३८—गौ गोहार	पं० विश्वनाथ ब्रह्मचारी	"	
२३९—सनातन धर्मोपदेश	सनातनधर्म सभा-प्रयाग	"	
२४०—मर्यादा	बाबु हरिदास खंडेलवाल	"	=)
२४१—व्यायाम	श्रीरामखिलावन	"	-)॥
२४२—बनाष्टक	पं० श्रीधर पाठक		
२४३—ऊजड़गाम	" "		
२४४—काश्मीर सुखमा			

तरुण-भारत ग्रन्थावली

नागपुर की "हिन्दी-ग्रन्थ-प्रकाशक-मण्डली" के बन्द होने के बाद से ही (जो कि हिन्दी की अपने ढंग की पहली ग्रन्थ प्रकाशक मंडली थी) मेरी इच्छा थी कि हिन्दी में ऐसा उद्देश्य लेकर ग्रन्थ प्रकाशन शुरू किया जाय जो भारत के तरुणों को योग्य मार्ग दिखला सके, उनको अपने देश की सेवा करने के योग्य विचारों में प्रवृत्त करे। अब हिन्दी के सौभाग्य से कई जगह ग्रन्थ-प्रकाशन का कार्य प्रारम्भ हुआ है और सब लोग साहित्य वृद्धि की दृष्टि से अच्छा कार्य कर रहे हैं। यह देख कर मेरी उपर्युक्त इच्छा फिर एक बार स्फुरित हुई है और हमने अपने नौनिहालोंकी सेवा करने का निश्चय किया है। इस ग्रन्थावली में ऐतिहासिक, चरित्र सम्बन्धी और नीति के तात्विक ग्रन्थ प्रकाशित होंगे। ग्रन्थों का मूल्य जहां तक हो सकेगा कम रखा जायगा विचारों का प्रचार करना ही इसका उद्देश्य होगा। पांच सौ ग्राहक होजाने पर पहला ग्रन्थ निकलेगा। कृपया अपना नाम पता भेज दीजिये मुझे पूर्ण आशा है कि भारतीय तरुण दो तीन मास में यह संख्या पूरी कर देंगे।

मेरा पता

लक्ष्मीधर वाजपेयी

मुज़फ़्फ़रखां का बाग आगरा

लीजिये ! बढ़िया ग्रन्थ ! लीजिये !

कर्म वीर गान्धी।

केवल आठ आने के पैसे ख़र्चकर इस महापुरुष के जीवन चरित का पाठ करो।

देशभक्त लाजपत

कौन है जो भारत के सपूत देशभक्त लाला लाजपतराय जी के नाम को नहीं जानता। लीजिये एक रुपया ख़र्च कर इसे ख़रीदिये यह जीवन तथा व्याख्यान पढ़ने लायक है। सम्मेलन पत्रिका के ग्राहकों को बारह आने में मिलेगी। लीजिये। जल्दी कीजिये।

निवेदक—

मंत्री, हिन्दी साहित्य सम्मेलन' प्रयाग।

नीति दर्शन

" एक पन्थ दो काज "

लीजिये, पढ़िये बाबू राधामोहन गोकुलजीने नीति दर्शन में नीति सम्बन्धी अनेक विषयों का समावेश किया है लीजिये, ख़रीदिये, पुण्य संचय कीजिये, क्योंकि इसका मूल्य पैसा फण्ड में जमा होगा, मूल्य ॥)

स्वामी सत्यदेव जी

रचित पुस्तकें

पढ़िये ! लीजिये !! पढ़िये !!!

मनुष्य के अधिकार

(मूल्य पांच आने)

सत्य निबन्धावली

(मूल्य आठ आने)

यदि आप अपनी सन्तान को हिन्दी प्रेमी, देश भक्त और सच्चरित्र बनाया चाहते हैं तो इन पुस्तकों को पढ़िये ।

हिन्दी का सन्देश

(मूल्यएक आना)

छप गया ! लीजिये । स्वामी सत्यदेव जी का यह प्रसिद्ध व्याख्यान छप कर तय्यार है । इकट्ठी पुस्तकें मंगाइये । दस प्रतिओं से कम का बी० पी० नहीं भेजा जाता ।

निवेदक—

मंत्री, 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन" प्रयाग

सम्मेलन पत्रिका के ग्राहकों के लिये,

आवश्यक सूचना।

हिन्दी के सुप्रसिद्ध सुलेखक पं० बालकृष्ण जी भट्ट की लेखनी का स्वाद चखना हो तो नीचे लिखी पुस्तकें अवश्य पढ़िये—

शिक्षा दान मूल्य ≡) नूतन ब्रह्मचारी मूल्य ≡)

सम्मेलन-पत्रिका" के ग्राहकों को चौथाई कम मूल्य पर दोनों पुस्तकें एक साथ लेने से ।)॥ में मिल जायंगी, पर डाक व्यय आदि अलग देने पड़ेंगे-ग्राहकगण अपना ग्राहक नंबर अवश्य लिखें।

पता—महादेव भट्ट,
अहियापूर, इलाहाबाद।

"सम्मेलन पत्रिका" के नियम ।

१—"सम्मेलन पत्रिका" हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन कार्य्यालय, प्रयाग, से प्रतिमास प्रकाशित होगी।

२—इसका वार्षिक मूल्य १) इसलिये रक्खा गया है कि सर्व-साधारण इसके ग्राहक होसकें।

३—इस समय इसमें प्रतिमास कुल २४ पृष्ठ ही रहा करेंगे। परन्तु आवश्यकता होने पर कभी कभी पृष्ठ संख्या बढ़ा भी दी जाया करेगी। आगे चलकर यदि इसकी सेवा साहित्यसेवियों को रुचिकर हो, और इसके ग्राहकों की यथोचित संख्या होजाय तो यही पत्रिका अधिकतर पृष्ठ-संख्याओं में और अधिकतर उन्नत दशा में प्रकाशित की जायगी।

४—इसके प्रबन्ध-विभाग के पत्र—ग्राहक बनने के लिये आवेदन, विज्ञापन-सम्बन्धी पत्र, मनीआर्डर इत्यादि—मन्त्री, साहित्य-सम्मेलन कार्य्यालय, जानसेनगंज प्रयाग, के नाम भेजे जाने चाहियें।

५—सम्पादक के नाम की चिट्ठियां, बदले के समाचार-पत्रादि समालोचना की पुस्तकें, पत्रिका में प्रकाशित होने के लिये लेखादि भी ऊपर ही के पते से भेजे जाने चाहियें।

विज्ञापनदाताओं के लिये नियम।

१—"सम्मेलनपत्रिका" में अश्लील विज्ञापनों को स्थान नहीं मिलेगा।

२—विज्ञापन साधारणतः पूरे और आधे पृष्ठ से कम स्थान के लिये स्वीकृत न होंगे।

१—पृष्ठ का मासिक मूल्य ... ४॥) होगा।

२—आधे पृष्ठ का ... २॥) होगा।

३—जो लोग १२ संख्याओं में विज्ञापन छपवाने का मूल्य एक साथ भेज देंगे, उनका विज्ञापन एक संख्या में बिना मूल्य छाप दिया जायगा, अर्थात् १२ की जगह १३ बार उनका विज्ञापन छापा जायगा।

४—किसी दशा में पेशगी मूल्य बिना मिले कोई भी विज्ञापन नहीं छापा जायगा।

५—विक्रयार्थ पुस्तकों के विज्ञापनों पर ऊपर दिये हुए मूल्य से कम मूल्य न लिया जायगा।

१ पृष्ठ का मूल्य १ मास के लिये ३॥) और

आधे " " २) होगा।

६—अदालतों में लेखकों की नौकरी, अध्यापक-अध्यापिकाओं की नौकरी, इत्यादि हिन्दी-प्रचारार्थ नौकरियों के विज्ञापन एक बार बिना मूल्य छाप दिये जायंगे। दूसरी वार और अधिकवार के लिये ऐसे विज्ञापनों का मूल्य केवल १) प्रतिमास होगा। विज्ञापन ८ पंक्तियों से अधिक न हो।

मन्त्री, हि० सा० स० कार्य्यालय, प्रयाग।

हिन्दी साहित्यसम्मेलन से बाबू नरेन्द्र नरायण सिंह द्वारा प्रकाशित

Reg. No. 6A29

सम्मेलन पत्रिका

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की

मुखपत्रिका।

भाग २ } कार्तिक संवत् १९७१ { अङ्क २

विषय सूची।

वार्षिक मूल्य १)] [एक संख्या =)

पं० ओंकारनाथ वाजपेयी के प्रवन्ध से ओंकार प्रेस प्रयाग में छपा

सम्मेलन के उद्देश्य

(१) हिन्दी साहित्य के अङ्गों की उन्नति का प्रयत्न करना।

(२) देवनागरी लिपि का देश भर में प्रचार करना और देश व्यापी व्यवहारों और कार्यों के सुलभ करने के लिये हिन्दी भाषा को राष्ट्र भाषा बनाने का प्रयत्न करना।

(३) हिन्दी को सुगम, मनोरम और लाभदायक बनाने के लिये समय समय पर उसकी शैली के संशोधन और उसकी त्रुटियों और अभावों के दूर करने का प्रयत्न करना।

(४) सरकार, देशी राज्यों, पाठशालाओं, कालेजों, विश्व विद्यालयों और अन्य संस्थाओं, समाजों, जनसमूहों तथा व्यापार, ज़मींदार और अदालतों के कार्यों में देवनागरी लिपि और हिन्दी भाषा के प्रचार का उद्योग करते रहना।

(५) हिन्दी के ग्रन्थकारों, लेखकों, पत्रसंपादकों, प्रचारकों और सहायकों को समय समय पर उत्साहित करने के लिये पारितोषिक, प्रशंसापत्र, पदक, उपाधि आदि से सम्मानित करना।

(६) उच्च-शिक्षा प्राप्त युवकों में हिन्दी का अनुराग उत्पन्न करने और बढ़ाने के लिये प्रयत्न करना।

(७) जहां आवश्यकता समझी जाय वहां पाठशाला, समिति तथा पुस्तकालय स्थापित करने और कराने का उद्योग करना तथा इस प्रकार की वर्त्तमान संस्थाओं की सहायता करना।

(८) हिन्दी-साहित्य के विद्वानों को तैयार करने के लिये हिन्दी की उच्च परीक्षाएं लेने का प्रबन्ध करना।

(९) हिन्दी भाषा के साहित्य की वृद्धि के लिये उपयोगी पुस्तकें तैयार करना।

(१०) हिन्दी-साहित्य सम्मेलन के उद्देश्यों की सिद्धि और सफलता के लिए अन्य जो उपाय आवश्यक और उपयुक्त समझे जांय उन्हें काम में लाना।

सम्मेलन-पत्रिका का उद्देश्य

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के उद्देश्यों की पूर्ति में सहायता करना, और साहित्य-प्रेमियों से इसी के लिये उपदेश लेना।

सम्मेलनपत्रिका

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की कार्यकारिणी समिति
की ओर से प्रतिमास प्रकाशित।

भाग २ | कार्तिक संवत् १९७१ | अङ्क २

हिन्दी संसार।

हिन्दी के दैनिक पत्र

अब तक हिन्दी में केवल एक भारतमित्र ही दैनिक पत्र था। पर यूरोप में महाभारत छिड़ जाने से कई पत्र निकले हैं। कलकत्ते से जिस "कलकत्ता समाचार" के दैनिक निकले की धूम मचरही थी, वह पिछले दो महीने से प्रकाशित होने लगा है और अच्छा सम्पादित होता है। "कलकत्ता समाचार" युद्ध का दैनिक नहीं है, यह स्थायी रूप से दैनिक निकला है और इसके सञ्चालक युद्ध से पहलेही इसे दैनिक निकालने का विचार कर रहे थे। "कलकत्ता समाचार" के अतिरिक्त सुनने में आता है कि युद्ध के कारण बम्बई का श्रीवेङ्कटेश्वर समाचार और हमारा पड़ौसी "अभ्युदय" भी दैनिक हो गया है। इन दोनों पत्रों का भी अच्छा सम्पादन होता है। युद्ध के कारण बाँकीपुर का हिन्दी सहयोगी बिहारी भी दैनिक होगया है। 'बिहारी' भी होनहार दिखलाई पड़ता है। ज्ञात होता है कि युद्ध के कारण, कागज़ के अभाव ने सब सहयोगियों से अधिक बिहारी को कष्ट दे रखा है। इसलिये कभी इसका आकार बड़ा और कभी छोटा होता है। हमारी हार्दिक इच्छा यही है कि ये सब दैनिक पत्र चिरस्थायी होकर हिन्दी की शोभा बढ़ावें।

—o—

जयपुरमें उर्दू

हिन्दू राज्यों में हिन्दी का प्रचार न होना बड़ाही दुःखदायीहै। हम पिछली बार पाठकों को सुना चुके हैं कि राजपूताने के प्रसिद्ध देशी राज्य भरतपुर की अदालत में उर्दू का प्रचार है हिन्दी के लिये वहां की अदालतों के द्वार बन्द हैं। इसी प्रकार जयपुर राज्य की अदालतों में भी हिन्दी को दूध में मक्खनी के समान स्थान नहीं दिया जाता है। जिस जयपुर में आज कल के समय में भी संस्कृत के एक से एक विद्वान हैं वहां संस्कृत की बेटी हिन्दी का निरादर होना अत्यन्त दुःखदायी है। क्या जयपुर नरेश अपना यह कर्तव्य नहीं समझते हैं कि वे अपने राज्य में हिन्दी को जो उनकी प्रजा की भाषा है स्थान देने की कृपा करें। मर्दुमशुमारी की रिपोर्ट से तो यही पता लगता है और जिन लोगों ने राजपूताना में भ्रमण किया है, उनको भी प्रत्यक्ष यही बात मालूम हुई है कि राजस्थान की भाषा हिन्दी का ही एक रूप है, उर्दू जानने वालों की वहाँ पर बहुत कम संख्या है। फिर न मालूम जयपुर, भरतपुर आदि राज्यों में उर्दू को प्रजा की इच्छा के विरुद्ध क्यों स्थान दिया जा रहा है?

—०—

राजपूतानेकी प्रजा इतनी अशिक्षिता क्यों है?

राजपूताना में उर्दू हिन्दी की चर्चा करते समय यह प्रश्न स्वभावतः ही उठता है कि राजपूताना की प्रजा इतनी अशिक्षिता क्यों है? राजपूताना में विद्या का विशेष प्रचार क्यों नहीं है? सच पूछिये तो इस प्रश्न का उत्तर केवल हिन्दी का प्रचार न होना ही है। उर्दू फ़ारसी केवल वही मनुष्य पढ़ते हैं जिनकी इच्छा केवल अदालतों में नौकरी करने की होती है। यदि राजपूताना के समस्त देशी नरेश अपने राज्यों में हिन्दी की प्रारम्भिक और अनिवार्य शिक्षा प्रचलित कर दें तो थोड़े ही दिनों में वहां विद्या की ख़ूब चर्चा होने लग जाय।

—०—

आरा नागरीप्रचारिणीसभा का उद्योग।

हमें आरा की नागरी प्रचारिणी सभा की मुख्य पत्रिका "साहित्य पत्रिका" से यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि सभा ने

बिहार के श्रीमान् छोटे लाट की सेवा में एक प्रार्थना पत्र भेजा है कि कैथी लिपि के स्थान पर वहां के सब कागज़ पत्र नागरी लिपि में छापे जांय। क्योंकि नागरी में वे शुद्ध छपेंगे और उसको पढ़ने में लोगों को विशेष सुविधा भी होगी"। आरा की नागरी प्रचारणी सभा का यह उद्योग प्रशंसनीय है। हमें आशा है कि सभा की यह प्रार्थना अवश्य ही स्वीकृत होगी। यदि स्वीकृत न हो, तो भी सभा को निरन्तर इस विषय में उद्योग करना चाहिये।

राजधानी में नवीन सहयोगी।

बहुत दिन हुए, जब दिल्ली वर्त्तमान समय में भारतवर्ष की राजधानी नहीं हुई थी। तब सन् १८७४ में हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक, स्वर्गीय लाला श्रीनिवासदासजी ने वहां से "सदादर्श" नामक साप्ताहिक समाचार पत्र निकाला था। जो केवल दो वर्ष चला था, पीछे भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के "कविवचनसुधा" में सम्मिलित करदिया गया था। तब से फिर दिल्ली में राजधानी होने के समय तक हिन्दी का कोई अख़बार नहीं निकला। क्योंकि वहाँ पर उर्दू का प्रचण्ड राज्य है। वर्त्तमान समय में, राजधानी होने से पूर्व दिल्ली में उर्दू के कितने ही नामी लेखक और कवि होगये हैं और इस समय भी हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि वहां पर उर्दू का खूब प्रचार है। वर्त्तमान समय में दिल्ली राजधानी होते ही वहां उर्दू का और भी प्रचार बढ़ा है। ऐसे कठिन समय में गुरुकुल काँगड़ी से "सद्धर्मप्रचारक" ने वहाँ पहुंचकर मातृभाषा हिन्दी की लाज रखली थी। हर्ष है कि अब वहां से दो और हिन्दी सहयोगी "हिन्दी समाचार" और "विजय" प्रकाशित होने लगे हैं। "हिन्दी समाचार" "आर्ट प्रिन्टिङ्ग प्रेस" से प्रकाशित हुआ है। इसके लेख, छपाई, कागज़ सब सुन्दर हैं। दूसरा साप्ताहिक पत्र "विजय" नामका श्रीयुत पं० हरिचन्द्रजी के प्रबन्ध से से प्रकाशित हुआ है। इसमें चटकीली सम्पादकीय टिप्पणियां, मनोरञ्जक लेख आदि हैं। इसके पहिले अंक से ही अनुमान होता है कि यह पत्र होनहार होगा। वार्षिक मूल्य दोनों सहयोगियों का दो दो रुपया है।

——:o:——

मेरठ में हिन्दी प्रचारिणी सभा ।

मेरठ में हिन्दी प्रचारिणी सभा की स्थापना का शुभ समाचार सुन कर हमें वहां के प्रसिद्ध नागरी भक्त, स्वर्गीय पं० गौरीदत्त जी का स्मरण हो आया। जिन दिनों सम्वत १९ ३९ में संयुक्त प्रान्त की अदालतों में नागरी प्रचार कराने का आन्दोलन हो रहा था। उन दिनों मेरठ में भी हिन्दी की उन्नति के लिये विशेष चेष्टा हो रही थी। वहां के प्रसिद्ध नागरी भक्त, स्वर्गीय पं० गौरीदत्त जी के प्रयत्न से देव नागरी प्रचारिणी सभा स्थापित हुई थी। जो निरन्तर बीस वर्ष तक कितने ही उपयोगी कार्य्य करके, पं० गौरीदत्त जी मृत्यु के साथ ही लोप होगई। अब भी उक्त सभा द्वारा स्थापित "देवनागरी हाई स्कूल" तथा "गौरी पाठशाला" मेरठ की शोभा बढ़ा रहे हैं। हर्ष है कि अब वहां पुनः हिन्दी प्रचारिणी सभा स्थापित हुई है। इस सभा के कितने हो कार्य्य कर्त्ता अङ्गरेज़ी और संस्कृत के अच्छे अच्छे विद्वान् हैं। इस लिये आशा होती है कि यह सभा अपने ज़िले में और अपने समीप के नगरों में भी हिन्दी प्रचार का कार्य कर सकेगी।

"प्रताप" का राष्ट्रीय अंक ।

इस बार विजयादशमी पर सहयोगी "प्रताप"" ने अपना राष्ट्रीय अंक प्रकाशित करके हिन्दी संसार में अच्छा कार्य किया है। इसके लिये "प्रताप" सम्पादक को बधाई है। वास्तव में "प्रताप" का राष्ट्रीय अंक पढ़ने योग्य हुआ है। अनेक लेखकों द्वारा अनेक विषयों पर उत्तम उत्तम लेखों का संग्रह किया गया है। इस अंक का मूल्य भी केवल चार आना है। प्रताप के राष्ट्रीय अंक में जैसे सुन्दर लेख हैं, वैसा ही भावपूर्ण और चित्ताकर्षक टाईटिल पेज है। टाईटिल पेज पर महात्मा गांधी का चित्र है। सारांश यह है कि "प्रताप" का राष्ट्रीय अंक सर्वाङ्ग सुन्दर है।

"ब्रह्मचारी" और "बालमनोरञ्जन"

हम अपने दोनों नवीन सहयोगी "ब्रह्मचारी" और "बाल

मनोरञ्जन" का सहर्ष स्वागत करते हैं। "ब्रह्मचारी" ऋषिकुल हरिद्वार का मुख पत्र है। इसमें सनातन धर्म सम्बन्धी अच्छे लेख हैं। वार्षिक मूल्य १॥) है। दूसरा मासिक पत्र "बाल मनोरञ्जन" है। इसमें विविध विषयों पर छोटे मोटे सब मिला कर १६ लेख हैं। श्रीयुक्त लाला भगवान दीन की कविता "बाल-कर्त्तव्य" और श्रीयुक्त पं० मन्नन द्विवेदी गजपुरी बी० ए० की कविता 'बाल-मनोरञ्जन" अच्छी हुई हैं। वार्षिक मूल्य डेढ़ रुपया है। मैनेजर-"बाल-मनोरञ्जन आगर (मालवा) स्टेट-ग्वालियर।

सम्मेलन के सभापति।

'गुणाधिके पुंसि जनोऽनु रज्यते,
जनानुराग प्रभवा हि सम्पदा"

महाकवि भारविका ऊपर जो श्लोक उद्धृत किया गया है वह इस वर्ष लखनऊ में सम्मेलन का जो अधिवेशन होगा, उसके निर्वाचित सभापति पं० श्रीधर पाठक जी के सम्बन्ध में पूरा चरितार्थ होता है। सब हिन्दी प्रेमियों ने, साहित्यसेवियों ने और समाचारपत्रों ने पाठकजी को एक स्वर से इस पद के लिये स्वीकार किया है। समस्त प्रतिष्ठित सहयोगियों ने इस बार सभापति के निर्वाचन पर सम्मेलन की स्वागत कारिणी सभा को बधाई दी है। हम अपने प्रिय सहयोगियों के इस कथन का हृदय से अनुमोदन करते हुए, इस निर्वाचन पर स्वागतकारिणी सभी तथा समस्त हिन्दी प्रेमियों को बधाई देते हैं। सभापति के निर्वाचन पर इसबार जिस भाँति हिन्दी संसार सन्तुष्ट हुआ है, उस से तो यही आशा होती है कि अबकीबार सम्मेलन में के कार्य अन्य वर्षों की अपेक्षा और भी अधिक सफलता होगी।

पाठक जी अनुभवी विद्वान है। इस समय आप की अवस्था ५५ वर्ष की है। माघ कृष्ण चतुर्दशी संवत् १६१६ तदनुसार ता० ११ जनवरी सन् १८६० को आप का जन्म चौधरी ग्राम में जो आगरे ज़िले के फ़िरौज़ाबाद परगने में है, हुआ था। १०, ११ वर्ष की अवस्था तक आप संस्कृत पढ़ते रहे। परन्तु कई कारणों से पढ़ना लिखना छूट गया। पढ़ना छोड़ते ही इनकी रुचि चित्र खींचने और मिट्टी की सुन्दर मूर्तियां बनाने की होगई

थी। परन्तु चौदह वर्ष की अवस्था में फिर पढ़ना आरम्भ किया। फ़ारसी अङ्गरेज़ी आदि भाषाएं पढ़ीं और सन् १८८० में कलकत्ता यूनिवर्सिटी से इन्ट्रेन्सकी परीक्षा उत्तीर्णकी क्योंकि उस समय तक इलाहाबाद यूनिवर्सिटी बनी नहीं थी।

इन्ट्रेंस परीक्षा उत्तीर्ण करने के कुछ दिनों पश्चात् आप कलकत्ते में से सेंसस कमिश्नर के स्थायी दफ्तर में ६०) मासिक पर नियुक्त हुए। पीछे फिर प्रयाग में छोटे लाट साहब के दफ़्तर में ३०) रुपये मासिक पर नौकर हुए। यहां रह कर आप अपनी विद्वत्ता और कार्य कुशलता से ३००) पर छोटे साहब के दफ़्तर में सुपरिण्टेण्डेण्ट होगये। और अब पहिली अक्टूबर से सरकारी पद से पेन्शन लेली है।

पाठकजीने न केवल सरकारी कार्य्यों मेंही अपनी योग्यताका परिचय दिया है किन्तु समय २ पर साहित्य संसारमें अच्छी प्रतिभा का परिचयदिया है। पाठकजी केवल तुकबन्दी कविता करने वाले नहीं हैं। वे हिन्दीके मार्मिक लेखक और सहृदय कवि हैं। तीस, इकतीस वर्ष से हिन्दी संसार में परिचित है। सन् १८८३ में जब वृन्दाबन से श्रीयुक्त श्रीराधाचरण गोस्वामीजी ने "भारतेन्दु" नामक मासिक पत्र निकाला था तब आप की कविताएं उसमें छपती थी हिन्दी प्रदीप में भी समय समय पर बहुत सी कविताएं प्रकाशित हुई थी खड़ी बोली की कविता के तो आप आचार्य कहे जाते हैं। पाठक जी का आदर हिन्दी के नये पुराने सभी साहित्य सेवियों के हृदय में समान है। हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक द्वितीय साहित्य सम्मेलन की स्वागत कारिणी सभा के सभापति स्वर्गीय पं० वालकृष्ण भट्टजी ने अपना वक्तृता में पाठक जी के सम्बन्ध में कहा था—"हिन्दी साहित्य के रसिक जब तक हिन्दी के उत्थान का इतिहास पढ़ेंगे, पण्डित वदरीनारायण चौधरी पं० राधाचरण गोस्वामी और पं० श्रीधर पाठकका नाम सदा स्मरणीय रहेगा *** पण्डित श्रीधर पाठक की प्रखर लेखनी की साखी हिन्दी प्रदीप के कई एक पिछले अंक भर रहे हैं। खड़ी बोली की रूखी कविता में रस और मिठास की खोज की जांय तो पाठक जी ही ऐसे सुलेख-

कों की लेखनी में पाई जाती है। इनका "एकान्त वासी योगी" और 'ऊजड़ गांव' ऐसी कई एक पद्य रचना हिन्दी साहित्य में चिरस्थायी रहेंगी"। बनारससे जो काशी पत्रिका निकली थी, उस में भी सन् १८८७ में आपका 'ऊजड़ गाम' छपता रहा था। सुना जाता है कि आपका एक लेख तिलसमाती सुंदरी भी छपता था। पर वह अपूर्ण रहा। जिस समय खड़ी बोली का आन्दोलन मुज़फ्फर पुर के स्वर्गीय बाबू अयोध्या प्रसाद खत्री ने उठाया था उस समय आप के भी खड़ी बोली की कविता के पक्ष में कई लेख समाचार पत्रों में छपे थे। व ऐसे अनुभवी मार्मिक साहित्य सेवी की अध्यक्षता में सम्मेलन को सफलता अवश्यही प्राप्त होने की आशा होती है।

नागरी प्रचारिणी सभाओं के कर्त्तव्य।

(लेखक—पं० नन्दकुमार देवशर्मा)

भगवान की कृपा से इस समय चारों ओर हिन्दी की अच्छी चर्चा हो रही है। हर्ष है कि अब अनेक स्थानोंमें नागरी प्रचारिणी सभाएं स्थापित होगई हैं और होरही हैं। हिन्दी-भाषा-भाषी जो कुछ हिन्दी के लिये कर रहे हैं वह तो उनका कर्त्तव्य ही है। इस विषय में विशेष कहने की आवश्यकता ही क्या है? पर जिन भारत सन्तानों की मातृभाषा हिन्दी नहीं है उनमें से भी बहुत से व्यक्ति हिन्दी को अपना रहे हैं, नागरी प्रचार करने के लिये प्रयत्न कर रहे हैं और देवनागराक्षरों को अपनी लिपि बनाने को तैयार हैं। इस भांति आजकल हिन्दी की चर्चा होना केवल सन्तोषजनक ही नहीं किन्तु भविष्य में आशा जनक है। एक समय वह भी था जब लोग हिन्दी को हिन्दी भाषा कहने में संकुचित होते थे। हिन्दी गंवारों की भाषा समझी जाती थी पर समय ने पलटा खाया है और आज चारों ओर हिन्दी के विषय में आन्दोलन होरहा है। एक समय वह भी था कि उदार हृदय मैकॉले Macaulay तक को देशी भाषाएं शिक्षा का माध्यम बनाने के लिये अपूर्ण जंचती थी। पर आज बहुत सी देशी भाषाओं की अच्छी उन्नति है। यह सच है कि हमारी हिन्दी में आधुनिक समय में मराठी बङ्गाली आदि देशी भाषाओं के समान साहित्य सम्बन्धी ग्रन्थ नहीं बने हैं, परन्तु इस

में सन्देह नहीं कि अब हिन्दी भाषा की उन्नति के लिये विशेष प्रयत्न हो रहा है और नागरी प्रचारिणी सभाएं स्थापित हो रही हैं। परन्तु उनमें से बहुत सी अधिक कार्य नहीं कररही हैं। इस लिये आज हम विचारना चाहते हैं कि नागरीप्रचारिणी सभाओं का कर्त्तव्य क्या है?

सम्मेलन और नागरी प्रचारिणी सभाएं।

नागरी प्रचारिणी सभाओं के कर्त्तव्य लिखने के पूर्व हमें यहां एक बात लिख देनी चाहिये कि हिन्दी साहित्य सम्मेलन और नागरी प्रचारिणी सभाओं का परस्पर सम्बन्ध क्या है? यदि विचार पूर्वक देखा जाय तो सम्मेलन और नागरी प्रचारिणी सभाओं का सम्बन्ध घनिष्ट है। दोनों एक दूसरे की सहायता पर निर्भर हैं। प्रायः नागरी प्रचारिणी सभाओं के कार्य की सीमा एक स्थान विशेष और ज़िले तकही रहती है। सम्मेलन अपनी अन्तर्गत सभाओं की सहायता से दूर दूर तक अपने कर्त्तव्य पालन करने में समर्थ है। सम्मेलन और नागरी प्रचारिणी सभा दोनों का धुआं और अग्नि का सा सम्बन्ध है। धूप और छाया की भांति दोनों का साथ है। यह निश्चित सिद्धान्त है कि संसारमें जो कार्य संघ शक्ति से होता वह अकेले कदापि नहीं होसकता है। हिन्दुओं के गिरने का कारण संघशक्ति का अभाव है। सम्मेलन का प्रथम कार्य्य हिन्दी भाषा भाषियों और हिन्दी प्रेमियों में संघशक्ति का उत्पन्न करना है। कहावत है कि "अकेला चना भाड़ नहीं फांड़ सकता" है। इस कहावत के अनुसार ही केवल एक सभा अपने दस पांच सभासदों की सहायता से विशाल भारतवर्ष में कन्याकुमारी से लेकर हिमालय तक, और पेशावर से कलकत्ते तक नागरी के प्रचार करने में समर्थ नहीं होसकती है। इसके लिये संघशक्ति की आवश्यकता है। जिनकी मातृभाषा हिन्दी है, जो हिन्दी के प्रेमी हैं जो देश भर में एक लिपि और एक भाषा का प्रचार करना चाहते हैं। उनको चाहिंये मातृ भाषा का सम्मेलन रूपी जो झण्डा है, उस के नीचे आवें। इस दृष्टि से देखा जाय तो भारतवर्ष की समस्त नागरी प्रचारिणी सभाओं को सम्मेलन से सम्बन्ध करना चाहिये, जिससे समय समय पर सम्मेलन उनकी सहायता करे और वे

सम्मेलन की सहायता करें। जिससे हिन्दी भाषा भाषियों में संघ-शक्ति का प्रादुर्भाव हो।

अदालतों में नागरी की आवश्यकता।

संयुक्त प्रान्त में जो नागरीप्रचारणी सभाएं स्थापित होती हैं अथवा जहां कहीं नागरी प्रचारिणी सभाएं हैं उन सभाओं का सब से पहिले कर्त्तव्य अपने यहां की अदालतों में नागरी प्रचार कराना है। इतने दिनों से संयुक्त प्रान्त की अदालतों में नागरी के कागज़ दाखिल करने की आज्ञा होजाने पर भी नागरी के यथेष्ट कागज़ पत्र नहीं पहुंचते हैं। बहुतसे स्थान तो ऐसे हैं, जहां जब से नागरी के प्रचार की आज्ञा हुई है, तब से एक भी प्रार्थनापत्र नागरी में नहीं पहुंचा है। इसका कारण हिन्दू वकीलों की उदासीनता है। प्रायः बहुत से वकील ऐसे हैं जो प्रत्यक्ष में हिन्दी हितैषी बनते हैं पर अपना अदालती कार्य उर्दू में ही करते हैं। इसलिये संयुक्तप्रान्त के जिन स्थानों में नागरी प्रचारिणी सभाएं हैं, उनको चाहिये कि वे अपने यहाँ की अदालतों में नागरीप्रचार कराने की चेष्टा करें। उन्हें इस कार्य में सम्मेलन से भी सहायता मिलेगी। कतिपय नागरी प्रचारिणी सभाओं ने इस कार्य्य के करने का बीड़ा उठा भी रक्खा है और सम्मेलन भी यथाशक्ति सहायता देता है? परन्तु अभी तक यह कार्य सन्तोषजनक नहीं है।

इस कार्य्य को करने के लिये प्रत्येक नागरी प्रचारिणी सभा को उचित है कि वह अपने यहां वैतनिक लेखक (मुहर्रिर) रक्खें इस वैतनिक लेखक का कार्य यह हो कि वह हिन्दू वकीलों की सहायतासे सर्व साधारण के प्रार्थनापत्र नागरी में लिख कर अदालतों में दिया करे। वैतनिक लेखकों के अतिरिक्त नागरी प्रचारिणी सभाओं के सभासदों को चाहिये कि वे भी स्वयं अदालतों में हिन्दी में प्रार्थना पत्र पहुंचानेका उद्योग करें केवल वैतनिक लेखकों के भरोसे परही न रहकर, प्रति सप्ताह में वारी वारी से कुछ घण्टे निकाल कर स्वयं अपने नगर व ग्राम के रईसों और ज़मींदारों से मिलकर उनको नागरीमें अपना अदालती काम करनेके लिये उत्साहित करें।

संयुक्त प्रान्त के अतिरिक्त, विहार प्रान्त अथवा राजस्थान में जो नागरी प्रचारिणी सभाएं स्थापित हों, उनका भी इस विषय

में संयुक्तप्रान्त के समान ही कर्त्तव्य है। कौन नहीं जानता कि विहार प्रान्त की अदालतों में कैथी अक्षर प्रचलित है? इसमें सन्देह नहीं कि कैथी अक्षर नागरी लिपिका बदला हुआ रूप है। कैथी, नागरी के शार्ट हैण्ड के संकेत हैं परन्तु इस पर भी वहां भी अदालतों में कैथी के प्रचार होने से नागरी की जो हानि होरही है उसको कौन नहीं जानता? कई वर्ष हुए, जब कि इस लेखके लेखकने "विहारबन्धु"की सेवा करते हुए, अदालतोंमें कैथीके स्थानमें नागरीके प्रचार करनेका आन्दोलन किया था। तब विहारी भाई, इस आन्दोलन के विरोधी थे, परन्तु अब हमारे विहारी भाई, अदालतों में नागरी के स्थान में कैथी अक्षरों के प्रचलित होने से जो कठिनाइयां उपस्थित होरही हैं, उनको अनुभव करने लगे हैं। अतएव विहारप्रान्त की नागरी प्रचारिणी सभाओं को इस विषय में उद्योग करना चाहिये। और हर्ष है कि आरा की नागरी प्रचारिणी सभा इस विषय में प्रयत्न कर भी रही है।

राजस्थान के कितनेही राज्यों की अदालतों में उर्दू प्रचलित है। खेद है कि हिन्दू नरेशों के राज्य में हिन्दी का निरादर होरहा है भरतपुर जयपुरादि राज्यों में हिन्दी का प्रचलित न होना अत्यन्त दुःखदायी है। अतएव राजपूताने की नागरी प्रचारिणी सभाओं को इस विषय का प्रयत्न करना चाहिये, जिससे जिन राज्यों में नागरी का प्रचार नहीं है, उनमें नागरी का प्रचार हो।

चलते फिरते पुस्तकालय।

ऊपर हमने नागरी प्रचारिणी सभाओंका जो कुछ कर्तव्य लिखा है वह एक ऐसा कर्त्तव्य है जिसका फल दूसरोंके हाथहै। हम अब यहां पर नागरीप्रचारिणी सभाओं के उन कार्य्यों को लिखना चाहते हैं जिनकेकरने में दूसरों का मुंह न ताकना पड़े। उन कार्य्योंमें सबसे पहले चलते फिरते पुस्तकालयों का स्थापित करना है। चलते फिरते पुस्ताकालयों से (Circulating Libaries) से हमारा तात्पर्य यह है कि नागरी प्रचारिणी सभाओं को अपने यहां उत्तमोत्तम पुस्तकें सन्दूकों में रखकर अपने स्थानों के प्रत्येक मुहल्लों में नित्यप्रति नियत समय पर भेजनी चाहियें। जिन प

वारों की स्त्रियां या बच्चे पढ़ना चाहतेहों उनसे कुछ मासिक चन्दा लेकर पुस्तकें उन्हें पढ़ने को देनी चाहिये। स्मरण रहे कि पुस्तकें शिक्षाप्रदहों, अश्लील पुस्तकें न रखी जायं पुस्तकें ऐसी हों जो परिवारों में पढ़ने को दी जासकें, जिनके पढ़ने से सुकोमल बालकों देवियों के विचार उच्च और दृढ़ हों अपने यहां के मन्दिरों तथा और और मुख्य स्थानों में भी पुस्तकालय खोलने चाहियें।

रात्रि पाठिशालाएं

प्रायः देखा गया है कि अनेक मनुष्य बालकपन में पढ़ने नहीं पाते हैं बड़े होने पर उनकी इच्छा पढ़ की होती है पर दिन भर काम काज में लगे रहने के कारण वे पढ़ने नहीं सकते हैं। और बहुत से मनुष्य ऐसे होते हैं जिन्होंने बालकपन में हिन्दी नहीं पढ़ी अङ्गरेज़ी फ़ारसी भाषाओं में अच्छी योग्यता प्राप्त करली है परन्तु बड़े होने पर उनकी इच्छा हिन्दी पढ़ने की होती है पर वे अपनी आकांक्षा पूरी नहीं कर सकते हैं। दिन में उन्हें अपने परिवार पालन के लिये जीविका करनी पड़ती है। ऐसे व्यक्तियों को हिन्दी पढ़ाने के लिये नागरी प्रचारिणी सभाओं को अपने स्थानों में नागरी की रात्रि पाठशालाएं (Night schools)खोलने चाहियें। इस से हिन्दी का विशेष प्रचार होगा।

सुबोध व्याख्यान।

समय समय पर नागरी प्रचारिणी सभाओं को अपने यहाँ शिक्षाप्रद व्याख्यान कराने चाहियें। जहां तक हो ये व्याख्यान साहित्य सम्बन्धी हों इन व्याख्यानों में किसी के जी दुखाने वाली बातें न कहीं जावें। ऐतिहासिक वैज्ञानिक और स्वास्थ्य सम्बन्धी व्याख्यान होने चाहियें। यदि सभाएं अपने यहाँ मैजिक लालटेन द्वारा व्याख्यानों का प्रबन्ध कर सकें तो और भी अच्छी बात है। व्याख्यानों का प्रबन्ध भी चलते फिरते पुस्तकालयों के समान नगर के मुख्य मुख्य स्थानों तथा जिलेके अधीन गांवों में हो तो नागरी का विशेष प्रचार होगा।

नाट्य समिति और स्वेच्छा सेवक

जिन नागरी प्रचारिणी सभाओं की शक्ति अपने यहां नाट्य समिति स्थापित करनेकी हो उन्हें अपने यहां नाट्य समिति अवश्य

स्थापित करनी चाहिये। उन्हें अपने यहां हिन्दी के अच्छे अच्छे और शिक्षाप्रद नाटक खेलने चाहियें। नाटकों के अतिरिक्त प्रत्येक सभा को अपने यहांसे कुछ ऐसे व्याख्याता तैयार करने चाहियें जो समय समय पर हिन्दी का प्रचार किया करें। छोटे मोटे अवसरों पर भी बाहर से उपदेशक बुलाने के लिये मुंह न ताकना पड़े। स्थानिक व्याख्यातों द्वारा सुबोध व्याख्यानों का अच्छा प्रबन्ध हो सकता है।

जयन्ती मनाना

हिन्दी सभाओं के कार्य का एक अङ्ग हिन्दी के प्रसिद्ध लेखकों और कवियों की जयन्ती मनाना भी होना चाहिये सूरदास, तुलसीदास हरिश्चन्द्र, आदि कवि और लेखकों के जन्म दिवस पर सभाओं को अपना विशेष अधिवेशन करके जयन्ती मनानी चाहिये। जयन्ती के अवसरों पर सुन्दर कविताएँ, मनोहर निबन्ध और व्याख्यान होने चाहियें। पर साथही स्मरण रखना चाहिये कि जयन्ती का उद्देश्य केवल अच्छे व्याख्यान और निबन्धों में ही समाप्त न हो जाय—जयन्ती के अवसरों पर नागरीप्रचारिणी सभाओं को चारआने फण्ड का कमसे कम चन्दा खोलना चाहिये। इसमें यह नियम रखा जाय कि प्रत्येक सभासद कमसे कम चारआने अवश्यही दे और जो विशेष दें तो और भी अच्छा। इस फण्ड में जो कुछ धन संग्रह हो, वह सब सभाएं सम्मेलन के स्थायी कोष में भेजने की कृपा किया करें।

अब प्रश्न होता है कि सभाओं का संग्रह किया हुआ धन-"दाल भात में मूसलचन्द" के समान सम्मेलन लेनेवाला कौन होता है? ऐसे प्रश्न करने वाले सज्जनों से हमारा निवेदन है कि सम्मेलन यह धन अपने लिये नहीं चाहता है यह धन सम्मेलन सभाओं की सेवा में ही लगाना चाहता है। प्रत्येक सभाओं से सम्मेलन कार्यालय में हिन्दीभाषा में बोलने वाले उपदेशकों की मांग आया करती है अनेक सभाएँ उपदेशकों के अभाव के कारण वार्षिकोत्सव नहीं कर सकती हैं समय पर बहुत सभाओं की उपदेशकों की मांग पूरी नहीं होसकतीहै। इसका कारण यह है कि सम्मेलन की इतनी शक्ति नहीं है कि वह बहुत से उपदेशक रख सके। इस धन से इतने उपदेशक रखेजांय कि जिस समय जिस सभा को

उपदेशक की आवश्यकता हो, वह पूरी कीजाय। क्या हिन्दी प्रेमी इस ओर ध्यान देंगे ? वार्षिकोत्सवों में नागरीप्रचारिणी सभाओं को क्या क्या काम करना चाहिये इस विषय में हम अपने विचार किसी आगामी संख्या में पाठकोंकी भेंट करेंगे।

राजा गोपीचन्द की कथा।

(लेखक—श्रीयुक्त बाबू गिरिजा कुमार घोष)

हिन्दी भाषियों में छोटे बड़े स्त्री पुरुष सभी मनुष्य राजा गोपीचन्द के वैराग्य की कथा जानते हैं। परन्तु गोपीचन्द के गीतों को सुनकर कितने विद्वानों ने उनसे कुछ ऐतिहासिक सत्य निकालने की चेष्टा की है ? कुछ बंगाली ऐतिहासिकों ने गोपीचन्द के विषय में एक पुरानी पोथी खोज निकाली है, और वे दिखलाना चाहते हैं कि गोपीचन्द का स्थान शायद बंगाल में रहा होगा। ३५ वर्ष होगये, डाक्टर ग्रियर्सन ने एशियाटिक सुसाइटी से प्रकाशित जर्नल के ४७ वें खंड में "मयनामती को पंथि" नामक एक अति प्राचीन पुस्तक की चर्चा की है। श्रीयुत दिनेशचन्द्र सेन ने भी अपनी 'वङ्गभाषाओ साहित्य' में इसी पोथी की आलोचना की है। साहित्य-परिषत्-पत्रिका, भारतवर्ष, आदि कई मासिक पत्रों में भी बंगवासी विद्वानों ने इस पुरानी पोथी के विषय और उसके ऐतिहासिक स्थान निर्देश, कवित्व समालोचना आदि पर अपनी अपनी सम्मतियाँ प्रकाशित की हैं। ग्रियर्सन साहब और विश्वेश्वर भट्टाचार्य ने गोपीचन्द का स्थान रंगपुर में होना सम्भव समझा है। मौलवी अबदुल करीम ने मयनामती और गोपीचन्द का घर चटगां में बतलाया है। दीनेश बाबू इस पोथी की घटना को बौध्य-युग की बात कहते हैं। बा० बैकुण्ठनाथदत्त का कथन है कि राजा मानिकचन्द बौध्य था। न मालूम किसकी बात सत्य है। क्या यह गोपीचन्द कोई दूसरा गोपीचन्द था या हिन्दी में जिसके वैराग्ययोग की गाथा आज दिन गली गली गायी जाती हैं वही गोपीचन्द यह भी था बंगला की पोथी २०० वर्ष से भी पुरानी है। उसकी भाषा त्रिपुरा की भाषा से मिलती जुलती है। कथा में चाटिग्राम या चटगां, चन्द्रनाथ पर्वत आदिका पता चलता है।

यह त्रिपुरावाली पोथी भी गोपीचन्द के सन्यास सिद्ध योगी गुरू गोरखनाथ, रानियों का रोना धोना इत्यादि का वर्णन करती है। राजा माणिकचन्द और उनकी रानी मयनामतीके पुत्र गोविन्दचन्द्र या गोपीचन्द के संन्यासी होजाने के विषय पर पोथी रचित हुई है। यह कथा १० वर्ष से भी पुरानी बतलायी जाती है। कथा का संक्षेप यों होसकता है—राजा माणिकचन्द के परलोक वास के पीछे उसका पुत्र गोविन्दचन्द्र राजा हुआ और बहुत विलासी और अत्याचारी हो गया। उसकी चार रानियाँ थीं। सदा स्त्रियों के संग रहकर वह निस्तेज हो गया। इसी लिये रानी मयनामती बेटे को अनेक प्रकार के हितोपदेश देने लगी और भोगविलास और प्रजा पीडन आदि छुड़वाने का यत्न करवाने लगी। फिर रानी मयनामती ही ने अपने पुत्र को योग साधन कराके शारीरिक और मानसिक उन्नति तथा दीर्घ जीवन प्राप्त कराने के लिये भी चेष्टा की। रानी के उपदेशों में बहुत मूल्यवान बातें पायी जाती हैं—जैसा कि हिन्दी गीतों से भी सुने जाते हैं। गुरू गोरखनाथ के करामातों के भी वर्णन इस पोथी में मिलते हैं।

पोथी में लिखा है कि राजा गोपीचन्द बहुत प्रतापी राजा था, एक ही प्रकार से उसके झंडे के नीचे ७२ लाख प्यादे, ६२ वज़ीर या सेनापति, ६४ सिकदार या सहकारी सेनापति, ८२ हज़ार घुड़सवार और ६ हज़ार धनुकधारी सेना बटुर जाते थे। उसके ४० करद राजा भी थे।

यह गोपीचन्द कौन था हिन्दी गीतों का गोपीचन्द था या कोई दूसरा था, इसका निर्णय किसी हिन्दी रसिक ऐतिहासिक को करना चाहिये। हिन्दी बोलने वाले भी शायद गोपीचन्द को ढाके की ओर का रहने वाली ही बतलाते हैं। "मयनामती की पंथि" के विषय में "गृहस्थ" नामक वंगभाषा के मासिक पत्र में आजकल एक बहुत सुन्दर आलोचना प्रकाशित हो रही है।

प्राचीन बंगाल से हिन्दी का सादृश्य।

(लेखक—बाबू गिरिजाकुमार घोष)

यहां पर कुछ प्राचीन बंगला भाषा की कविता के दृष्टान्त उद्धृत किये जाते हैं। इन्हें पढ़ कर हिन्दी के पाठक आप ही

समझ सकेंगे कि वर्त्तमान बंगला का प्राचीन रूप बिलकुल हिन्दी ही था और समय के फेर से तथा दूरदेश के कारण परस्पर अन्तर पड़ जाने से हिन्दी बंगला के वर्त्तमान रूपों में भी बहुत अन्तर हो गया है, नहीं तो असल में दोनों भाषाएं एक ही मूल से निकली हैं।

विद्यापति कवि—एतहुं निदेश कहल तोहिं सुन्दरि,
जानि इह करह विधान।
हृदय-पुतलि तुहुं सो शून कलेवर
कवि विद्यापति भाण॥

विद्यापति मैथिल थे। परन्तु उस समय मिथिला बंगला में भेद नहीं था। बंगाली भी विद्यापति को अपना आदि कवि मानते हैं।

गोविन्ददास कवि—पेखलु अपरुब रामा।

कुटिल कटाख लाख शर वरिखन मन बांधल विनुदामा॥ ध्रुव॥
पहिल वयस धनि मुनि-मन-मोहिनि गजवर जिनि गति मन्दा।
कनकलता तनु वदन भान जनु ऊयल * पुनिमक चन्दा।
काँचा काञ्चन सांच भरि दौ कुच चुचुक मरकत शोभा।
कमल कोरे * जनु मधुकर शूतल † ताहिं बहल मन लोभा॥
विद्यापति पद मोहे उपदेशल राधा रसमय कन्दा।
गोविन्दास कह कैसन हेरल जो हेरि लागय धन्दा॥

गोविन्द दास—अंजन गंजन जग-जन-रंजन
जलद पुंज जिनि वरणा।
तरुणारुण-थल कमल दलारुण
मंजीर रंजित चरणा॥

जयदेव कवि के गीत गोविन्द के—

"ललित-लवङ्ग-लता परिशीलन-कोमल-मलय समीरे"।
"चन्दन-चर्च्चित-नील-कलेवर पीत वसन वन माली"।

---

* उदित हुआ *गोद में † सोया

तथा "रति सुखसारे गतमभिसारे मदन मनोहर वेश"। इत्यादि को कौन नहीं जानता ? ये कविताएं संस्कृत में होने पर भी अनेकांश में वंगला और हिन्दी की भी कविताएं कही जा सकती हैं।

गोविन्द दास की एक और कविता देखिए—

शारद चन्द, पवन मन्द।
विपिने भरल; कुसुम गन्ध।
फुल्ल मल्लिका, मालती यूथी।
मत्त-मधुकर-भोरणी।

हेर राति, ऐसन भाति।
श्याम मोहन, मदने माति।
मुरली गान, पंचम तान।
कुलवती-चित चोरणी॥

इत्यादि।

वर्त्तमान कवि रवीन्द्रनाथ ने प्राचीन वैष्णव कवि के पद माधुर्य्य से मोहित होकर उन्हीं के सुर में कैसा सुर मिला कर गाया है सुनिए—

गहन कुसम—कुंज माझे,
मृदुल मधुर—वंशी बाजे,
विसरि त्रास—लोक लाजे,
सजनि आओ आओ लो—इत्यादि॥

विद्या प्रचारिणी सभा का वार्षिकोत्सव।

राजस्थान में नागरी का प्रचार होते हुए देखकर किसको आनन्द न होगा ? चित्तोड़ की विद्या प्रचारणी सभा वहांके कुछ नागरी प्रेमियों और उत्साही भाइयों के पुरुषार्थ का फल है। हर्ष है कि गत आश्विन शु० ९ से ११ तक उक्त सभा का द्वित्तीय वार्षिकोत्सव था। कितने ही विद्वानों के नागरी प्रचार के सम्बन्ध में व्याख्यान हुए और सभा का वार्षिक विवरण सुनाया गया। आशा होती है कि यह सभा अपनी दिन दूनी और रात्रि चौगुनी उन्नति करेगी।

सम्मेलन का समय।

हमारे पाठकों को यह मालूम ही है कि सम्मेलन का समय बहुत निकट आ गया है, उसकी तिथियां मार्ग शीर्ष शुक्ला ६-१०-११ सं० १६७१ तदनुसार २६, २७, २८ नवम्बर है। लखनऊ में पंचम सम्मेलन के लिये तैय्यारियां भी अच्छी होरही हैं और आशा है कि सम्मेलन उर्दू के केन्द्र लखनऊ में बहुत ही सफलता के साथ होगा। आवश्यकता भी इस बात की है कि लखनऊ में इस बात की अच्छी तरह से घोषणा कीजाय कि हमारी जाति का राष्ट्रीय दृष्टि से भाषा और साहित्य की ओर क्या कर्तव्य है? इससे यह पूरी आशा होती है कि हिन्दी प्रेमी, समस्त भारतवर्ष से अच्छी संख्या में जुटेंगे और उन अङ्गरेजी और उर्दू की चमक से तिल मिलाये हुए अर्द्धशिक्षित लोगों को जो इस बात के कहने में अपनी बुद्धि और विद्या की सीमा समझते हैं कि हिन्दी एक ग्रामीण भाषा है और सभ्य समाज में आदर पाने योग्य नहीं है, अपने लेखों और व्याख्यानों द्वारा यह दिखलावें कि हिन्दी साहित्य में क्या रत्न हैं और हिन्दी भाषा कहां कहां तक जातीयता उत्पन्न करने में सहायक हो सकती है और हिन्दी संसार में इस समय क्या कार्य्य हो रहा है? इस समय आवश्यकता यह है कि प्रत्येक नगर अथवा ग्राम में जहां हिन्दी प्रेमियों की अच्छी संख्या होवें, सभाएं करना आरम्भ कर दी जावें और सर्व साधारण को सम्मेलन के उद्देश्यों से परिचित कराकर प्रतिनिधियों की अच्छी संख्या भेजने का प्रयत्न किया जाय।

इस समय यह देख कर कुछ आश्चर्य्य होता है कि दो एक ऐसे मित्रों ने, जिनकी सम्मति का हमको बहुत आदर है दो एक समाचार पत्रों में यह लिखा है कि सम्मेलन का समय हटा दिया जावे, कारण हटाने का जहां तक हम समझ सके हैं यह बतलाया गया है कि मुहर्रम की छुट्टियों में रेलवे कनसेशन नहीं मिलता और बड़े दिनों की छुट्टियों में मिलता है, और अब की बार यूरोपीय युद्ध के कारण व्यापार इत्यादि में इतनी गड़बड़ होगई है कि लोगों को कनसेशन न मिलने के कारण बहुत असुविधा होगी। बात तो यह सुनने में बहुत ठीक सी जान पड़ती है, किन्तु हमारा

निवेदन है कि हमारे वे मित्र जिन्होंने ऐसा प्रस्ताव किया है, इस विषय के संबन्ध में कुछ अन्य बातों का भी विचार करें।

सब से पहली बात तो यह है कि समय एक वार समिति से निश्चय होचुका है। स्थायी समिति के निश्चय को न मानना अपने नियमों का अपने आप निरादर करना है। बार बार इस प्रकार से समय बदलने से हिन्दी भाषा भाषी अन्य साहित्य सेवियों के सामने हास्यास्यपद होंगे। दूसरे साहित्य सेवी कहेंगे कि यह हिन्दी वाले खूब हैं जो कभी एक बात का एक मत होकर निर्णय नहीं करते हैं, कभी इनमें समय और कभी सभापति के निर्वाचन पर आपस में कलह मचाही करती है। इस लिये सभी हिन्दी प्रेमियों को स्थायी समिति के नियमों का आदर करना चाहिये।

समय बदलने के आन्दोलन करने के पूर्व देखना चाहिये कि स्थायी समिति ने समय का निर्णय किस प्रकार से किया था? उस समय जब यह प्रश्न किया गया था कि सम्मेलन किस समय हो, अधिकांश हिन्दी पत्रों ने और "भारत मित्र" ने भी मुहर्रम में ही सम्मेलन का अधिवेशन करने की सम्मति दी थी। अधिक बोट मुहर्रम के समय के पक्ष में ही आये थे तब स्थायी समिति ने सम्मेलन का समय मुहर्रम का निश्चय किया। स्मरण रखना चाहिये कि स्थायी समिति में भारतवर्ष के समस्त प्रान्तों के प्रतिनिधि हैं।

इससे पहले भी भागलपुर और कलकत्ते में मुहर्रमकी छुट्टियों में होचुका है। जो दलीलें इस समय मुहर्रम की छुट्टियों में सम्मेलन के न करने के सम्बन्ध में दी जा रही हैं वे उस समय भी दी जा सकती थीं।

किराये का प्रश्न अवश्य विचारणीय है किन्तु हमारी सम्मति में कार्य्य की सफलता, किराये के विचार के ऊपर है - कनसेशन की जो बात कही गई है, उसके सम्बन्ध में हमारा निवेदन है कि देखना चाहिये उस समय कितना किराया कम हो जाता है। कनसेशन यह होता है कि थर्ड क्लास के दोनों ओर का किराया देने पर इण्टर क्लास में मनुष्य जा सकते हैं और दूसरे और अव्वल दर्जों के लोगों को एक ओर का किराया देना पड़ता है। हिन्दी

साहित्य सेवी अधिकांश इतने धनी नहीं है कि वे दूसरे और पहले दरजे में यात्रा करते हों। कनसेशन का पूरा लाभ सेकण्ड और फर्स्ट क्लास वालोंको होता है किन्तु इण्टर और थर्ड क्लासके किराये में बहुत अन्तर नहीं है।

बड़े दिनों की छुट्टियों में सम्मेलन का अधिवेशन करने में कठिनताएं है। उन दिनों में कांग्रेस होती है कितनी ही जातीय कान्फरेंस होती हैं, संयुक्त प्रान्तकी आर्य प्रतिनिधि सभा के गुरुकुल का वार्षिकोत्सव होता है। आश्विन मास में विजयादशमी के समय का भी विरोध किया गया था तब विचारना यही है कि सम्मेलन किस समय किया जाय ?

सबसे बड़ी सम्मेलनके समय बदलनेमें यह कठिनता है कि स्वागत कारिणी सभा के हाथ में सम्मेलन के समय के परिवर्त्तन करने का अधिकार नहीं है। स्थायी समिति की बैठक के लिये कम से कम पन्द्रह दिन पहले नोटिस निकालना चाहिये, उसके लिये समय बहुत कम रह गया है। इस कारण हमारी सभी हिन्दी प्रेमियों और साहित्य सेवियों से प्रार्थना है कि वे समय की असुविधा का विचार न करके अपने प्यारे सम्मेलन में सम्मिलित हों और सदा के लिये इस असुविधा को दूर करने का विचार करें। आशा है कि समस्त हिन्दी प्रेमी विघ्न बाधाओं को दूर करके इस वार सम्मेलन में पधारने की कृपा करेंगे।

पुस्तकों की प्राप्ति स्वीकार ।

[गताङ्क से आगे]

२२८—प्राणघातक माला	पं० कृष्णकान्त मालवीय	अभ्युदय प्रेस	॥=)
२२९—हरि अगोचर प्रकाश	बाबू हरिदास खंडेलवाल	,,	१)
२३०—कांग्रेस चरितावली	ठाकुर सूर्य्यकुमार वर्मा	,,	१)
२३१—श्रीरामलीला नाटक	पं० रामदत्त ज्योतिर्वेद	,,	१)
२३२—हर के हाथ निवाह		,,	-)
२३३—प्रियतम	पं० कृष्णकान्त मालवीय	,,	।)
२३४—माणिक आदर्श	बाबू हरिदास माणिक		।)
२३५—धर्मनिर्णय	बाबू हरिदास खंडेलवाल	अभ्युदय प्रेस	१)
२३६—गूढ़ विषयों पर सरल विचार	पं० सोमेश्वरदत्त सुकुल	,,	।=)
२३७—हिन्दी और नागरी विचार	बाबू मिश्रीलाल बी०ए	,,	-)॥
२३८—गौ गोहार	पं० विश्वनाथ ब्रह्मचारी	,,	
२३९—सनातन धर्मोपदेश	सनातनधर्म सभा-प्रयाग	,,	
२४०—मर्यादा	बाबू हरिदास खंडेलवाल	,,	=)
२४१—व्यायाम	श्रीरामखिलावन	,,	-)॥
२४२—बनाष्टक	पं० श्रीधर पाठक		
२४३—ऊजड़गाम	,, ,,		
२४४—काश्मीर सुखमा	,, ,,		

तरुण-भारत ग्रन्थावली

नागपुर की "हिन्दी-ग्रन्थ-प्रकाशक-मण्डली" के बन्द होने के बाद से ही (जो कि हिन्दी की अपने ढंग की पहली ग्रन्थ प्रकाशक मंडली थी) मेरी इच्छा थी कि हिन्दी में ऐसा उद्देश्य लेकर ग्रन्थ प्रकाशन शुरू किया जाय जो भारत के तरुणों को योग्य मार्ग दिखला सके, उनको अपने देश की सेवा करने के योग्य विचारों में प्रवृत्त करे। अब हिन्दी के सौभाग्य से कई जगह ग्रन्थ-प्रकाशन का कार्य प्रारम्भ हुआ है और सब लोग साहित्य वृद्धि की दृष्टि से अच्छा कार्य कर रहे हैं। यह देख कर मेरी उपर्युक्त इच्छा फिर एक बार स्फुरित हुई है और हमने अपने नौनिहालोंकी सेवा करने का निश्चय किया है। इस ग्रन्थावली में ऐतिहासिक, चरित्र सम्बन्धी और नीति के तात्विक ग्रन्थ प्रकाशित होंगे। ग्रन्थों का मूल्य जहां तक हो सकेगा कम रखा जायगा विचारों का प्रचार करना ही इसका उद्देश्य होगा। पांच सौ ग्राहक होजाने पर पहला ग्रन्थ निकलेगा। कृपया अपना नाम पता भेज दीजिये मुझे पूर्ण आशा है कि भारतीय तरुण दो तीन मास में यह संख्या पूरी कर देंगे।

मेरा पता

लक्ष्मीधर वाजपेयी

मुज़फ़्फ़रखां का बाग आगरा

नीति दर्शन

" एक पन्थ दो काज "

लीजिये, पढ़िये बाबू राधामोहन गोकुलजीने नीति दर्शन में नीति सम्बन्धी अनेक विषयों का समावेश किया है लीजिये, ख़रीदिये, पुण्य संचय कीजिये, क्योंकि इसका मूल्य पैसा फण्ड में जमा होगा, मूल्य ।॥)

स्वामी सत्यदेव जी

रचित पुस्तकें

पढ़िये ! लीजिये !! पढ़िये !!!

मनुष्य के अधिकार

(मूल्य पांच आने)

सत्य निबन्धावली

(मूल्य आठ आने)

यदि आप अपनी सन्तान को हिन्दी प्रेमी, देश भक्त और सच्चरित्र बनाया चाहते हैं तो इन पुस्तकों को पढ़िये ।

हिन्दी का सन्देश

(मूल्यएक आना)

छप गया ! लीजिये । स्वामी सत्यदेव जी का यह प्रसिद्ध व्याख्यान छप कर तय्यार है । इकट्ठी पुस्तकें मंगाइये । दस प्रतियों से कम का बी० पी० नहीं भेजा जाता ।

निवेदक—

मंत्री, 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन" प्रयाग

"सम्मेलन पत्रिका" के नियम।

१—"सम्मेलन पत्रिका" हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन कार्य्यालय, प्रयाग, से प्रतिमास प्रकाशित होगी।

२—इसका वार्षिक मूल्य १) इसलिये रक्खा गया है कि सर्व-साधारण इसके ग्राहक होसकें।

३—इस समय इसमें प्रतिमास कुल २४ पृष्ठ ही रहा करेंगे। परन्तु आवश्यकता होने पर कभी कभी पृष्ठ संख्या बढ़ा भी दी जाया करेगी। आगे चलकर यदि इसकी सेवा साहित्यसेवियों को रुचिकर हो, और इसके ग्राहकों की यथोचित संख्या होजाय तो यही पत्रिका अधिकतर पृष्ठ-संख्याओं में और अधिकतर उन्नत दशा में प्रकाशित की जायगी।

४—इसके प्रबन्ध-विभाग के पत्र—ग्राहक बनने के लिये आवेदन, विज्ञापन-सम्बन्धी पत्र, मनीआर्डर इत्यादि—मन्त्री, साहित्य-सम्मेलन कार्य्यालय, जानसेनगंज प्रयाग, के नाम भेजे जाने चाहियें।

५—सम्पादक के नाम की चिट्ठियां, बदले के समाचार-पत्रादि समालोचना की पुस्तकें, पत्रिका में प्रकाशित होने के लिये लेखादि भी ऊपर ही के पते से भेजे जाने चाहियें।

विज्ञापनदाताओं के लिये नियम।

१—"सम्मेलनपत्रिका" में अश्लील विज्ञापनों को स्थान नहीं मिलेगा।

२—विज्ञापन साधारणतः पूरे और आधे पृष्ठ से कम स्थान के लिये स्वीकृत न होंगे।

१—पृष्ठ का मासिक मूल्य ... ४॥) होगा

२—आधे पृष्ठ का ... २॥) होगा

३—जो लोग १२ संख्याओं में विज्ञापन छपवाने का मूल्य एक साथ भेज देंगे, उनका विज्ञापन एक संख्या में बिना मूल्य छाप दिया जायगा, अर्थात् १२ की जगह १३ बार उनका विज्ञापन छापा जायगा।

४—किसी दशा में पेशगी मूल्य बिना मिले कोई भी विज्ञापन नहीं छापा जायगा।

५—विक्रयार्थ पुस्तकों के विज्ञापनों पर ऊपर दिये हुए मूल्य से कम मूल्य न लिया जायगा।

१ पृष्ठ का मूल्य १ मास के लिये ३॥) और

आधे " " २) होगा।

६—अदालतों में लेखकों की नौकरी, अध्यापक-अध्यापिकाओं की नौकरी, इत्यादि हिन्दी-प्रचारार्थ नौकरियों के विज्ञापन एक बार बिना मूल्य छाप दिये जायंगे। दूसरी बार और अधिकबार के लिये ऐसे विज्ञापनों का मूल्य केवल १) प्रतिमास होगा। वि[illegible] ८ पंक्तियों से अधिक न हो।

मन्त्री, हि० सा० स० कार्य्यालय, प्रयाग।

हिन्दी साहित्यसम्मेलन से बाबू नरेन्द्र नरायण सिंह द्वारा प्रकाशित।

Reg. No. A629

सम्मेलन पत्रिका

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की

मुखपत्रिका।

भाग २ } श्रावण संवत् १९७२ { अङ्क ११

विषय सूची।

वार्षिक मूल्य १)] [एक संख्या =)

पं० ओंकारनाथ बाजपेयी के प्रबन्ध से ओंकार प्रेस प्रयाग में छपा।

सम्मेलन के उद्देश्य

(१) हिन्दी साहित्य के अङ्गों की उन्नति का प्रयत्न करना।

(२) देवनागरी लिपि का देश भर में प्रचार करना और देश व्यापी व्यवहारों और कार्यों के सुलभ करने के लिये हिन्दी भाषा को राष्ट्र भाषा बनाने का प्रयत्न करना।

(३) हिन्दी को सुगम, मनोरम और लाभदायक बनाने के लिये समय समय पर उसकी शैली के संशोधन और उसकी त्रुटियों और अभावों के दूर करने का प्रयत्न करना।

(४) सरकार, देश राज्यों, पाठशालाओं, कालेजों, विश्व विद्यालयों और अन्य संस्थाओं, समाजों, जनसमूहों तथा व्यापार ज़मींदार और अदालतों के कार्यों में देवनागरी लिपि और हिन्दी भाषा के प्रचार का उद्योग करते रहना।

(५) हिन्दी के ग्रन्थकारों, लेखकों, पत्रसंपादकों, प्रचारकों और सहायकों को समय समय पर उत्साहित करने के लिये पारि-तोषिक, प्रशंसापत्र, पदक, उपाधि आदि से सम्मानित करना।

(६) उच्च-शिक्षा प्राप्त युवकों में हिन्दी का अनुराग उत्पन्न करने और बढ़ाने के लिये प्रयत्न करना।

(७) जहां आवश्यकता समझा जाय वहां पाठशाला, समिति तथा पुस्तकालय स्थापित करने और कराने का उद्योग करना तथा इस प्रकार की वर्त्तमान संस्थाओं की सहायता करना।

(८) हिन्दी-साहित्य के विद्वानों को तयार करने के लिये हिन्दी की उच्च परीक्षाएं लेने का प्रबन्ध करना।

(९) हिन्दी भाषा के साहित्य की वृद्धि के लिये उपयोगी पुस्तकें तैयार करना।

(१०) हिन्दी-साहित्य सम्मेलन के उद्देश्यों की सिद्धि और सफलता के लिए अन्य जो उपाय आवश्यक और उपयुक्त समझे जांय उन्हें काम में लाना।

सम्मेलन-पत्रिका का उद्देश्य

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के उद्देश्यों की पूर्ति में सहायता करना, और साहित्य-प्रेमियों से इसीके लिये उपदेश लेना।

सम्मेलनपत्रिका।

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की कार्यकारिणी समिति की ओर से प्रतिमास प्रकाशित।

भाग १ } श्रावण संवत् १९७१ { अङ्क ११

हिन्दी संसार

हिन्दी पर वज्रपात

लिखते हुए, हृदय विदीर्ण होता है कि श्रावण मास 'हिन्दी के लिये, हिन्दी भाषा भाषियों के लिये बहुत बुरा रहा। यह हमारा दुर्भाग्य है कि इस मास में हिन्दी के कई कवि और लेखकों की वियोग वेदना सहन करनी पड़ी है। कविवर मुरारदानजी और अजमेर के मुन्शी समर्थदानजी की आकस्मिक मृत्यु हो जाने से, राजपूताने ने दो हिन्दी साहित्य सेवी खोदिये। कविवर मुरारदीनजी ने यशोवन्तभूषण काव्य लिख कर राजस्थान जैसी मरुभूमि में साहित्य प्रेम का अच्छा परिचय दिया था। मुरारदानजी, हिन्दी के अच्छे कवि थे, आपकी कविता से प्रसन्न होकर तत्कालीन जोधपुर नरेश ने आपका अच्छा सम्मान किया था।

मुन्शी समर्थदान जी, हिन्दी के पुराने सुलेखक थे। लगभग २४। २५ वर्ष हुए, उन्होंने अजमेर से "राजस्थान" नामक हिन्दी का एक साप्ताहिक समाचार पत्र निकाला था। राजस्थान अजमेर जैसे स्थान से निकलने पर भी अच्छा सम्पादित होता था। पहिले पहिल "राजस्थान" साप्ताहिक रहा, पीछे अर्द्ध साप्ताहिक हुआ। सन् १९०४ में रूस, जापान के युद्ध के समय उक्त मुन्शीजी ने "राजस्थान समाचार" को दैनिक कर दिया था। सच पूछिये तो दैनिक होने के कारण ही "राजस्थान समाचार" वन्द होगया। क्योंकि

उन दिनों हिन्दी में दैनिक पत्रके पाठकों का अभाव था। "राजस्थान समाचार" निकालने के अतिरिक्त मुन्शी समर्थदान जी ने हिन्दी में कई अच्छी अच्छी पुस्तकें लिखी थीं और अन्य लेखकों की पुस्तकें भी प्रकाशित की थीं। प्रसिद्ध भारतहितैषी सर हेनरी काटन की "न्यू इण्डिया" का हिन्दी अनुवाद आपने ही प्रकाशित किया था। परमात्मा इन दोनों हिन्दी प्रेमियों की आत्मा को शान्ति दें और इन के कुटुम्बियों को इस विपत्ति में धैर्य प्रदान करें।

पण्डित बालकृष्ण भट्ट

कविवर मुरारीदान जी और मुन्शी समर्थदान जी के शोक को भूलने ही नहीं पाये थे कि पण्डित बालकृष्णभट्ट जी की मृत्यु ने घाव पर नमक छिड़कने का कार्य किया। हिन्दी का एक स्तम्भ टूट गया। पण्डित बालकृष्ण जी भट्ट की मृत्यु से हिन्दी की अकथनीय हानि हुई है और ऐसी हानि हुई है कि जिसके पूर्ण होने की शीघ्र आशा नहीं है। हिन्दी भट्टजी की सदैव ऋणी रहेगी। भट्ट जी ने हिन्दी को उस समय अपनाया था, जब कोई इस को पूछता भी न था। उस समय अन्य भाषा भाषी ही नहीं उच्चशिक्षा प्राप्त हिन्दी भाषा भाषी तक हिन्दी को गंवारू भाषा समझते थे। संस्कृत के पण्डित हिन्दी को उपेक्षा दृष्टि से देखते थे। केवल भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र अपने इने गिने साथियों के साथ, हिन्दी की सेवा करने को प्रवृत्त हुए थे। जिन में से एक भट्ट जी भी थे। भट्टजी का हिन्दी प्रेम इतना बढ़ा हुआ था कि अपना सर्वस्व हिन्दी के लिये ही अर्पण कर दिया। जिन दिनों उन्होंने "हिन्दी प्रदीप" निकाला था, उन दिनों हिन्दी पाठकों की इतनी संख्या नहीं थी, जितनी अब है। इस लिये उनको प्रतिवर्ष घाटा सहन करना पड़ता था पर वे इस से नहीं उकताये, जो कुछ उपार्जन करके धन लाते थे, वह "हिन्दी प्रदीप" की सहर्ष भेंट कर देते थे। आर्थिक हानि सहन करके भी २५। २६ वर्ष तक 'हिन्दी प्रदीप" निकालते रहे, अन्त में नये प्रेस एक्ट के कारण "हिन्दी प्रदीप" बन्द हो गया।

उनका समस्त जीवन हिन्दी की सेवा में ही व्यतीत हुआ। बड़े बड़े संकट आजाने पर भी उनका हिन्दी से प्रेम दूर नहीं हुआ। चक्षु विहीन होजाने पर, मृत्यु के निकट होने पर भी हिन्दी के प्रति

उनका प्रेम घटा नहीं। भट्ट जी का चरित्र हिन्दी प्रेम और स्वदेश प्रेम अनुकरणीय था। हमारी भट्टजी के कुटुम्बियों के प्रति इस विपत्ति में हार्दिक सहानुभूति है।

पाटलि पुत्र।

बङ्गाल से विहार प्रान्त के अलग होते ही, विहार प्रान्त में जागृति होने लग गई है। इस जागृतिकाही फल है कि वहां से पाटलि पुत्र नामक एक नवीन साप्ताहिक पत्र निकलने लगा है। इस पत्र के सम्पादक, बाबू काशी प्रसाद जायसवाल एम० ए० वारिस्टर एट-ला हैं। पत्र का सम्पादन अच्छा होता है परन्तु इसकी भाषा कुछ क्लिष्ट होती है। विहार प्रान्त में क्लिष्ट भाषा लिखने की कुछ चाल सी होगई है, कदाचित् इसी कारण इस पत्र की भाषा ऐसी रक्खी गई है। जो कुछ हो हम इस पत्र का हृदय से स्वागत करते हैं और हार्दिक लालसा है कि इसकी दिनदूनी और रात्रि चौगुनी उन्नति हो।

निर्बल सेवक।

हमारे बहुत से पाठकों से, वृन्दावन, प्रेम-महाविद्यालय के संस्थापक, श्रीमान् कुँवर महेन्द्र प्रताप सिंहजी का नाम अविदित नहीं है। उक्त कुँवर साहब इस देश के उन नररत्नों में से है, जिन्होंने अपना तन, मन, धन भारतमाता की सेवा में समर्पण कर रक्खा है। आपके प्रेम-महाविद्यालय में शिक्षा का मध्यम हिन्दी है ही, परन्तु हर्ष का विषय है कि आपने देहरादून से "निर्बल सेवक" नामक एक साप्ताहिक पत्र निकाला है। वास्तव में "निर्बल सेवक" निर्बलों की सेवा कर रहा है। इसके लेख जोशीले भावपूर्ण और सर्वसाधारण को मुग्ध करने वाले होते हैं। प्रसंगवश एक प्रार्थना उक्त कुँवर साहब से है कि "निर्बल सेवक" का हिन्दी संस्करण ही रहता तो अच्छा होता, इसके उर्दू संस्करण की आवश्यकता नहीं है। उर्दू पढ़ने वाले भी इसके सहारे हिन्दी सीख सकेंगे। क्या आशा की जासकती है कि इस प्रार्थना पर ध्यान दिया जावेगा?

प्रभात ।

पंजाब की स्वाधीनता अन्य प्रान्तों से बहुत पीछे नष्ट हुई है जिससे पंजावियों का देशहित सम्बन्धी अन्य कार्य्य में अन्य प्रान्त वालों से विशेष उत्साह बढ़ा हुआ है। पर दुःख के साथ कहना पड़ता है कि अभी तक पंजाब वाले मातृभाषा की उपासना के महत्व को नहीं समझे हैं। यही कारण है कि पंजाब में हिन्दी भाषा का जितना प्रचार होना चाहिये था, उतना नहीं हुआ है। हर्ष का स्थल है कि अब पंजाब की राजधानी लाहौर से "प्रभात" नाम का साप्ताहिक पत्र हिन्दी में निकलने लगा है, इसके सम्पादक—गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक, पं० यज्ञदत्त विद्यालङ्कार हैं। पत्र का सम्पादन अच्छा होता है, इस पत्र में प्रत्येक देश सम्बन्धी विषयों तथा सामयिक घटनाओं पर निर्भीक स्वतन्त्र तथा अत्युच्च भाव प्रकट किये जाते हैं। पत्र होनहार है। यदि इसकी भाषा के सुधार की ओर ध्यान दिया जाय तो "सोने में सुगन्ध" होजाय। इससे पूर्व पंजाब से हिन्दी के कई समाचार पत्र निकले थे और मृत्यु को प्राप्त होगये, थे, अतएव इस बार आशा की जाती है कि पंजाब के निवासी इस पत्र की उन्नति की ओर विशेष ध्यान देंगे।

प्रचार कैसे हो?

यह निश्चित सिद्धान्त है कि विना स्वार्थ त्याग किये हुए, कभी किसी जाति, समाज तथा देश की उन्नति नहीं होती है जो जाति अपनी उन्नति चाहती है, उसको चाहिये पहले उन्नति के लिये स्वार्थत्याग का पाठ पढ़े। आजकल हिन्दी भाषा की उन्नति के लिये बहुत से उद्योग किये जा रहे हैं और परमात्मा की कृपा से हिन्दी की पहले से अधिक उन्नति होरही है परन्तु इस समय हिन्दी भाषा के प्रचार के लिये स्वार्थत्यागी उपदेशकों की विशेष आवश्यकता है। ये उपदेशक ऐसे हों जो गांव, गांव नगर नगर में घूम कर हिन्दी का सन्देश पहुंचाने की चेष्टा करें। यह बात भी नहीं है कि हिन्दी में अच्छे व्याख्यान देनेवाले उपदेशक न हों, भगवान की कृपा से हिन्दी में व्याख्यान देनेवालों की कमी नहीं है। आर्य्यसमाज और भारत-धर्म-महामण्डल के जितने

उपदेशक हैं प्रायः सभी हिन्दी भाषा में ही व्याख्यान देते हैं। इन उपदेशकों को चाहिये जहां कहीं अपने धार्मिक सिद्धान्तों पर व्याख्यान दें वहां भारत की भावी राष्ट्र भाषा हिन्दी के प्रचार के सम्बन्ध में भी एक व्याख्यान दिया करें। यों सहज में ही "हिन्दी का सन्देश" अगणित नर नारियों के कान में पहुंच जावेगा आर्य्य समाज तथा भारत-धर्म-महामण्डल के उपदेशकों के अतिरिक्त अङ्गरेज़ी की उच्च शिक्षा प्राप्त हमारे नवयुवक मित्र तथा विद्यार्थियों को भी चाहिये कि छुट्टियों में जहां कहीं वे सैर करने जाते हैं, वहां अन्य कार्य के साथ ही नागरी प्रचार की भी चेष्टा किया करें। आशा है कि उपदेशकगण तथा अन्य हिन्दी-भाषा-भाषी हमारे इस प्रस्ताव के अनुसार कार्य्य करने की चेष्टा करेंगे।

जिला सम्मेलन।

भगवान श्री कृष्णचन्द्र की जन्म भूमि व्रजधाम में उर्दू के प्रतिद्वन्दी न होने पर भी हिन्दी का उतना प्रचार नहीं है जितना होना चाहिये था। हर्ष का स्थल है कि हिन्दी प्रेमियों के सुपरिचित, श्रीयुक्त श्री राधाचरण गोस्वामीजी के उद्योग से इस बार श्रावण मास के अन्त में वृन्दावन (मथुरा) में जिला, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन बड़ी धूमधाम से हुआ। पहले दिन "प्रेम" के सम्पादक और हिन्दी के पुराने लेखक पं० रुद्रदत्तजी ने और दूसरे दिन, प्रसिद्ध हिन्दी लेखक पं० किशोरीलाल गोस्वामी ने सभापति का आसन ग्रहण किया था। अनेक आवश्यक विषयों पर प्रस्ताव पास हुए। हमें मालूम नहीं हुआ कि इस सम्मेलन के सञ्चालकों ने मथुरा-वृन्दावन के जो वकील अदालतों में प्रार्थना उर्दू में ही दिलवाते हैं, उनके सम्बन्ध में कोई प्रस्ताव निश्चित किया या नहीं। शोक के साथ कहना पड़ता है कि मथुरा में कोई भी वकील ऐसा नहीं है जो उर्दू के स्थान में नागरी काम में लाता हो। क्या अच्छा होता कि यह जिला सम्मेलन अपने ज़िले की अदालतों में नागरी प्रचार का कोई स्थायी प्रबन्ध करता।

हिन्दी सामायिक पत्रों की दुर्दशा के कुछ कारण।

[लेखक—लाला पार्वती नन्दन ।]

वैशाख ज्येष्ठ की तपती धूप से जली हुई धरती पर आषाढ़ की वारिधारा पड़तेही जिस प्रकार सब स्थानों में हरियाली छा जाती है, वृक्षावली नवीन धोये हुए पत्रसज्जा से सज्जित होकर अपनी सौन्दर्य छटा से नयनों को मोहने लगती हैं, सूखे हुए पुष्प पादप शीतल जलधारा से सिञ्चित होकर विविधि वर्णों से रंगे हुए मनोहर सुगन्ध भरे फूलों की डाली उपहार ले लेकर संसार के सम्मुख खड़े होजाते हैं, सारा संसार आनन्द से फूलकर अपने पुराने दुःख भूल कर भविष्य की ओर आशान्वित होकर टकटकी बांधकर निहारने लगता है, यही दशा इस समय यदि हिन्दी साहित्य जगत् की कही जावे तो शायद अत्युक्ति न होगी। हिन्दी की पुष्पवाटिका में आषाढ़ की वारिधारा पड़गई, साथही साथ जिधर देखिये उधर ही नवीन पुस्तकें, नवीन समाचारपत्रों के आविर्भाव की भरमार मच गयी। वर्षारम्भ के साथ २ 'घास कांटे' अनावश्यक वनस्पतियों के आविर्भाव से जिस प्रकार पुराने और उपयोगी पुष्पपादपों का प्राण संचारक भूरस व्यर्थ नष्ट हुआ करता है, चतुरमाली वाटिका की रक्षा के लिये अनावश्यक और शोभा नाश करनेवाले वनस्पतियों—'घास कांटों' पर खुर्पी चलाये बिना जगत् का कल्याण नहीं समझता उसी प्रकार हिन्दी भाषा के कुछ हितैषी चिन्ताशील सज्जनों के अन्तःकरण में हिन्दी साहित्य की रक्षा की चिन्ता उभड़ने लगी है। आज हम केवल सामयिक पत्र पत्रिकाओं ही के विषय में कुछ कहना चाहते हैं। सच पूछिए, ध्यान, कर टुक देखिये, तो जान पड़ता है कि हिन्दी के सामयिक पत्रों की दशा अच्छी नहीं है। कोई भी पत्र संचालक ऐसा नहीं जो बराबर हानि उठाते रहने की नालिश नहीं करता। दो चार इने गिने पत्र पत्रिकाओं के सिवाय किसी की भी दशा अच्छी नहीं। इन विशेष उन्नतिशील इने गिने पत्र पत्रिकाओं की भी जितनी उन्नति होनी चाहिये वह नहीं होने पाती। यह सब क्यों? ऐसी ऐसी दशा क्यों हुई? क्या इसके दूर करने का कुछ उपाय नहीं होसकता? सम्पूर्ण नहीं तो कुछ उपाय अवश्य

होसकता है, परन्तु उसका सुननेवाला कौन है? कहने वाले पर उलटे गालियों की बौछार पड़ने लगती है। अस्तु बहुत कहना अनावश्यक जान हमारी यही प्रार्थना है कि जोलोग हिन्दी भाषा के सच्चे हितैषी हैं वे इस ओर अवश्य ध्यान दें। जिन पुराने पत्रों ने देश के लिए अच्छा परिश्रम किया है, या जो नवीन पत्र होनहार जान पड़ते हैं उनकी रक्षा का उद्योग सब को करना चाहिए। हम एक बार कहचुके थे, फिर भी कहने का साहस करते हैं उपयोगी पत्रों के प्राण संचारक रस को सोख लेने वाले पत्रों से उदासीनता दिखाना हम लोगों का आवश्यक कर्त्तव्य है।

हिन्दी भाषा के अभ्युत्थान का यह समय है। चारों ओर हिन्दी रसिकों के हृदयमें उमंग भर रही है। इसी उमंग के फल से प्रायः सभी हिन्दी रसिक अपना अपना स्वतंत्र पत्र निकालने की चेष्टा करने लगे हैं हम इस उमंग के फलीभूत होने के विरोधी नहीं। यह उमंग जितना बढ़े उतना हो अच्छा। परंतु यदि प्रत्येक हिन्दी लेखक अपनी खिचड़ी आपही पकाने लगे तो हमारी स्वल्प बुद्धि में उससे अधिक लाभ की सम्भावना नहीं। यदि येही सज्जन मिलकर एक एक केन्द्र में सम्मिलित शक्ति से कार्य्य करने का उद्योग करें तो हमारी समझ में हिन्दी के लिये अधिक लाभकारी कार्य्य होसकता है। संयुक्त शक्ति से छोटे २ निकम्मे पत्रों की पूंजी एकत्र होकर अधिक तर उत्तम छापने के उपादान संग्रह हो सकते हैं,–कई अल्प लाभदायक पत्रों के बदले एक अधिकतर शक्तिशाली पत्र का संचालन होसकता है। आज कल योग्यसम्पादक कम मिलतेहैं हिन्दी में सभी लोग अपने कोसम्पादक समझने लगते हैं, या कभी कभी सम्पादक के अभाव से संचालकगण विवश होकर जिस किसी के गले में सम्पादकीय ढोल टांग देते हैं, वह नवीन सम्पादक उल्टा सीधा जैसे बने वैसे ही ढोल पीट कर अपना कार्य निबाहे जाता है। लोग चाहे उसके पत्र को आदर की दृष्टि से देखें चाहे न देखें, परन्तु पत्र निकालना अवश्य चाहिये हमको मालूम है कि इस विषय पर हमसे बहुतेरे सज्जन सहमत नहीं होंगे, परन्तु ऐसे पत्र संचालकों की नीति से साहित्य को अधिक लाभ की सम्भावना नहीं और उनका परिश्रम व्यर्थ है। उनका पत्र नहीं चल सकता, यह बात कुछ दिनों में आपही उनको विदित हो जाती है। आजकल श्रेष्ठतम ही का आदर होता है। ऐसी

दशा में जैसेतैसे निर्जीव स्वल्पायु पत्र के लिये परिश्रम करना "ऊपरे वपनम् यथा"।

हिन्दी संसार में लोग पूंजी की बात बिलकुल तुच्छ समझते हैं। परन्तु बिना पूंजी के—बिना यथोचित पूंजी के—कभी कोई व्यापार नहीं चल सकता। हिन्दी में पत्र संचालन व्यापार की दृष्टि से नहीं किया जाता यदि व्यापार की दृष्टि से पत्र संचालन किया जावे, उसके लिये सोच समझ कर पूरी पूंजी लगायी जावे, और सम्पादक तथा प्रबन्ध विभाग भी यथोचित रीति से परिचालित हो, तो कोई कारण नहीं कि उस पत्र का आदर न हो और संचालक व्यापारी को कुछ लाभ भी न मिले। बहुधा पूंजी की बात लोग बिलकुल भूल जाते हैं, या थोड़ी पूंजी से काय्यारम्भ कर भाग्य और उद्यम के भरोसे भविष्योन्नति की आशा लगाये रहते हैं। कहने को कोई कुछ कहे हम अनुभव की बात कहते हैं। हिन्दी संसार के लगभग सभी पत्रों का कुछ न कुछ समाचार हम को मालूम है—थोड़ी पूंजी वाले को बहुत तरसना पड़ता है, बहुधा हाथ मल मल कर रह जाना पड़ता है। कई प्रतिभाशाली तथा मातृभाषा की बहुत उत्तम सेवा करने वाले पत्र वा पत्रिकाओं की बात हम कह सकते हैं, यदि इस समय उनके संचालकों के पास समुचित पूंजी रहती तो उनके पत्रों की दशा बहुत अच्छी होजाती उनका आदर और भी अधिक होने लगता,—संचालक बेचारे के परिश्रम और उद्वेग घट जाते तो वह पत्र की ओर अधिकतर ध्यान दे सकता।

हम कह चुके हैं कि हिन्दी पत्रों का संचालन व्यापारी रीति से नहीं होता। परन्तु खेद से कहना पड़ता है कि सभी संचालकों के हृदय निस्स्वार्थ नहीं हैं। हमको भली प्रकार मालूम है कि कुछ लोग अपने रद्दी पत्र की उन्नति करने के बहाने उदारचित्त देश हितैषी धनियों से धनकी भिक्षा मांग २ कर अपनी घर वाली के गहने गढ़ाते हैं वा पत्र की भिक्षालब्ध पूंजी को अनुचित रीति से नष्ट कर देते हैं। एक इसी कारण से उनके पत्र का रूप रंग नहीं बदलता उसका आदर नहीं होता। परन्तु घृणित स्वार्थ सिद्ध के लिये पत्र का जीवित रखना उनके लिये अत्यावश्यक काय्य हो जाता है। हर्ष की बात इतनी ही है कि ऐसे लोगों के आचरण शीघ्र ही प्रकट

हो जाते हैं और सज्जनसमाज में वे घृणा की दृष्टि से देखे जाते हैं।

धन का कुप्रबन्ध जिस प्रकार उन्नति का बाधक है, योग्य जानकार कर्मचारियों का अभाव भी उसी प्रकार पत्रों के संचालन में हानिकारक है। शिक्षित कर्मचारियों का आदर नहीं, या पूंजी की कमी के कारण उनको नियुक्त करने की शक्ति नहीं रहती। बहुधा प्रेस के चलते पुरजे कम्पोजीटर या दूसरे अशिक्षित निम्न-श्रेणी के कर्मचारी मालिक को जैसे बने वैसे मुट्ठी में लाकर अपना मतलब साधते हैं। कभी कभी बाहर के लोग, जिन्होंने कभी पत्र छापने का यन्त्रालय तक नहीं देखा था, प्रबन्धकर्ता के दायित्व पूर्ण पद पर बैठा दिये जाते हैं। इसका फल भी विषमय ही हुआ करता है। बहुधा संचालक की अदूरदर्शिता के कारण उसका सारा परिवार प्रबन्ध विभाग में अनुचित रीति से हस्तक्षेप करने लगता है। इस सम्बन्ध में हमको अंगरेजों से शिक्षा लेनी चाहिये। पत्र प्रकाशनकला हमको अंगरेजों ही से मिली है। इस सम्बन्ध में जहां तक सम्भव हो दूसरी बातों में भी हमको उन्हीं का अनुकरण करना चाहिये। अंगरेजी कारखाने में मालिक का बेटा प्रभु शक्ति का प्रयोग नहीं करने पाता, यदि उसे पिता के कारखाने में काम करना हो तो प्रबन्धकर्त्ता का आज्ञाकारी बनकर निम्नतम पद से उसे कार्य्य सीखना और योग्यतानुसार वेतन भी लेना पड़ता है। ऐसे ही गुणों से अंगरेज़ व्यपारी पीढ़ी दर पीढ़ी अपने पत्रों का संचालन कर सकते हैं।

योग्य सम्पादकों का अभाव बड़ाभारी अभाव है। यहां सब लोग लेखक हैं, सभी मातृगर्भ से आविर्भूत होते ही सम्पादन कला के पारंगत बन जाते हैं। वे लोग भूल जाते हैं कि सभी कार्य के लिये गुरुसे शिक्षा लेनी पड़ती है इसी कारण अशिक्षित सम्पादकों के परिवर्त्तन होते रहने से किसी किसी पत्र की नीति में भी परिवर्त्तन होते पाया गया है। विचारशील पत्र संचालकगण इस अभाव का बहुत अनुभव करने लगे हैं। सम्पादकीय क्षेत्र में काम करने की इच्छा रखने वाले नवयुवकों को चाहिये कि वे पहले स्वल्प वेतन पर भी किसी प्रसिद्ध तथा अनुभवी सम्पादक के अधीन रह कर दो चार वर्ष सम्पादन कला की शिक्षा प्राप्त करें। आगे चल कर वे स्वतन्त्र रूप से स्वयं ही किसी पत्रका सम्पादन करने लगेंगे।

संचालकगण कभी कभी सम्पादक को पीर बबर्ची भिश्ती खर सब कुछ समझने लगते हैं। इसी लिये बहुधा हिन्दी-पत्रों में अनुवाद मात्र की भरमार रहती है। सम्पादक को पढ़ने या चिन्ता करने के लिये बहुत कम समय मिलता है। रिपोर्टरों वा संबाददाताओं की सहायता अभागे हिन्दी पत्र सम्पादक को बहुत कम मिलती है। विलायती पत्रों में प्रत्येक सम्पादक के आज्ञाधीन रिपोर्टरों की एक वेतन भोगी पल्टन नियुक्त रहती है। ये समाचार संग्राहक बहुधा बाहर ही बाहर घूमा करते हैं। हिन्दी वाले यदि और कुछ नहीं तो प्रत्येक नगर में कम से कम एक या दो योग्य लेखकों को इस कार्य पर नियत करलें और उनको समाचार वा लेख भेजने के लिये कुछ मासिक वेतन वा उपहार की सामग्रियां देने का प्रबन्ध कर सकें तो भी दशा कुछ न कुछ अच्छी हो सकती है। आज कल लेखकों को कुछ पारितोषिक मिलना दूर रहा, घरसे कागज़ और डाक के टिकट के दाम भी लगाने पड़ते हैं। और इतने पत्रों से लेखों के लिये प्रार्थनाएं आया करती हैं कि यदि सबकी प्रार्थनाएं स्वीकृत की जावें तो लेखक को अपने परिवार पालन का ध्यान छोड़कर पत्रों के लिये लेख लिखते लिखते ही अपना जीवन व्यतीत कर देने की पारी आ जायगी। लेखकों के समय का मूल्य देना पत्र संचालक का धर्म है। हम बिना मूल्य किसी से परिश्रम लेने के विरोधी हैं। पूंजी नहीं है तो पत्र बन्द कर दीजिये। निर्धन जीवन से अपघात मृत्यु भी श्रेय है।

नागरी लिपिका उत्पत्तिकाल

नागरी लिपि सब लिपियों से पुरानी मानी जाती है परन्तु उस की उत्पत्तिका काल नहीं मालूम होता। प्राचीन ऐतिहासिक तत्वान्वेषण में हम लोगों को प्रमाणादि के संग्रह करने में बहुत कठिनाईयां झेलनी पड़ती हैं तिसपर भी जो कुछ फल प्राप्त होता है, वह अनेकांश में अनुमान मूलक होने पर भी सत्य तत्वकी ओर बढ़ने के लिये बहुत कुछ सहायता देता है। इसी प्रकार नागरी वा देव नागरी लिपि के सृष्टि समय का भी अनुमानमात्र ही करके सन्तोष करने के सिवाय और दूसरा उपाय नहीं देख पड़ता। वैदिक मन्वादि से प्राचीन

आर्य्यजाति का भारतवर्ष में अभ्युदयका काल है। वैदिक युगमें अक्षरादिकी सृष्टि के समाचार नहीं मिलते। भारतवासी वेद को अपौरुषेय मानते हैं। वेद पहिले अक्षरों में नहीं लिखे गये थे। उनको सुनकर और स्मरण शक्ति ही की तीव्रता के कारण याद रखकर पहले काम चलाने की बातें सुनी जाती हैं। परन्तु इसप्रकार बराबर काम चलाना कठिन जानपड़ा तो ब्रह्मा ने लेखक चित्रगुप्त की भी सृष्टि करदी। वेद का आविर्भाव एक दिनमें नहीं हुआ था। कहा जाता है कि अनेक ऋषियों ने सहस्राधिक वर्षों में वेदों का प्रचार किया था। ऐतिहासिकों का अनुमान है ईसामसीह के पूर्व ३००० वर्ष से लेकर १५०० वर्ष के भीतर वेदों की रचना हुई होगी मनुसंहिता का समय ईसा से पूर्व ११७६ वर्ष में निर्णीत हुआ है। त्रेता और द्वापर के सन्धिस्थल में मनुजी का आविर्भाव समझा जाता है। मनुके ग्रन्थ में लेखक का नाम नहीं मिलता परंतु यजुर्वेद में कायस्थ का उल्लेख है। यजुर्वेद के षोड़श अध्याय में है:—

"ये पथारुपथि चक्षस ऐलवृदा आयुर्युधः"।

अर्थात् ऐल वृत् मसीजीवी और असजीवी रक्षक स्वरूप सारे पथमें विराजते हैं। वैदिक युग में आजकल के समान वर्णभेद की बात नहीं पाई जाती। उस समय गुण और कर्म के अनुसार प्रत्येक मनुष्य ब्राह्मण क्षत्रियादि नामका अधिकारी होता था। परंतु वैदिक युग की यह आत्मीयता—आजकल के समान वंशानुक्रम से जातिभेद का वह अभाव—पौराणिकयुग में नहीं ठहरने पाया। मनु के समय में चारों वर्णों का वंशानुगत भेद होगया था ब्राह्मण गण जिस प्रकार वैदिक मन्त्रों के द्रष्टा होकर समाज में पूजनीय हुए क्षत्रियगण ने भी उसी प्रकार उपनिषदों के रचयिता होकर विशेष सम्माना पाया था। त्रेता के अंत में ब्राह्मणक्षत्रियों में अनेक कारणों से बहुत गहरा मनमुटाव होगया और इसी समय पिता के वध से पागलके समान होकर परशुराम ने हैहय देश के राजा कार्त्तवीर्य्यार्जुनको मारा और वह दूसरे क्षत्रियों का भी संहार करने लगे। इस समयके ठीक पहिले क्षत्रियों में दोभागों का वर्णन पाया जाता है।

"असिनाम् रक्षितम् राजयम् मरयादि स्था-

पनाय च। अभौ क्षत्रिमधर्मौ च भूमौ ख्यातौ मया किल ॥

यजुर्वेदीय बृहत् ब्रह्म खण्ड।

अर्थात्, असिद्वारा राज्य रक्षित होता है, मसिद्वारा स्थापित होता है। इत्यादि ॥

इन सब बातों से यजुर्वेद के काल में लेखक जाति के होने के प्रमाण मिलते हैं। लिखने का काम पहले कायस्थ चित्र गुप्त को समर्पित हुआ था चित्रगुप्त के वंशज ही इस लेखनकला के अधिकारी बराबर बने रहे।

"ब्रह्मकायसमुद्भूतः कायस्थो वर्णसंज्ञकः।"

—व्योमसंहिता।

ब्रह्मा की काया से जन्म लेनेके कारण चित्रगुप्त कायस्थ कहलाने लगे।

उस समय तर्ज्जनी, मध्यमा, अनामिका और कनिष्ठा, इन चार अंगुलियों से लेखनी पकड़ने का नियम था। इन चारों अंगुलियों के अग्र भाग की समष्टिका नाम भी काय है। अतः यदि मान लिया जावे कि यजुर्वेद के समय चित्रगुप्त लेखन ने कला वा लिपि रचना आरम्भ की तो सम्भवतः अनुचित न होगा। और चित्रगुप्त देव नागरी लिपि ही में लिखते थे इस बात को मान लेना भी अनुचित न होगा। हो सकता है कि चित्रगुप्त के हाथ से देवनागरी का वर्त्तमान परिपुष्ट रूप एक दम नहीं निकला होगा—तब भी स्पष्ट अक्षर स्वरूपों को देव नागरी के सिवाय और क्या नाम दिया जावे। इस विषय में अधिक जानकारी रखने वाले विद्वज्जनों की सम्मति यदि मिल सके तो सादर इस पत्रिका में प्रकाशित की जावेगी।

कुछ ऐतिहासिक तत्वान्वेषियों ने कठिन परिश्रम से प्राचीन शास्त्र ग्रन्थादिकों के जो काल निर्णय किये हैं, यहां पर उसकी एक तालिका प्रकाशित कर देना भी हम उचित समझते हैं।

प्राचीन ऐतिहासिक घटनाओं तथा शास्त्र ग्रन्थों के समय

१—वेद..........ईसा से पूर्व ३००० वर्ष से १५०० वर्ष के भीतर
२—कुरुक्षेत्र युद्ध ... १८८९
३—महा भारत ... १८००
४—मनुसंहिता ... ११७६
५—भोज वंश ... ६१९
६—सम्राट अशोक का राज्यारम्भ ईसा से पूर्व ... २५९
७—याज्ञवलक्य संहिता—ईसा से पीछे यानी ईसवी सन् ५०
८—विष्णु पुराण ... ६००
९—भविष्य, पद्म और स्कन्दपुराण ... ७३५
१०—मत्स्यपुराण ... ८००
११—गरुड़पुराण ... ११००
१२—कह्लण पण्डित कृत राजतरङ्गिणी ... ११४८
१३—अग्नि पुराण ... १२००

वँगीय-साहित्य-सम्मेलन का अङ्ग भङ्ग ।

(लेखक-बाबू गिरजा कुमार घोष)

गत वैशाख के महीने में कलकत्ते में "वङ्गीय-साहित्य-सम्मिलन" की बैठक हुई थी । इस बैठक में इस वार कार्यप्रणाली की एक नवीन शैली देखी गयी । सम्मिलन (बङ्गाली 'सम्मेलन' नहीं कहते) चार शाखाओं में विभाजित की गयी-साहित्य, दर्शन, विज्ञान और इतिहास, और प्रत्येक शाखा के लिये एक एक अलग सभापति का नियोग हुआ । इन चारों के ऊपर भी एक महाशय नायक थे, वही असल में सारे सम्मेलन के सभापति थे । साहित्य

शाखा के सभापति हुए महामहोपाध्याय परिडत यादवेश्वर तर्क रत्न। दर्शन शाखा के माननीय प्रोफेसर प्रसन्न कुमार राय, विज्ञान शाखा के प्रसिद्ध वैज्ञानिक रामेन्द्रसुन्दर त्रिवेदी, और इतिहास शाखा के विख्यात ऐतिहासिक अक्षयकुमार मैत्रेय महाशय सभापति बनाये गये थे। समग्र सम्मेलन के सभापति थे. नोबल पुरस्कार पाने वाले कवि रवीन्द्रनाथ के बड़े भाई ज्ञान वृद्ध दार्शनिक श्री द्विजेन्द्रनाथ ठाकुर।

अब तक हम लोग यही समझते रहे हैं कि सम्मेलनों का उद्देश्य मातृभाषा का प्रचार करना है—जो लोग अङ्गरेज़ी शिक्षा दीक्षा से मातृभाषा की ओर से उदासीन होते जाते हैं। या जो लोग दुर्भाग्य से अँगरेज़ो की कुछ भी शिक्षा न पाकर देश काल के अनुसार उन्नत शिक्षा से लाभ नहीं पा सकते, ऐसे मनुष्यों के हृदयों में मातृभाषा का प्रेम जगा देना। परन्तु बङ्गाल के साहित्य सम्मेलन में इस वार जिस प्रणाली से कार्य्य हुआ है, इससे कहे हुए उद्देश्यों की पूर्त्ति में कुछ हानि अवश्यही पहुँची होगी। बङ्गाल के सभी चिन्ताशील सज्जन इस शाखा विभाग के विषय में एकमत नहीं पाये जाते। इस शाखा विभाग से एक लाभ अवश्य यह होसकता है कि वर्ष भर प्रत्येक विभाग के कार्यक्षेत्र में कैसी उन्नति हुई उसकी अधिक मनोनिवेश से आलोचना की जा सके। निस्सन्देह यह भी बहुतही आवश्यकीय बात है परन्तु—बँगाल के विषय में हम नहीं कह सकते—हिन्दी साहित्य सम्मेलन में इस प्रकार के शाखा विभाग की आवश्यकता नहीं है। हमारा हिन्दी साहित्य अभी बहुत उन्नत नहीं है। उच्चशिक्षा प्राप्त विद्वानों का ध्यान अपनी मातृ भाषा की ओर से बहुत हटा हुआ है, इस लिये अभी मातृ-भाषा-प्रेम को छोटे बड़े सभी प्रकार के मनुष्यों के हृदयों में उगाने का उद्देश्य हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के लिये प्रधान माना जावेगा।

स्वयं बङ्गाल में भी बहुतेरे विद्वान इस अलगाव के पक्षपाती नहीं जान पड़ते। परन्तु इस वर्ष ब्रह्मा के चतुरानन के समान बङ्गाल सम्मेलन ने चार अलग अलग बैठकें कीं।

इस प्रकार की अलग बैठकों से एक बात हम को कुछ असमंजसी जान पड़ती है। सभापति महाशय ने अभिभाषण पढ़ धन्यवाद लिया,—इसके उपरान्त वह और क्या कर सकते थे

सभापति द्विजेन्द्रनाथ ने पहले दिन सम्मेलन में आकर अपना अभिभाषण पढ़ा, फिर स्वास्थ्य ठीक न रहने के कारण घर चले गये। यदि वह सम्मेलनमें ठहरेही रहते तो उनको भी किसी शाखा सभा में जाकर बैठना पड़ता, और वहाँ एक सभापति के रहते हुए उन्हें चुपचाप दर्शक मात्र बना रहना पड़ता।

असल बात यह है, बङ्गीय सम्मेलन का यह अँग भङ्ग हमारी समझ में नहीं आया।

साहित्य, दर्शन और विज्ञान की तुलना में इतिहास शाखा में सब से अधिक जन-समागम था। इससे यह बात सिद्ध होती है कि बङ्गालियों की रुचि ऐतिहासिक तत्वों की ओर अधिक है। और प्राचीन पुस्तकों के उद्धार और पुरातत्वों की खोज आदि में कुछ बङ्गाली भाई जैसे तन मन धन से काम कर रहे हैं, और जैसे अद्भुत तत्वों के आविष्कार भी उन लोगों ने अब तक किये हैं, इससे इतिहास सभा में सब से अधिक भीड़ भाड़ का होना असम्भव भी नहीं।

प्रचार का कार्य

मेरा दौरा

पत्रिका के पाठकों को फरवरी १९१४ तक मेरे दौरे का वृत्तान्त मिल चुका है। ४ मार्च से लेकर ३० एप्रिल तक जो सेवा मैंने मातृभाषा की की है उसका व्योरा इस अङ्क में देता हूं।

फतहपुर (जयपुर)

जयपुर राज्य के अन्तर्गत शेखावाटी एक प्रान्त है। यहां के प्रसिद्ध नगर फतहपुर में श्रीमान् बजरंगलालजी लोहिया हिन्दी के अनन्य भक्त रहते हैं। उन्हीं के प्रेम प्रताप से फतहपुर में मेरे पाँच चार व्याख्यान हुए। मातृभाषा हिन्दी का महत्व लोगों को समझाया गया। यहां के प्रसिद्ध देश भक्त वयोवृद्ध सेठ रामदयालु जी नेवटिया से भेंट हुई। आप से मिल कर चित्त बड़ा प्रसन्न हुआ। आप उड़े विद्या व्यसनी हैं और देश की आधुनिक आवश्य-

कताओं को खूब समझते हैं। यद्यपि आप वयोवृद्ध हैं पर विचार आपके नवयुवकों जैसे हैं। यह सत्सङ्ग का प्रभाव है।

लक्ष्मणगढ़

फतहपुर से बहली में बैठ कर लक्ष्मण गढ़ गया। रास्ते में तालाब और प्याऊ स्थान स्थान पर हैं। इस ओर यह बात देख कर बड़ी प्रसन्नता हुई कि धनवान मारवाड़िओं ने प्यासे पथिकों के लिए स्थान स्थान पर धर्मशाला, तालाब और प्याऊ लगा रक्खे हैं। यह धन का सदुपयोग है।

लक्ष्मणगढ़ में नागरी प्रेमी पंडित विधीचन्द्र जी रहते हैं। आपको मातृभाषा हिन्दी द्वारा शिक्षा प्रचार की धुन है। यहां तीन व्याख्यान हुए। लोगों की खासी भीड़ होती रही। नागरी का सन्देश सुनाया गया। एक नागरी पुस्तकालय यहां स्थापित है। इसमें समाचार पत्र आते हैं। यह सब पंडितवर विधीचन्द्र जी के उद्योग का फल है।

मण्डावा

लक्ष्मणगढ़ से आधी रात के समय मण्डावा की ओर चल पड़े। राजपूताना के रेतीले मैदानों में बहली का धीरे धीरे जाना, सुनसान मार्ग में निर्भय होकर यात्रा करना; रास्ते में किसी प्रकार की चोरी आदि का भय न होना—आहा! ये सब देखकर मेरा चित्त बड़ा प्रसन्न हुआ। यह एक नया अनुभव था। साठ साठ मील चलने वाली अमरीका की गाड़िओं में बैठने के बाद, भारत की रेलों में चोरों के डर से रात भर जागने के अनुभव के अनन्तर इस निर्जन मार्ग में निश्शङ्क होकर बहली में सोना—सचमुच यह एक नवीन आनन्द था जिसने मेरे हृदय पर बड़ा प्रभाव डाला।

प्रातःकाल मण्डावा के धवल प्रासाद दिखलाई देने लगे। धीरे धीरे बहली बस्ती के पास पहुंच गई। नगर में समाचार फैल गया। नगर निवासियों ने बड़े प्रेम से मेरा स्वागत किया। यहां के ठाकुर महोदय ने राजप्रासाद में व्याख्यानों का प्रबन्ध कर दिया था। तीन व्याख्यान ठाकुर साहब के सभापतित्व में हुए। 'शिक्षा' 'साहित्य' 'हिन्दी' आदि विषयों पर व्याख्यान हुए।

अच्छा उत्साह था। राजमाता तथा रानिओं ने भी परदे की ओट में व्याख्यानों को सुना। बड़ा आनन्द हुआ। चौथा व्याख्यान शहर के एक प्रसिद्ध मन्दिर में हुआ।

मण्डावा में एक कन्या-पाठशाला तथा एक मिडिल स्कूल है। दोनों का मैंने निरीक्षण किया। मारवाड़ी भाइओं में जाग्रति होरही है यह देखकर चित्त बड़ा प्रसन्न हुआ। अभी कार्य प्रारम्भिक दशा में है। हमारे शिक्षित देश बन्धुओं को राजपूताने में घुसना चाहिये। वहाँ योग्य अध्यापकों की बड़ी माँग है। यद्यपि वहां कलकत्ता, प्रयाग जैसे सभा सोसाइटियों के मज़े नहीं मिलेंगे पर देश सेवा का बहुत अच्छा अवसर हाथ आएगा। कालिजों से निकले हुए देशहितैषी नवयुवकों को चुपचाप राजपूताना में घुसना चाहिये। शुद्धाचरणी हिन्दी प्रेमी इस ओर अवश्य ध्यान दें।

चिड़ावा

मण्डावा वालों के प्रेम प्रसाद का रस लेता हुआ मैं चिड़ावा की ओर रवाना हुआ। ठाकुर साहब की बहली आगई थी। प्रेमी भक्त गोशाला तक साथ साथ चले। गोशाला देखी। बछड़ी बछड़ों को देखकर मन प्रसन्न हुआ। बुद्धि ने उन मूर्खों को लाख लाख बार धिक्कारा जो इन भोले भाले उपकारी पशुओं को दुख पहुंचाते हैं।

धूप अधिकहो गई थी। चलते चलते रात के नौ दस बजे झूँझनू पहुंचे। वहां रात भर विश्राम किया। चिड़ावा वालों ने अपनी बहली भेज दी थी। सवेरे चिड़ावा की ओर चले। रास्ते के झाड़ झंकाड़, ग्रामीण दृश्य देखते हुए शाम को चिड़ावा पहुंच गये। चिड़ावा में हिन्दी के कई एक प्रेमी रहते हैं। नवयुवक बड़े उत्साही हैं। उन से मिलकर बड़ा आनन्द हुआ। तीन चार व्याख्यान यहां भी हुए। नगर के गण्यमान्य सभी पधारे थे। मातृभाषा का सन्देश सुनकर लोग बड़े प्रसन्न हुये। स्त्रियों के लिये रात के समय मन्दिर में व्याखयान हुआ। यहां शिक्षा का अच्छा प्रचार है। स्कूल की इमारत बन रही है। पाठशालायें भी हैं। जो कुछ देश सेवा का कार्य हो रहा है वह सब उन मारवाड़ियों के पुण्य प्रताप का फल है जो बम्बई, कलकत्ता, रंगून आदि नगरों में तिजारत के लिये

जाते हैं। वे वहां के प्रकाश को अपने साथ लाते हैं। अपनी जन्मभूमि को प्रकाशित करने का यत्न करते हैं। धन्य! धन्य पुरुषार्थ !! वह समय शीघ्र आएगा जब राजपूताना में विद्या देवी का राज्य स्थापित होगा और राजपूतों की पवित्र भूमि विद्वाननर रत्न उत्पन्न कर भारत माता का मुख उज्ज्वल करेगी।

चिड़ावा में नव युवकों के उत्साह से एक नागरी पुस्तकालय भी खुला हुआ है जिस के संयोजक उत्साही नवयुवक वेनीप्रसादजी डालमियां हैं। ईश्वर आपको चिरञ्जीव रखे। आपके द्वारा मातृ भाषा की बड़ी सेवा होगी, यह मुझे पूर्ण आशा है।

पेलानी

चिड़ावे से चलकर एक रात पेलानी में मातृभाषा के अनन्यभक्त श्री घनश्याम जी विड़लासे भेंट करने चलेगये। आप बड़े सदाचारी हैं। मातृभाषा हिन्दी के आप उपासक हैं। एक व्याख्यान यहां भी हुआ। गांव के अनुसार अच्छी भीड़ थी। यहां से रात के समय बहली में चढ़ कर रतनगढ़ रेलवे स्टेशन की ओर रवाना हो गया।

बस शेखावटी में मेरा इतना ही भ्रमण हुआ। सचमुच कुछ भी नहीं हुआ। महीने के करीब दिन लग गये पर दौरा केवल चार नगरों में हो सका। चुरू वालों की कई तारें आईं, पत्र आए पर मैं जा न सका। इसका मुझे बड़ा दुःख है। चुरू वालों से मैं हाथ जोड़ कर प्रार्थना करता हूं कि वे मेरी इस धृष्टता को क्षमा करें। मैं उनकी आज्ञा पालन न कर सका, क्योंकि मेरे पास समय नहीं था।

शेखावाटी में बहुत सा रुपया संस्कृत पाठशालाओं पर खर्च होता है परन्तु उसका कुछ भी परिणाम नहीं निकलता। दानी महोदयों की सेवा में मेरी प्रार्थना है कि इन पाठशालाओं का यथोचित प्रबन्ध करें। योग्यपुरुषों के हाथों में पाठशालाओं का प्रबन्ध सौंपें। जहां तक हो सके अङ्गरेज़ी संस्कृत पढ़े हुए विद्वानों को अध्यापक नियत करें। रुपया खर्च हो और उससे कुछ फल न निकले यह लज्जा की बात है। ज़िद्दी, उद्दण्ड और स्वार्थी अध्यापकों से क्या ख़ाक काम हो सकता है।

कलकत्ता

शेखावाटी से निवृत्त होकर मुझे सीधा कलकत्ते जाना था। वहां की नागरी पाठशाला के उत्सव में सम्मिलित हुआ। इस पाठशाला के मंत्री हिन्दी प्रेमी पण्डित दुर्गाप्रसाद जी शुक्ल हैं। उत्सव में धनी मारवाड़ी भी शामिल हुए। खासी भीड़ रही। पाठशाला में विद्यार्थियों की संख्या काफ़ी है। कई एक सज्जनों के व्याख्यान हुए। 'हिन्दी का सन्देश' इस विषय पर मैंने भी व्याख्यान दिया। इस उत्सव का व्योरा समाचार पत्रों में छप चुका है।

पीलीभीत

कलकत्ता से चल कर पीलीभीत पहुंचा। यहां की आर्य्यसमाज ने अपने उत्सव में मुझे बुलाया था। दो व्याख्यान आर्य्यसमाज के पण्डाल में हुए; दो सनातन धर्म सभा के प्रेमियों ने अपनी ओर से कराये। क्योंकि 'हिन्दी' सब की साझी है और मैं सब का प्रेमी हूं। 'शिक्षा और साहित्य' 'वर्तमान शिक्षा प्रणाली के दोष' 'हिन्दी की महत्ता' आदि विषयों पर व्याख्यान हुए। सेठ ललिताप्रसाद तथा सेठ रामस्वरूप जी आदि गण्यमान्य सज्जनों ने मातृभाषा प्रेम में बड़ा उत्साह दिखलाया। सर्व साधारण तो सभी जगह मातृभाषा की सेवा करने को उद्यत हैं। उनको कोई समझाने वाला चाहिए।

प्रयाग

पीलीभीत से प्रयाग पहुंचा। यहां आठ दस रोज़ तक बराबर दरवेश्वर महादेव के स्थान पर कथा होती रही।

लखनऊ

लखनऊ की नागरी प्रचारिणी सभा की ओर से तीन चार व्याख्यान हुए। लोगों की भीड़ खासी थी पर ऐसी नहीं जैसी कि मैं आशा करता था। कारण यह हुआ कि व्याख्यान एक अपरिचित स्थान में हुए। आखिरी 'व्याख्यान' हिन्दी का सन्देश' के दिन स्वर्गीय बाबू गंगाप्रसाद जी भी पधारे थे।

सत्यदेव परिव्राजक।

पुस्तकों की प्राप्ति स्वीकार ।

[गताङ्कसे आगे]

पुस्तक	लेखक	प्रकाशक	मूल्य
१९३—पार्वती और यशोदा	पं० कामता प्रसाद गुरु	इण्डियन प्रेस	।=)
१९४—मुकुट	पं जनार्दन झा	,,	।)
१९५—कर्मयोग	पं० बदरीदत्त शर्म्मा	,,	।=)
१९६—विक्रमाङ्कदेव चरित चर्चा	पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी	,,	≡)
१९७—आघातों की प्रारम्भिक चिकित्सा	श्रीयुत प्रसादीलाल झा	,,	।॥)
१९८—सुख मार्ग	डा० महेन्द्रलाल गर्ग	,,	।)
१९९—लड़कों का खेल		,,	=)॥
२००—खिलौना		,,	।-)
२०१—उपदेश कुसुम	पं० अयोध्या सिंह उपाध्याय	,,	=)
२०२—भाषा पत्र प्रबोध		,,	-)॥
२०३—व्यवहार पत्र दर्पण		,,	॥)
२०४—इन्साफ़ संग्रह	मुन्शी देवीप्रसाद	,,	॥)
२०५—जल चिकित्सा	पं० महावीर प्रसाद जी	,,	।)
२०६—सौभाग्यवती	पं० प्राणनाथ	,,	=)॥
२०७—अर्थशास्त्र प्रवेशिका	पं० गणेशदत्त	,,	।)
२०८—आरोग्य विधान		,,	॥)
२०९—बालगीता	पं० रामजीलाल शर्मा	,,	

"सम्मेलन पत्रिका" के नियम ।

१—"सम्मेलन पत्रिका" हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन कार्य्यालय, प्रयाग, से प्रतिमास प्रकाशित होगी।

२—इसका वार्षिक मूल्य १) इसलिये रक्खा गया है कि सर्व-साधारण इसके ग्राहक हो सकें।

३—इस समय इसमें प्रतिमास कुल २४ पृष्ठ ही रहा करेंगे। परन्तु आवश्यकता होने पर कभी कभी पृष्ठ संख्या बढ़ा भी दी जाया करेगी। आगे चलकर यदि इसकी सेवा साहित्यसेवियों को रुचिकर हो, और इसके ग्राहकों की यथोचित संख्या होजाय तो यही पत्रिका अधिकतर पृष्ठ-संख्याओं में और अधिकतर उन्नत दशा में प्रकाशित की जायगी।

४—इसके प्रबन्ध-विभाग के पत्र--ग्राहक बनने के लिए आवेदन, विज्ञापन-सम्बन्धी पत्र, मनीआर्डर इत्यादि—मन्त्री, साहित्य-सम्मेलन कार्य्यालय, जानसेनगंज प्रयाग, के नाम भेजे जाने चाहियें।

५—सम्पादक के नाम की चिट्ठियां, बदले के समाचार-पत्रादि समालोचना की पुस्तकें, पत्रिका में प्रकाशित होने के लिये लेखादि भी ऊपर ही के पते से भेजे जाने चाहियें।

विज्ञापनदाताओं के लिये नियम

१—"सम्मेलनपत्रिका" में अश्लील विज्ञापनों को स्थान न मिलेगा।

२—विज्ञापन साधारणतः पूरे और आधे पृष्ठ से कम स्थ के लिये स्वीकृत न होंगे।

१—पृष्ठ का मासिक मूल्य ... ४॥) हो

२—आधे पृष्ठ का ... २॥) हो

३—जो लोग १२ संख्याओं में विज्ञापन छपवाने का मूल्य साथ भेज देंगे, उनका विज्ञापन एक संख्या में बिना मूल्य दिया जायगा, अर्थात् १२ की जगह १३ बार उनका विज्ञ छापा जायगा।

४—किसी दशा में पेशगी मूल्य बिना मिले कोई भी विज्ञा नहीं छापा जायगा।

५—विक्रयार्थ पुस्तकों के विज्ञापनों पर ऊपर दिये हुए मू से कम मूल्य लिया जायगा।

१ पृष्ठ का मूल्य १ मास के लिये ३॥) औ

आधे " " २) होगा

६—अदालतों में लेखकों की नौकरी, अध्यापक-अध्यापिका की नौकरी, इत्यादि हिन्दी-प्रचारार्थ नौकरियों के विज्ञापन एक बिना मूल्य छाप दिये जायंगे। दूसरी वार और अधिकवार लिये ऐसे विज्ञापनों का मूल्य केवल १) प्रतिमास होगा। विज्ञा ८ पंक्तियों से अधिक न हो।

मन्त्री, हि० सा० स० कार्यालय, प्रयाग

Reg. No. A629.

सम्मेलनाङ्क ।

सम्मेलन पत्रिका

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की

मुखपत्रिका ।

भाग २ } मार्गशीर्ष संवत् १९७१ { अङ्क २

विषय सूची ।

हिन्दी साहित्यसम्मेलन से बाबू नरेन्द्र नारायण सिंह द्वारा प्रकाशित

सम्मेलन के उद्देश्य

(१) हिन्दी साहित्य के अङ्गों की उन्नति का प्रयत्न करना।

(२) देवनागरी लिपि का देश भर में प्रचार करना और देश व्यापी व्यवहारों और कार्यों के सुलभ करने के लिये हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा बनाने का प्रयत्न करना।

(३) हिन्दी को सुगम, मनोरम और लाभदायक बनाने के लिये समय समय पर उसकी शैली के संशोधन और उसकी त्रुटियों और अभावों के दूर करने का प्रयत्न करना।

(४) सरकार, देशी राज्यों, पाठशालाओं, कालिजों, विश्वविद्यालयों और अन्य संस्थाओं, समाजों, जनसमूहों तथा व्यापार, ज़मींदार और अदालतों के कार्यों में देवनागरी लिपि और हिन्दी भाषा के प्रचार का उद्योग करते रहना।

(५) हिन्दी के ग्रन्थकारों, लेखकों, पत्रसंपादकों, प्रचारकों और सहायकों को समय समय पर उत्साहित करने के लिये पारितोषिक प्रशंसापत्र, पदक उपाधि आदि से सम्मानित करना।

(६) उच्च-शिक्षा प्राप्त युवकों में हिन्दी का अनुराग उत्पन्न करने और बढ़ाने के लिये प्रयत्न करना।

(७) जहां आवश्यकता समझी जाय वहाँ पाठशाला, समिति तथा पुस्तकालय स्थापित करने और कराने का उद्योग करना तथा इसप्रकार की वर्त्तमान संस्थाओं की सहायता करना।

(८) हिन्दी-साहित्य के विद्वानों को तैयार करने के लिये हिन्दी की उच्च परीक्षाएं लेने का प्रबन्ध करना।

(९) हिन्दी भाषा के साहित्य की वृद्धि के लिये उपयोगी पुस्तकें तैयार करना।

(१०) हिन्दी-साहित्य सम्मेलन के उद्देश्यों की सिद्धि और सफलता के लिये अन्य जो उपाय आवश्यक और उपयुक्त समझे जांय उन्हें काम में लाना।

सम्मेलन-पत्रिका का उद्देश्य

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के उद्देश्यों की पूर्ति में सहायता करना और साहित्य-प्रेमियों से इसी के लिये उपदेश लेना।

पञ्चम हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के सभापति श्रीमान् पं० श्रीधर पाठक ।

ओंकार प्रेस, प्रयाग ।

सम्मेलनपत्रिका।

हिन्दी साहित्य-सम्मेलन की कार्यकारिणी समिति
की ओर से प्रतिमास प्रकाशित।

भाग २ } मार्गशीर्ष संवत् १९७१ { अङ्क ३

हिन्दी साहित्य पर उसके प्रधान सहायकों के प्रभाव।

[लेखक—पण्डित श्याम बिहारी मिश्र एम०ए० पंडित शुकदेव बिहारी मिश्र बी०ए०]

जैसा कि प्रत्येक हिन्दीप्रेमी पर विदित है इस भाषा का जन्म संवत् ७०० के लगभग हुआ था। उस समय इसका प्राकृत भाषा से विशेष सम्पर्क था और सिवाय साधारण लेखों के इसमें कोई साहित्य ग्रन्थ उस समय का नहीं मिलता। समय के साथ इस की उन्नति होती गई यहां तक कि पृथ्वीराज के काल में ही इस में प्रचुरता से साहित्य ग्रन्थ बनने लगे। चन्दकृत रासो देखने से विदित होता है कि उस काल में राज दरबारों में बहुधा हिन्दी के कवि रहा करते थे, किन्तु समय के उलट फेर से अब उनके ग्रन्थ दृष्टिगत नहीं होते हैं। अतः हिन्दी साहित्य के प्रथम सहायक राजागण हुये और ये ही कई शताब्दियों तक इसके प्रधान सहायक रहे। इस का प्रभाव यह पड़ा कि उस समय प्रधानता से और उसके पीछे भी न्यूनाधिक प्रकारेण हमारे साहित्य में राजयश वर्णन हुआ और हजारों ग्रन्थ इस प्रकार के बन गये। इन में से एक वृहद् [illegible] के साथ लुप्त हो गया, किन्तु अब भी सैकड़ों वरन् हजारों नृप-यश-कीर्तन के अच्छे बुरे ग्रन्थ प्रस्तुत हैं। बीर

भयानक, रौद्र और शान्ति रसों का इन ग्रन्थों द्वारा हमारी कविता में अच्छा समावेश हुआ।

समय के साथ बहुत से भक्त कवि भी हुये जिन्होंने भक्ति पक्ष के भी अच्छे अच्छे ग्रन्थ रचे। फिर भी वैष्णव सम्प्रदायों के उत्थान के पूर्व हमारे यहाँ भक्ति का पक्ष कुछ निर्बल रहा। भक्ति पक्ष उत्तरीय भारत में वैष्णवता से बहुत सबल हुआ। इस की राम और कृष्ण की भक्ति सम्बन्धिनी दो प्रधान शाखायें हुईं। भक्ति पक्ष के प्रथम उन्नायक महात्मा रामानुज हुये, जिन को थियासाफिस्ट लोग ईसा का अवतार समझते हैं। इन के शिष्यों में महात्मा रामानन्द प्रधान हुये। प्रसिद्ध कवि और भक्त महात्मा कबीरदास इन्हीं के शिष्य थे। भक्त कवियों में सब से पहले महाकवि यही महात्मा हुए। पीछे से रामानन्दी मत दक्षिण से फैलता हुआ अयोध्या तक पहुंचा और महात्मा तुलसीदास ने इसे अपनाकर वह ज्योति प्रदान की, जिस से संसार में कोई भी भाषा अभिमान कर सकती है। ब्रज मंडल में चार प्रधान वैष्णव सम्प्रदाय हुये अर्थात् विष्णु, माध्व, निम्बार्क और रामानुजीय। महात्मा वल्लभाचार्य्य विष्णु सम्प्रदाय के अन्तर्गत थे। उनका शाखा-सम्प्रदाय वल्लभीय कहलाता है। महात्मा चैतन्य महाप्रभु और हित हरिवंश माध्व सम्प्रदाय के अन्तर्गत थे। महा प्रभु जी का शाखा-सम्प्रदाय गौड़ीय और हित जी का हित-अनन्य सम्प्रदाय कहलाता है। निम्बार्क सम्प्रदाय में महात्मा हरिदास प्रधान थे, जिन्होंने टट्टियों वाली शाखा चलाई। रामानुजीय सम्प्रदाय के अन्तर्गत रामानन्दी है, जिस में स्वयम् गोस्वामी तुलसीदास हुये जैसा कि अभी कहा जा चुका है। वल्लभीय सम्प्रदाय में अष्ट छाप वाले प्रसिद्ध कवि हुये, जिन में महात्मा सूरदास प्रधान हैं। इन सम्प्रदायों के अनुयायी सैकड़ों उत्कृष्ट कवि हुये हैं, जिन की रचनाओं से भाषा भांडार भक्ति पक्ष से भरा हुआ है और यह रचनायें सर्वतोभावेन प्रशंसनीय है। अतः वैष्णवता हमारी भाषा की दूसरी प्रधान सहायका है। इसके द्वारा धर्म-सम्बन्धी कथा-प्रासंगिक ग्रन्थ भी बहुत बने। इन भक्तवरों में श्री कृष्णचन्द की भक्ति प्रधान थी जिसके कारण रास माखन चोरी आदि श्रृंगारिक [illegible] की भी हमारे यहां भक्त कवियों के साथ ही साथ प्रधानता हो गई। हम

कह चुके हैं कि साहित्योन्नति के प्रथम प्रधान कारण राजा लोग थे वे भी शृंगारी विषयों को पसन्द करते थे। अतः भक्तकवि तो शृंगारात्मक साहित्य रचते ही थे अभक्त कवियों और राज-सेवियों ने भी भक्ति की आड़ में शृंगार काव्य की धूम मचा दी। इस प्रकार से शृंगार रस ने हमारे साहित्य का ऐसा पीछा पकड़ा है कि उससे छुटकारा होता नहीं देख पड़ता। महाकवि देव, विहारी मतिराम आदि ने अन्य रसों के साथ शृंगार का भी बड़ा सम्मान किया। फिर भी यदि वैष्णवता और राजाओं की सहायता न होती तो हमारा साहित्य आज बड़ी ही शोचनीय अवस्था में होता। शिवा-जी, छत्रसाल आदि सूरों के समय में वीर रस का भी अच्छा मान हुआ और इसके ग्रन्थ बहुत बने जिन में से सेकड़ों उत्कृष्ट भी हैं पीछे से भारत में कादरता के प्रबल प्रचार से इन ग्रन्थ-रत्नों का तादृश सत्कार नहीं हुआ, जिससे इन में से बहुत से लुप्त होगये फिर भी अद्यापि ऐसे सकड़ों ग्रन्थ प्रस्तुत हैं।

अतः अब तक राजाओं और वैष्णवों की सहानुभूति से ही हमारी कविता को लाभ पहुंचता था किन्तु अब एक अन्य परम प्रधान सहायता उसे मिलनेवाली थी, जिसके लिये वह मानो पहले से ही तैयारियां कर रही थी। अब तक राजाओं और ऋषियों की कृपा से हमारा साहित्य शृंगार वीर शान्ति और कथा-प्रसंग के विषयों में परिपूर्ण हो चुका था और देव, मतिराम, प्रताप आदि सुकवियों के हाथ में वह अपने भाषा सम्बन्धी माधुर्य्य प्रसाद आदि गुणों की भी बहुत अच्छी उन्नति कर चुकाथा, किन्तु गद्य विभाग अब तक प्रायः शून्य था। सम्बत् ७०० के लग भग हिन्दी का जन्म हुआ था, १२२५ के लग भग उस में पद्य काव्य की बहुता-यत हुई थी, १६२५ के लग भग भक्ति वृद्धि के साथ साहित्य के प्रधान अंगों की पूर्त्ति हुई थी और १८५० तक देव, दास, मतिराम आदि के सहारे भाषा सम्बन्धी उन्नति प्रायः पूर्णता को पहुंच चुकी थी, किन्तु फिर भी गद्य विभाग शून्यप्राय रह गया था। सम्बत् १४०७ में महात्मा गोरखनाथ ने गद्य में ग्रन्थ-रचना अवश्य की थी और विट्ठलनाथ, गोकुलनाथ, गंग, जटमल आदि ने १६०० से १६८० [illegible] ब्रज भाषा और खड़ी बोली गद्य में ग्रन्थ अवश्य रचे थे किन्तु इन ग्रन्थों में साहित्यांश बहुत कम था। अब सं०

१८२५ के लग भग से गद्योन्नति का प्रारम्भ होनेवाला था, प्रो लल्लूलाल एवं सदल मिश्र ने १८६० संवत से ही उसका श्री गणेश कर दिया।

सो अब तक हमारे यहां पद्य ही पद्य था और इस लिये सांसारिक विषयों की ओर हमारी भाषा का ध्यान नहीं गया था। ऐसे विषयों का प्रचार गद्य द्वारा ही होता है। ये साधारण कामकाज के विषय हैं जिन से पद्य से कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है। अब तक हमारे यहाँ जीवन-होड़ Struggle for existence का सिक्का नहीं जमा था, किन्तु अंगरेज़ी राज्य के प्रभाव से शान्ति बढ़ी जिससे सभी प्रकार की सामाजिक उन्नतियों का समय आया। इन्हीं के कारण जीवन-होड़ हमारे यहाँ भी स्थापित हो रहा है और लोगों को सुख से शरीर यात्रा और गृहस्थी चलाने के लिये भांति भांति से परिश्रम करने की आवश्यकता हुई है। पाश्चात्य लोगों की बढ़ी हुई सांसारिक सभ्यता देख कर हम में भी संसारीपन बढ़ रहा है, जिससे भांति भांति की नई चीज़ों और आरामों की हमें भी चाह हो रही है। इन सब कारणों से कार्य्यकर्त्ताओं की संख्या बढ़ रही है और गद्य का अधिकाधिक प्रचार दिनों दिन आवश्यक होता जाता है। इन कारणों से इन ५० वर्षों में ही गद्य के इतने अधिक ग्रन्थ रचे जा चुके हैं जितने कि पूर्व काल के किन्हीं दो सौ वर्षों में भी गद्य और पद्य दोनों विभागों में न बने होंगे। इस प्रकार इन थोड़े ही से दिनों में हमारी भाषा का यह भारी अभाव भी दूर सा हो गया है या उसके दूर हो जाने की बहुत जल्द आशा है। अतः हमारे साहित्य की तीसरी प्रधान सहायिका वर्तमान पाश्चात्य सभ्यता है, जिसने संसारीपने को बढ़ा कर हमारे गद्य काव्य को उन्नत किया है और भविष्य में और भी करेगी। इसी समय में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्य्य समाज को स्थापित करके एक प्रकार से हिन्दी की भी भारी उन्नति की। यह मत हम में उस समय में चला है जब कि हम पूर्णतया पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव में थे। इससे इस मत में सांसारिक उन्नति के भी बहुत से साधन हैं। इन्हीं साधनों में से गद्योन्नति भी एक है।

अतः हमारे साहित्य के तीन प्रधान सहायक हुये हैं, अर्थात राजा गण, वैष्णवता और पाश्चात्य सभ्यता। इन में से प्रथम दोनों

ने पद्य की उन्नति की और तृतीय ने गद्य की। प्रथम दोनों के कारण अवधी भाषा का भी कुछ मान हुआ, किन्तु ब्रज भाषा की पूर्ण प्रधानता रही, परन्तु तृतीय के कारण अब खड़ी बोली का बल बढ़ा है। गद्य को तो इसने अपना लिया ही है, अब पद्य में भी इसका शुभप्रभाव बढ़ता देखपड़ता है आशा है कि समयपर पद्य में भी हमारे यहां पाश्चात्य प्रकार की रचना होने लगेगी, और इससे सिवाय लाभ के हम किसी प्रकार की हानि भी नहीं देखते। पूर्वीय प्रथा की साहित्य-रचना हमारे यहां खूब बहुतायत से भरी पड़ी है, सो यदि पाश्चात्य प्रणाली के गद्य पद्य एवं नाटक ग्रन्थ भी हो जावें, तो हमारी भाषा-कविता में पूर्णता अच्छी आ जावे। इस समय भी हमारे यहां सैकड़ों विषयों पर सहस्रों ग्रन्थ प्रस्तुत हैं, किन्तु नूतन शैली की रचनाओं की न्यूनता से अंगरेज़ी पढ़े लोग उनके अस्तित्व से भी परिचित नहीं हैं और वे शोक के साथ अपनी मातृ भाषा को बहुत ही दरिद्रा समझते हैं। हमारा साहित्य दरिद्र नहीं है, किन्तु कुछ कुछ इकांगीपन लिये हुए है। इस समय सर्वव्यापकता भी हमारे यहां आ रही है और आशा है कि इस तृतीय सहायक से वह पूर्णता को पहुंचेगी।

एवमस्तु ! एवमस्तु !! एवमस्तु !!!

वङ्गभाषा की क्रमोन्नति का दिग्दर्शन

[लेखक—श्रीयुत गिरिजाकुमार घोष]

वंगला भाषा का भंडार,
जिनके उछल कूद का सार,
वेही महा महिम विद्वज्जन,
ग्रन्थकार कहलाते हैं। इत्यादि।

हिन्दी भाषा के एक सुप्रसिद्ध महावीर निर्भय बालनेवाले कवि ने हिन्दी ग्रन्थकारों के अनेक लक्षणों का वर्णन करते हुए ऊपर उद्धार किया हुआ अंश भी गाया है जो वर्त्तमान हिन्दी साहित्य के ग्रन्थकार नामधारी कुछ सज्जनों पर श्लेषोक्ति कर रहा है। हिन्दी के ग्रन्थकार जिस प्रणाली से वंगभाषा से हिन्दी का भंडार परि-

पुष्ट कर रहे हैं, हमको उसकी आलोचना करने की आवश्यकता नहीं। यह बात स्वतःसिद्ध है कि वर्त्तमान हिन्दी साहित्य पर वङ्ग भाषा का बहुत भारी प्रभाव पड़ा हैं और पड़ता जाता है यद्यपि हिन्दी के कुछ रसिक इस बात को मानने में कुछ दुःख सा अनुभव करने लगते हैं। हमको इस दुःख का कारण नहीं जान पड़ता। हमको तो इस बात से बहुत आनन्द मिलता है कि हमारी मातृभाषा बंगला इस योग्य पायी गयी है कि वह अपनी बहिन को पुष्ट करने में इतनी भारी सहायता दे सके। स्वयं वङ्गभाषा ने पहले संस्कृत, और पीछे अगरेज़ी से बहुत कुछ सहायता ली है और अंगरेज़ी भाषा पर भी योरोप की दूसरी भाषाओं का बड़ा भारी प्रभाव पड़ चुका है। दूसरी भाषाओं से सहायता लेकर अपनी मातृभाषा की पुष्टि करने का प्रयत्न कोई अनुचित बात नहीं और उसको शुद्ध हृदय से मान लेना भी लज्जा की बात नहीं कही जा सकती।

अस्तु, जिस बंगला से हिन्दी पर आज दिन इतना प्रभाव पड़ रहा है, जिस बंगला से परिचालित हो कर हिन्दी वाटिका में नित्य ही अनेक फलफूल के पौधे रोपे जा रहे हैं, उस बंगला ही ने हिन्दी की बहुत सी बातें अपना ली हैं, आज कई सौ वर्ष हुए मलिकमुहम्मद जायसी की पद्मावत का एक मुसलमान बङ्गाली कवि ने अनुवाद किया था, तीन सौ वर्ष पहले बङ्गाली लोग अपनी विद्वत्ता का निदर्शन देने के लिये कहते थे, "हम हिन्दी, और फ़ारसी भी जानते हैं"—इन बातों को हिन्दीभाषी बहुत कम जानते होंगे। जिस वंगभाषा से हिन्दी का इतना पुराना नाता है, क्या उस भाषा की क्रमोन्नति का कुछ दिग्दर्शन करना हिन्दी-रसिकों के लिये अनुचित होगा? यह विषय है बहुत ही विस्तारपूर्ण, परन्तु इस पत्रिका के दुबले पतले कलेवर में सब बातें दिखलानी कठिन जानकर दिग्दर्शन मात्र कराने की चेष्टा की जाती है।

वंगभाषा किसी समय में कोरी प्राकृत मानी जाती थी। यह भाषा १००० वर्ष से भी अधिकतर पुरानी है। बंगला लिपि ही का पता ईसवी सन् १००८ में भी लगता है। महाराजा चन्द्रवर्म्मा की उस समय की लिपि वङ्गाक्षर की सबसे प्राचीन लिपि मानी जाती है। श्रीगयाकर नामक किसी मनुष्य ने बौद्धतन्त्रसम्बन्धी कुछ पुस्तकों की नकल सन् ११९८, ११९९ और १२०० ई० में वंगाक्षर में की थीं।

इन में से एक पुस्तक में मगध के पालवंशी अंतिम राजा गोविन्द-पालदेव के राज्यनष्ट हो जाने का प्रसंग है। यह घटना बख़ तियार ख़िलजी के वंगाधिकार से समसामयिक (लगभग ११७५ ई०) है। यह पुस्तक नेपाल से मिली थी और इस समय केम्ब्रज नगर में रक्खी गई है। इसी प्रकार ताम्रशासन आदि और भी बहुत से निदर्शन बंगला लिपि के प्राचीनत्व के पक्ष में मिलते हैं। १४ वीं शताब्दी की यह लिपि मैथिल हस्तलिखित लिपियों से भी मिलती जुलती थी। नेपालियों के अक्षरों में अब तक मैथिल अक्षरों की बनावट पायी जाती है।

जिस प्रकार अनेक शताब्दियों में धीरे २ पुष्ट होते हुए वंगाक्षर ने अपना वर्त्तमान स्वरूप पाया है, उसी प्रकार वंगभाषा ने भी अनेक परिवर्तन और सन्निहित भाषाओं से संमिश्रण के कारण रूपान्तरित होते २ अपना वर्त्तमान स्वरूप पाया है। आर्य्य जाति ने जिस समय से बंगाल में उपनिवेश स्थापित किया तभी से परिवर्त्तन होने लगा था।

आर्य्य जाति की पहिली भाषा वेदों में मिलती है। उसके पीछे रामायणादि की संस्कृत भाषा में, तब बौद्धों की पाली और गाथा आदि प्राकृत में, और उसका चौथा स्वरूप बङ्गला हिन्दी आदि गौड़ी भाषा समूहों में मिलता है। यह बात लिखित भाषा ही के लिए कही जा सकती है। भाषा के साथ ही व्याकरण की भी सृष्टि हुई। भाषा जिस मार्ग से चलती है, व्याकरण उसका साक्षीमात्र रहता है। पाणिनि का समय ईसवी शताब्दी से ३०० वर्ष पूर्व के लगभग माना जाता है। उसके भी पहले एक माहेश व्याकरण था पाणिनि के अनन्तर और भी अनेक व्याकरणों के दर्शन मिलते रहे। पूर्ववर्त्ती युग में जो बात भाषा का दोष मानी जाती थी, परवर्त्ती युग के व्याकरण में वही भाषा का नियम स्वीकृत हो चुकी है। इसी प्रकार परिवर्त्तनों द्वारा संस्कृत, प्राकृत, बंगला और हिन्दी का भी क्रम कहना चाहिये।

बङ्गला भाषा पूर्वकाल ही से "प्राकृत भाषा" के नाम से परिचित थी, इसके बहुत प्रमाण मिलते हैं। २०० वर्ष का एक पुराना बंगला महाभारत मिलता है। उसके लेखक ने उसकी भाषा को "पराकृत" या "प्राकृत" की आख्या दी है। इसी प्रकार और भी

प्रमाण हैं। स्थानाभाव से उन्हें छोड़ देना पड़ा। बौद्ध युग में प्राकृत में संस्कृत की बहुतसी विकृतियां हुईं। परन्तु वर्त्तमान युग के प्रारम्भ के पूर्व बंगाल में एक समय अनुवाद का युग आया, उस समय संस्कृत की पुस्तकें धड़ाधड़ बंगला में अनुवादित हुईं और उसी समय से फिर वंगभाषा में संस्कृत शब्दों की भरमार होने लगीं। अभी तक कुछ लोग बंगाल में संस्कृत शब्दों से भरी हुई भाषा के पक्षपाती हैं, और दूसरी श्रेणी के कुछ लोग बोलचाल की भाषा ही को लिखित भाषा का भी आदर्श मानते हैं।

गोपीचन्द भर्तृहरी की गाथा हिन्दी भाषा में बहुत प्रचलित है। परन्तु सुना जाता है कि इस गाथा का घटनास्थल बंगाल में था और बौद्धयुग के भीतर मानिकचन्द की गाथा रचित हुई थी। उसमें वही गोपीचन्द राजाके सन्यास की कथा गायी गयी है। उस की भाषा बिलकुल बंगला है। बौद्ध युग के वंगला ग्रन्थों से उस समय को सामाजिक दशा का थोड़ा बहुत दिग्दर्शन मिलता है। उस युग में राजा लोग सोने की खाट पर बैठकर चांदी के पावदान पर पैर रखते थे। सोने के थाल में ५० व्यञ्जनों के साथ भात खाते थे, परन्तु आज कल की भांति बहुत उच्च श्रेणी के विलास का भाव उनमें नहीं पाया जाता था। "इन्द्रकम्बल" "दण्ड पंखा" "पाट (यानी रेशमी) साड़ी" इत्यादि विलास की सामग्रियाँ में थीं। परन्तु इसके पीछे, वर्तमान युग से कुछ पूर्व आज से कोई २५० वर्ष पहले, "मेघ डम्बुर साड़ी" और "जगन्नाथी थान" की महिमा गर्व के साथ गायी गयी है। चैतन्य प्रभु के समय भोटिया कम्बल महँगा माना जाता था और "इन्द्रमीठा" नाम का कोई सुखाद्य भी सम्मानित पदवी पर स्थित था। गोपीचन्द ने "वंशी हरि" सुपारी खाने के कारण अपनी स्त्री के श्वेत रंग वाले दांतों की प्रशंसा की है। ब्राह्मण भी गोपीचन्द के समय खेती करते थे और स्त्रियां भी पाशा खेलती थीं। स्त्रियों का पाशा खेलने का व्यसन बहुत काल पीछे तक पाया जाता है।

बौद्ध युग के बाद धार्मिक युग का आरम्भ हुआ। बौद्ध धर्म की महिमा घटी, तब सनातन धर्म का पुनः प्रकाश हुआ, और साथ ही साथ धर्माश्रित ग्रन्थों की भी रचना होने लगी। हिन्दी के समान बंगला में भी पहले पहल राधाकृष्ण की प्रेमलीला की बातें बहुत

यत से पायी जाती हैं। परन्तु धीरे २ शिव, चण्डी, शीतला और नागदेवी मनसा आदि के भी प्रभाव गाये जाने लगे। इस प्रकार धार्मिक शाखा-भेद के कारण परस्पर आक्रमण होने लगे और धर्म-कलह से भाषा की उन्नति होने लगी। अँगरेज़ कवि चासर ने जो गीत गाये हैं, स्पेन्सर ने उन्हें नहीं छुए। इसी प्रकार फ़ोर्ड,वेनजानसन, स्काट, शेली आदि ने भी स्वतन्त्र आदर्श से काव्य बनाये। किसी ने दूसरे के अंकित मार्ग का अनुसरण नहीं किया। परन्तु उस समय के बंगली कवियों ने पूर्ववर्त्ती किसी न किसी कवि को अपना आदर्श मान कर रचनाएं की हैं यही उस युग के कवियों की विशेषता है। बंगाल में सुन्दर-वन में बाघ और नदी नालों में मगरों से अब भी मनुष्यों को बहुत दुख उठाने पड़ते हैं। सुन्दर-वन से मधु मक्खियों के छत्ते तोड़ने के लिये प्रतिवर्ष जो दीन लोग जाते हैं, वे घर से चलते समय बाघ और भालुओं के हाथ से बचकर लौट आने की आशा प्रायः छोड़ कर ही घर से निकलते हैं। सुन्दर-वन का स्वच्छ शुभ्र मधु इन लोगों की भाषा में अबतक बाघ का दूध कहलाता है सो प्राचीन काल ही से थल पर बाघ और जल में मकर के उपद्रव से प्रजा घबराती थी और उनकी रक्षा के लिये एक देवता भी खड़े होगये। मुसलमानी अधिकार के साथ यहां के गाज़ीमियां के समान पीरों की सृष्टि भी होगयी। इन सब उपदेवताओं के माहात्म्य भी छन्दोबद्ध भाषा में पाये जाते हैं। इस युग के सब काव्यों में वैष्णव काव्य ही खिले हुए फूलों के समान स्वाधीन मनमोहन भावपूर्ण सुगन्ध फैला रहे हैं। विद्यापति, चण्डीदास, गोविन्ददास आदि से आरम्भ कर पिछले काल के कवि कंकण, कृत्तिवास आदि के काव्यों में आध्यात्मिक प्रेमरस और भक्ति के गहरे भावों में डुबकी लगाने से अबतक चित्त में एक अपूर्व शुद्ध भगवत् प्रेम का आविर्भाव होने लगता है। सूर, तुलसी के भक्ति रस के समान बंगाली भक्त-कवियों के भी निश्चल निष्काम भगवत् प्रेम की छटा अब तक बंगाल के हिन्दू समाज़ पर अपना सम्पूर्ण मधुर प्रभाव जमाये हुए है। विद्यापति मैथिल थे परन्तु बंगाली भी विद्यापति को अपना ही कवि मानते हैं। याज्ञवल्क्य, गार्गी, आदि के समय ही से चैतन्यदेव के समय तक मिथिला बंगाल का गुरू रहा है, और मिथिला का न्याय नदिया में जाकर नये उद्यम से प्रस्फु-

टित हुआ है। सुनते हैं कि मैथिल गुरू बंगाली शिष्यों को सब पाठ कंठ करवा देते थे लिखी हुई पोथियां घर लेजाने की आज्ञा नहीं देते थे, परन्तु एक श्रुतिधर प्रतिभाशाली बंगाली विद्यार्थी ने अपनी सारी विद्या कण्ठ करके नदिया लौटकर उसे फिर ज्यों का त्यों लिखडाला और उस समय से नदिया में भी संस्कृत शास्त्रों की शालाएं या चतुष्पाठियां जारी होगयीं। अस्तु, यह कथा अप्रासंगिक है। इससे आज के निबन्ध से कुछ सम्बन्ध नहीं। हमारा आशय यही है कि कि मिथिला बंगाल की गुरु-भूमि है और मिथिला के वैष्णव कवि विद्यापति बंगाल के भी सम्मानित कवि हैं। इस बात से यह भी स्पष्ट है कि उस काल में मिथिला और बंगाल के काव्यों की भाषा में कुछ अन्तर नहीं था—चाहे लिपि वा कथित भाषा में कुछ भेद पाया भी जाता हो। प्राचीन हिन्दी में जिस भांति मुसलमान कवियों के काव्य की छटा मिलती है, बंगाल में भी मुसलमान युग में मुसलमान कवियों ने वैष्णवी कथाओं पर गीतें रची हैं इस युग की भाषा के साथ हिन्दी और मैथिली तथा उड़िया शब्दों के मेल बहुतायत से पाये जाते हैं। भाषा के विषय में यह सब लगभग मिलते जुलते थे। पहिराव भी उस समय सब के एक ही से थे। बंगाली भी उस समय पगड़ी बांधते थे। आज कल की भांति सिर नंगे नहीं रहते थे, और उनकी स्त्रियां भी व्रजवासियों के समान स्तनावरण अंगिया वा "कांचुली" पहरती थीं। अंगरेजी राज के अभ्युत्थान के पहले पलासी के युद्ध के समय तक रानियां और राजवधू तथा राजकन्याएं पट्ट वस्त्र यानी रेशमी साड़ियां पहरती थीं, और विवाहादि शुभ उत्सवों के अवसरों पर हिन्दी भाषिणी बहिनों ही के समान अंगिया, लहंगा, और ओढ़नी ही से अपने शरीर की सुन्दरता बढ़ती समझती थीं। वैष्णव कवि ने भी बंगालिन सुन्दरी के सम्बन्ध में लिखा है कि

"नील ओढ़नार माझे मुख शोभा पाय"।

इसके सिवाय

"कटितटे क्षुद्र घंटिका भाल साजे"।

उसकी कमरों में छोटी छोटी घंटियां रहती थीं। अब समय के फेर से उसी बंगाल में पुरुष नंगे सिर को हैट से ढकने लगे हैं और नारियों को शमीज, जाकेट से अंग की शोभा बढ़ानी पड़ती

है। सब देशों में काल की धारा ऐसे ही परिवर्तन दिखलाया करती है। और भी सुनिए—प्राचीन बंगाली मद्रासियों और उड़ियों की भांति लम्बे केश रखाते थे। चैतन्य देव ने जब सन्यास लेते समय केश मुड़ा डाले उनके चेले चपाटी विलाप करने लगे,—"हाय अब हम उन सुन्दर लम्बे केशों को आंवले से नहीं धो सकेंगे"। चैतन्य महा प्रभु के समय आंवले ही से केश-संस्कार होता था, उस समय सुगन्धी तेल और साबुन का जन्म नहीं हुआ था।

कवि चंडीदास की रचना की भाषा "व्रजबुली" के नाम से प्रसिद्ध थी। यह बंगला "व्रजबुली" व्रज की विशुद्ध बोली नहीं थी। इसे बंगला, मैथिल और हिन्दी की एक प्रकार की अद्भुत खिचड़ी कहनी चाहिये।

इसी समय के साहित्य से सिद्ध होता है कि बंगाली वणिक समुद्र-यात्रा करते थे और लंका तथा जावा आदि के साथ बंगाल का व्यापार खूब चमका हुआ था। इस व्यापार में बंगाली सेठ या श्रेष्ठी खूब लाभ पाते थे। ढाके का मलमल इस समय से और भी २०० वर्ष पीछे बनने लगा था, परन्तु उस समय के "खनि" नामक वस्त्र को हाथ में लेकर सिंहल राज ने बड़ी प्रशंसा की थी। इन समुद्र-यात्राओं में जहाज़ या नाव टूटते भी बहुत थे, परन्तु पापी पेट सब को घर से बाहर ले ही जाता था। अब भी समुद्र तट के बंगाली और उड़िया मुसलमान अंगरेज़ी जहाजों पर खल्लासियों का काम करते हैं और अमेरिका तथा इंगलैंड तक जाया करते हैं।

उस समय भांड प्रतिभांड या द्रव्यों की अदला-बदली से व्यापार चलता था, परन्तु बाज़ारों का नित्य का साधारण काम कौड़ियों से निबट जाता था।

इसी युग में चैतन्य महाप्रभु का अभ्युदय हुआ था। चैतन्य जी के साथ साथ उनकी भक्त-मंडली में अनेक कवियों का भी प्रकाश होने लगा था। चैतन्य जी प्रेम के अवतार माने जाते थे। उनके शिष्यों ने भगवत् प्रेम का अच्छा वर्णन किया है। ४०० वर्ष हो गये, आज दिन अंगरेज़ी शिक्षा के अभिमान से छाती फुलानेवाले समाज ने जिस भ्रातृत्व-बन्धन को स्थापित करने में सफलता नहीं पायी, एक दरिद्र ब्राह्मण-कुमार ने चैतन्य रूप में समाज के सिर और पैर-

ब्राह्मण और चाण्डाल तक—को एकता के सूत्र में, प्रेम की डोरी से, बांध लिया था। चैतन्य के जीवनी लेखकों की संख्या थोड़ी नहीं है। परन्तु गोविन्ददास नामक एक चेले ने जो जाति का लोहार था-और जो चैतन्य के साथ सारे भारतवर्ष का दर्शन कर चुका था-उनकी यात्रा का जो वर्णन लिखा है वह अमूल्य है। गोविन्ददास ने उड़िष्या, दक्षिण देश, महाराष्ट्र, गुजरात आदि की जो बातें आंखों से देख कर लिखी हैं, और उन देशों में प्रभु की लीला की जो गाथा गायी है, वह बहुत मनोहारिणी और शिक्षाप्रद है।

इस युग के साहित्य में हिन्दी मसालों की विशेष पुष्टि हुई है। आज कल जैसे अंगरेज़ का राज्य है। उस समय उसी प्रकार बृन्दावनी भाषा का राज्य था। बंगाली उस समय बृन्दावन को धरती का स्वर्ग समझते थे। और उसी समय राजपुताने के राजवाड़ों तक में बङ्गाली विद्वानों की प्रतिष्ठा होने लगी थी। उन्हींके वंशधर आज तक जहां तहां राजपुताने में राजगुरु की उच्च पदवियों पर पाये जाते हैं। बङ्गाल ही में जीवन व्यतीत करनेवाले कवियों का हिन्दी अनुकरण की चेष्टा बहुत सफलता नहीं पा सकी। बङ्गाली पदावलियों में मैथिल अनुकरण जैसा सुन्दर लगता है, बृन्दावनी अनुकरण में वह मिठास नहीं आती। ऐसी कविताएं न हिन्दी रहीं, न बङ्गला। एक नमूना देख लीजिएः—

> कांहे को शोच करो मन पामर,
> राम भज, तुहुं रहना दीना।
> इष्ट कुटुम्बक छोड़ दे आश, ए संसार असार,
> एक उह नाम विना॥
> जो कीट पतङ्गक, आहार योगाओत,
> पालक हय उहि एक जना॥
> कवि सत्य कहे, मन थिर रहो,
> यिनि दिंहा दन्त, सो देगा चना॥

प्राचीन वैष्णव साहित्य में कुछ उर्दू शब्दों का भी प्रयोग देखा जाता है। इतना ही नहीं देवता तक मुसलमान हो गये हैं। यहां जैसे सत्य नारायण की कथा प्रचलित है, बङ्गाल में उसी प्रकार उसी कथा का रूपान्तर होकर सत्य पीर को कथा बन गयी। नारायणजी मुसलमानी जामा पहिर कर पीर बन गये! अंगरेज़ी राज्य के

प्रारम्भ में भारतचन्द्र कवि ने भी बहुत उर्दू शब्दों का प्रयोग किया है।

वैष्णव युग के बाद शाक्त युग की पारी आई। इस युग में चंडी वा दुर्गाही की लीला पर पुस्तकें तथा बड़े २ सुन्दर मनोहर काव्य-ग्रन्थों की रचना भक्त कवियों ने की है। संस्कृत शालाओं में बंगला तथा देव नागरी दोनों प्रकार के अक्षर प्रचलित थे विद्या की चर्चा बड़े जोर से होती रही। स्त्री-शिक्षा की भी कमी नहीं थी कई स्त्री-कवियों की मनोहारिणी रचनाएं पायी जाती हैं तथा काव्यों में भी स्त्रियों के साक्षर होने के प्रमाण मिलते हैं। परन्तु अशिक्षित स्त्रियों में जादू टोना आदि का भी प्रचार था। स्त्रियों के पातिव्रत धर्म के बड़े मधुर हृदयग्राही दृष्टान्त गाये गये हैं।

इस युग के बाद जो युग आया वह महाराजा कृष्णचन्द्र के समय में था। और यह युग सिराजुद्दौला और पलासी को लड़ाई का समसामयिक था। राजा कृष्णचन्द्र नदिया के राजा थे। इनकी सभा में बड़े बड़े विद्वान, कवि, नैयायिक, कूट-राजनीतिज्ञ तथा पक्के भांड़ मसखरों तक का समावेश था। इन्हीं राजा कृष्णचन्द्र ने बंगाल से मुसलमानी राज्य उखाड़ने में कूट राजनीति का भी खेल खेला था। परन्तु हमको इस निबन्ध में इनके काव्यानुराग ही से मतलब है। प्रसिद्ध कविवर भारतचन्द्रराय गुणाकर इन्हींके समय में उत्पन्न हुए परन्तु दुःख से कहना पड़ता है कि ऐसे शिक्षित और चतुर राजा की सभा में शृङ्गार रस की कविताओं का ही बहुत अधिक भरमार रहा। उसी समय गोप नाऊ तथा धोबी आदि श्रेणी के भी कुछ कवियों का आविर्भाव हुआ, और अचरज की बात यह है कि ये कवि संस्कृत में भी पारंगत थे। हरिवंश, नैषध, तथा कई पौराणिक अख्यानों को इन छोटी जाति के कवियों ने बंगला में लिखा! एक गोप ने क्रियायोगसार नामक एक ग्रन्थ की रचना की। विचार की बात है कि रुचि की धारा भी संसार में विचित्र नियमों से प्रवाहित होती है। जहां एक ओर शूद्रों ने उच्च विचार पूर्ण सुरुचिकर विषयों पर काव्य रचना की वहीं, उसी काल में, ब्राह्मण तथा उच्च वंशाभिमानी शृंगार रस की कीचड़ में लथपथ लोटने लगे। कहा जाता है कि मुसलमानी प्रभाव में पड़कर वंग-साहित्य में इस प्रकार कलुष की धारा बहने लगी थी।

सन् १७७२ ई० में आनन्दमयी नाम की एक विदुषी स्त्री-कवि का विकाश हुआ। इसी कुल में आगे चलकर फिर एक स्त्री-कवि का जन्म हुआ।

बंगाल में आज से ४०-५० वर्ष पहले तक गीति काव्यों का अच्छा ज़ोर था। सभा में खड़े होकर दो पक्ष के कवि आपस में आशुकविता की सहायता से वाद विवाद और बहुधा व्यंग के साथ गाली गलौज तक करते थे। इस प्रकार की कवियों की लड़ाई हमने भी अपनी बाल्यावस्था में देखी है। इस श्रेणी के कवि आशुकवि होते थे, और कविता गाने में बहुत ही चतुर होते थे। कुछ दिन तक कवियों की लड़ाई का ज़ोर इतना बढ़ गया था कि एन्टोनी नामक एक बंग-काव्य प्रेमी पोर्तुगीज़ (योरोपियन) तक ने इस काव्य-धारा में गोता मार दिया था। ऐन्टोनी के विषय में कहा जाता है कि वह बंगालियों की भांति धोती दुपट्टामात्र पहिर कर नंगे बदन सभा में आकर काव्य सुनाता था, और उसके किसी विपक्षी दल के नायक ठाकुर सिंह ने एक बार उस पर आक्रमण करके कहा था कि हे ऐन्टोनी! कहो, यहां आकर तुमने अपनी कुर्त्ती और टोपी कहां गवां दी?" ऐन्टोनी ने झट उठकर कविताही में उत्तर दिया "ठाकुर सिंह के बाप का दामाद बनकर मैं बड़े आनन्द से हूं, और इसी लिए बंगाली बनकर मैंने योरोपियन वेष त्याग दिया है।" एक दूसरे कवि ने एक बार कविताही में कहा, "साहब! तूने कृष्ण के चरणों में मूड़ मुड़ा लिया तेरे पादरी साहब सुनेंगे तो तेरे मुख पर चूना और कारख पोत देंगे इस पर साहब ने उत्तर दिया:—

"खृष्टे आर कृष्टे किछु भिन्न नाई ई भाई।
शुधु नामेर फेरे मानुष फेरे, ए त कोथा शुनि नाई॥
आमार खुदा ये हिन्दूर हरि से,
ऐ देख श्याम दांड़िये आछे,
आमार मानव जनम सफल हवे
यदि राङ्गा चरण पाई॥

खृष्ट में और कृष्ण में कोई भेद नहीं है इत्यादि। इसी काल में रासधारियों की भांति यात्रावालों का भी बहुत विकाश हुआ। यात्रा और आधुनिक थियेटर में भेद इतना ही है कि यात्रा में मंच

का पटादिकों की प्रयोजनीयता नहीं रहती। नहीं तो पात्र और वस्त्रादिक सब बातों में नाट्यकारों की ही शैली रहती है। बंगाल में उच्च श्रेणी के नाट्यकारों की अभी तक इतनी अधिकता है जो हिन्दी के लिये अनुकरणीय है।

इसी प्रकार दिनों दिन बहुत प्राचीन काल से बंगाल में काव्य-कला की उन्नति होती रही है। परन्तु राजा कृष्णचन्द्र ही के समय से गद्य लिखने की प्रणाली भी चल निकली थी, आज कल के गद्य से उस समय का गद्य अनेक अंशों में क्लिष्ट और निकृष्ट ही होता था, परन्तु (सन् १८११ से १८५८ ईसवी तक) ईश्वरचन्द्र गुप्त के अभ्युदय-काल में गद्य और पद्य दोनों की धारा प्रबल होगयी। ईश्वर गुप्त बंगला में सबसे पहले समाचार-पत्र के प्रतिष्ठाता थे। ईश्वर गुप्त बड़े रसिक और व्यंगप्रिय थे। संसार में कोई भी सामग्री नहीं थी जो ईश्वर के व्यंग से बच सकी हो। ईश्वर के प्रभाकर के प्रतिद्वन्दी बनकर एक और महाशय ने एक दूसरा समाचार-पत्र निकाला। दोनों पत्रों में खूब नोक झोंक होती थी और उनकी दिल्लगियां और वाद विवाद पढ़ने के लिये पठित सामज को बड़ा आग्रह रहता था। इस प्रकार वर्त्तमान युग के विकाश काल में पठन पाठन और लेखन-कला की उन्नति होती रही। बंकिम बाबू ने इन्हीं ईश्वर गुप्त के लेखों को पढ़ पढ़कर साहित्य-क्षेत्र की शिक्षा-नवीसी की थी। परन्तु आगे की बातें वर्त्तमान युग में आती हैं। उनका वर्णन किसी दूसरी बार करने की इच्छा है। आज यहीं तक। लेख बढ़ा जाता है।

अमेरिका में सम्पादन-कला का शिक्षालय

[लेखक—श्रीयुत जगन्नाथ खन्ना]

अमेरिका देश के प्रधान नगर न्यूयार्क में एक बड़ा प्रभावशाली दैनिक समाचार-पत्र "वर्ल्ड" नामक निकलता है। दिन में इसके कई अंक निकलकर लाखों की संख्या में बिक जाते हैं।

जान पुलिज़र नामक एक प्रसिद्ध विद्वान इस पत्र के कुछ वर्ष हुए सम्पादक थे। इनके सम्पादकत्व काल में इस पत्र ने बड़ी प्रसिद्धि और स्थिति प्राप्त की थी। सम्पादक पुलिज़र की मृत्यु १९११ का २९ अक्टूबर को होगई। मृत्यु के समय यह साठ लाख रुपये सम्पादन-विद्यालय खोलने के लिये छोड़ गये और किस प्रकार वह विद्यालय

चलाया जावे यह भी वह अपने मित्रों को समझा गये।

मृत सम्पादक पुलिज़र के आदेशानुसार न्यूयार्क नगर के कोलम्बिया युनिवर्सिटी नामक विराट् विश्वविद्यालय के साथ और उसकी अध्यक्षता में १९१२ की ३० सितम्बर को सम्पादन-विद्यालय खोला गया। इस विद्यालय के लिये न्यूयार्क नगर के बीच एक बड़ा विशाल भवन बनवाया गया है, जिसमें सम्पादन के सब सामान इकट्ठे किये हैं। विद्यालय खुलने के एक महीने के बाद १ नबम्बर को १०४ विद्यार्थी इस विद्यालय में प्रविष्ट होगये थे, जिनमें ग्यारह स्त्रियां थीं। इसमें चार वर्ग बनाये गये। प्रथम वर्ग में ६१ विद्यार्थी थे, द्वितीय वर्ग में १५, तृतीय वर्ग में १४ और चतुर्थ वर्ग में भी चोदह विद्यार्थी थे।

इस विद्यालय में प्रवेश करने के लिये एक परीक्षा होती है परीक्षा में उत्तीर्ण होने पर विद्यार्थी लिये जाते हैं, किन्तु योग्य और अनुभवी पत्रों के सम्पादक बिना परीक्षा के भी ले लिये जाते हैं। इस विद्यालय में देश और कितने ही विदेशों के सम्पादक सम्पादन की शिक्षा ग्रहण करने आते हैं। चीन, जापान, टर्की, पर्शिया इत्यादि भिन्न२ देशों के विद्यार्थी इस समय यहां शिक्षा पा रहे हैं; किन्तु भारतवर्ष का अभी तक वहां कोई भी विद्यार्थी नहीं है। विद्यार्थियों को चार वर्ष तक रहना पड़ता है और चार वर्ष के बाद "Bachelor of Literature in Journalism" की डिग्री मिलती है। किसी युनिवर्सिटी के बी० ए० परीक्षा में उत्तीर्ण हुये विद्यार्थी को कम ही समय तक रहना पड़ता है।

इस विद्यालय में अमेरिका देश के बड़े प्रसिद्ध और योग्य पच्चीस पत्र-सम्पादक अध्यापक के कार्य पर नियुक्त किये गये हैं। इन योग्य सम्पादकों की अध्यक्षता में रह कर विद्यार्थी सम्पादन की असली शिक्षा पाते हैं।

विद्यालय की शिक्षा-प्रणाली तथा अध्यापकों को सम्मति देने के लिये न्यूयार्क नगर तथा अमेरिका के अन्य नगरों के १२ प्रसिद्ध समाचारपत्रों के सम्पादकों की एक कमेटी बनाई गई है। प्रबन्ध का कार्य कोलम्बिया युनिवर्सिटी के प्रधान करते हैं। विद्यार्थियों को देश-देशान्तर के इतिहास साहित्य, विज्ञान और गणित इत्यादि

विषयों में स्वयम् कोलम्बिया युनिवर्सिटी के अध्यापक पढ़ाते हैं। केवल सम्पादन की शिक्षा के लिये पच्चीस सम्पादक नवीन नियुक्त किये गये हैं। फ़िलेडेल्फ़िया नगर के "प्रेस" नामक दैनिक पत्र के पुराने और अनुभवी सम्पादक डाक्टर टैल्काट विलियम इस विद्यालय के मुख्याध्यापक नियुक्त हुये हैं।

अमेरिका देश में इसके अतिरिक्त बीस से अधिक ऐसी और भी युनिवर्सिटियां हैं जो सम्पादन की शिक्षा देती हैं। इनमें से कई में सम्पादन के पृथक विद्यालय भी हैं। किन्तु ऐसा कोई अन्य स्कूल नहीं है जिसमें इतना धन हो जितना इस न्यूयार्क के नवीन सम्पादन विद्यालय में है। बड़ी बात तो यह है कि यह विद्यालय कोलम्बिया युनिवर्सिटी की शाखा बना दी गई है जिस महाविद्यालय में पहिले से सात सौ चौवालिस ७४४ अध्यापक हैं, जिसमें अन्य ६७७० विद्यार्थी हैं और जिसके पुस्तकालय में ४,५०,००० साढ़े चार लाख पुस्तकें भिन्न २ विषयों पर हैं। यह विराट पुस्तकालय इस सम्पादन-विद्यालय के विद्यार्थियों के लिये मुफ़्त खुला रहता है।

इस विद्यालय में अधिक समय अमली शिक्षा में लगाया जाता है जिसके लिये न्यूयार्क से अधिक अच्छा अन्य कोई नगर संसार में नहीं हो सकता है। विद्यार्थी नगर की घटनाओं की जांच करने को नगर की गलियों में भेजे जाते हैं। अकेले न्यूयार्क नगर में ८७८ पत्र निकलते हैं। इन पत्रों में सम्पादकों के सहायतार्थ इस विद्यालय से विद्यार्थी भेजे जाते हैं। जहां उन्हें तरह २ के विषयों पर लेखी लिखना सिखलाया जाता है। न्यूयार्क के थियेटरों में नाटक की आलोचना करने को भी ये विद्यार्थी भेजे जाते हैं और विद्वानों के व्याख्यानों के भी ये समालोचक बन कर जाते हैं। इन्हें सम्पादन के सब प्रकार के कार्य अमली तौर पर सिखला दिये जाते हैं। न्यूयार्क के राजनैतिक दल भी इन्हें अपने यहां निमन्त्रण करके राजनैतिक शिक्षा देते हैं।

इस प्रकार इस स्कूल में सम्पादन की शिक्षा पूरी २ विद्यार्थियों को दी जाती है। यदि भारतवर्ष से कुछ योग्य हिन्दी पत्रों के सम्पादक अमेरिका जाकर इस विद्यालय में तीन वा चार वर्ष शिक्षा ग्रहण करें तो वे हिन्दी की बड़ी उन्नति कर सकते हैं। पत्र-सम्पादन में अधिक अनुभव प्राप्त होने के साथ ही साथ उन्हें संसार के इतिहास,

देश देशान्तरों के कानून, राजनीति, अर्थ-शास्त्र तथा मिन्न २ दे की वर्तमान राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक तथा आर्थिक अवस्था का पूरा २ अनुभव प्राप्त हो जावेगा।

मेरा प्रस्ताव है कि एक हज़ार रुपये की प्रथम स्कालर्शिप (छात्र-वृत्ति) कोई धनवान हिन्दी का प्रेमी आगामी लखनऊ के हिन्दी साहित्य सम्मेलन में किसी योग्य हिन्दी लेखक को, विशेषकर किसी सुयोग्य सम्पादक को, देकर अमेरिका भेजे जहां वह सम्पादक जाकर सम्पादन की शिक्षा ग्रहण करे। मेरा विचार और अनुभव है कि न्यूयार्क नगर में सम्पादन विद्यालय में रह कर कोई थोड़ा सा परिश्रमी विद्यार्थी भारतवासी अपनी जीविका उपार्जन कर सकता है। इस लिये यदि किसी उत्साही हिन्दी पत्र के सम्पादक में इतना साहस है कि विदेश में जाकर अपने हाथों से मेहनत कर अपनी जीविका उपार्जन करने पर तैयार हो तो उसे यह एक हजार रुपये की एक रकम दी जावें जिसमें से वह जहाज के किराये से बचे हुये पांच सौ रु० के करीब से अपना आठ महीने वहां प्रथम वर्ष में निर्वाह करे। फि गर्मी के अवकाश में धनोपार्जन कर दूसरे वर्ष पढ़े। क्या यह आशा व्यर्थ है कि राष्ट्रभाषा का दम भरनेवाली हिन्दी भाषा का कोई धनवान सपूत आगामी सम्मेलन के अवसर पर इस छात्रवृत्ति को दे हिन्दी संसार को लाभ पहुंचाएगा ?

समालोचना

[समालोचक के विचारों के लिये सम्पादक उत्तरदाता नहीं है]

मिश्र-बन्धु-विनोद

अथवा

हिन्दी साहित्य का इतिहास तथा कविकीर्तन

[समालोचक पंडित इन्द्रनारायण द्विवेदी]

इस पुस्तक का विषय उसके नाम से प्रकट होता है। इस ग्रन्थ के रचयिता हैं हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक मिश्र-बन्धु (पं० गणेशविहारी मिश्र. श्याम विहारी मिश्र एम० ए० और शुकदेव विहारी मिश्र बी० ए०) ग्रन्थकर्ताओं ने इस पुस्तक को नागरी-प्रचारिणी-सभा (काशी) की प्रेरणा से बनाया और वर्तमान महाराज रीवां

समर्पित किया है। प्रयाग और खण्डवा की हिन्दी ग्रन्थ प्रसारक मण्डली ने इण्डियन प्रेस (प्रयाग) में छपाकर इसे प्रकाशित किया है। ग्रन्थ का प्रथम भाग इस समय हमारे सम्मुख है। यद्यपि पूरे ग्रन्थ के देखने ही पर उसके ऊपर पूरी सम्मति दी जा सकती है तथापि प्रकाशित भाग पर विचार करना अनुचित भी न होगा। मिश्र-बन्धुओं ने लिखा है, यह ग्रन्थ उनके १२ वर्ष के परिश्रम का फल है, सो ठीकही है, क्योंकि इस ग्रन्थ के लिखने में बड़े खोज की आवश्यकता पड़ी है। ग्रन्थ की १०४ पृष्ठों की वृहद् भूमिका में साहित्य की समालोचना के रूप में अनेक साहित्यिक बातों का विचार है। भूमिका के अन्तिम २१ पृष्ठों में ग्रन्थकर्ताओं ने अपने सम्बन्ध की बातें कहीं हैं। प्रथम भाग में भूमिका के अतिरिक्त ३२० पृष्ठ हैं। हिन्दी के प्रथम कवि (ग्रन्थकर्ताओं के विचार से) पुण्ड अथवा पुष्य (जिसका जन्म संवत् ७७० में हुआ था) से लेकर वर्तमान कवियों तक का श्रेणी-विभाग, और हिन्दी की अवस्था पर विचार ७ अध्यायों में किया गया है। आठवें अध्याय से आदि प्रकरण प्रारम्भ होता है जिसमें प्रारम्भिक एवं पूर्वमाध्यमिक हिन्दी तथा प्रौढ़माध्यमिक हिन्दी पर विचार है। आठवें अध्याय में हिन्दी की उत्पत्ति और काव्यलक्षण का विचार करके पुण्ड कवि से वर्णन प्रारम्भ होता है और यह वर्णन १७वें अध्याय में ग्रन्थ की समाप्ति के साथ साथ समाप्त होता है। ग्रन्थ बहुत परिश्रम और योग्यता से लिखा गया है और इतिहास के उपकरणों का संग्रह भी इसमें बहुत अच्छा है। छपाई और सफाई के लिए इतनाही लिख देना बहुत है कि पुस्तक इण्डियन प्रेस (प्रयाग) की छपी है। इतनी बड़ी पुस्तक का मूल्य १॥) कम है और हिन्दी-प्रेमीजनों के संग्रह करने योग्य पुस्तक है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं। हमारे हिन्दी साहित्य में इस प्रकार की पुस्तकों की अत्यन्त आवश्यकता है और जहां तक हम को ज्ञात है अभी तक इस ढङ्ग की कोई दूसरी पुस्तक हिन्दी में नहीं प्रकाशित हुई है। मिश्र बन्धुओं ने इस पुस्तक को लिख कर समस्त हिन्दीप्रेमियों को बाधित किया है। हिन्दी साहित्य के इतिहास की बहुत सी सामग्री इस ग्रन्थ में मिलती है। जो बातें हिन्दी साहित्य के अनेक वर्षों तक पढ़ने पर ज्ञात हो सकती थीं उनके जानने के लिये इस एक

ही ग्रन्थ का पढ़ जाना बहुत कुछ है। यद्यपि यह हिन्दी साहित्य का इतिहास नहीं कहा जा सकता क्योंकि इसमें इतिहास की रीति का अवलम्बन नहीं किया गया है, तथापि इस ग्रन्थ की सहायता से हिन्दी साहित्य के वास्तविक इतिहास के लिखे जाने में बहुत कुछ सहायता मिल सकती है। किन्तु मिश्र-बन्धुओं ने इस पुस्तक में कुछ विषयों पर ऐसी सम्मतियां प्रकाशित की हैं, जिनके सम्बन्ध में कुछ लिखना मुझे उचित जान पड़ता है।

किसी व्यक्ति-विशेष की रचित और प्रकाशित पुस्तकों के बड़े बड़े दोषों से उतनी अधिक हानि होने का भय नहीं रहता जितना भय किसी संस्था-विशेष—उस संस्था-विशेष जिसकी देश में प्रतिष्ठा हो और जिसके अनुयायी प्रायः अधिकांश स्वदेश-भाषा-भाषी लोग हों—के द्वारा प्रकाशित पुस्तकों के छोटे छोटे भी दोषों से होना सम्भव होता है। हमें दुःख से लिखना पड़ता है कि इस समय हमारी संस्थायें इस बात की ओर ध्यान नहीं दे रही हैं। मैं यहां पर संक्षेपतः पुस्तक के कुछ अंशों पर लिखना इस कारण से और भी उचित समझता हूं कि यह पुस्तक एक संस्था की ओर से प्रकाशित हुई है।

उदारता में अति

आज कल प्रायः बहुत सज्जनों का मत है कि प्रचलित किसी भाषा के स्थान में अप्रचलित संस्कृत शब्दों का प्रयोग करना उचित नहीं। यदि आवश्यक शब्द हमें प्रचलित रूप में अर्बी के मिलते हैं तो उनके स्थान में हमें संस्कृत के शब्दों को लिखने की आवश्यकता नहीं है। मुझे यह अनुचित उदारता ही जान पड़ती है। मेरे विचार में संस्कृत की पुत्री हिन्दी के लिए शब्दों की पूर्ति संस्कृत से होनी चाहिये। हमें उचित है कि हम ढूंढ़ ढूंढ़ कर सुन्दर मनोहर संस्कृत शब्दों का प्रयोग करें और जहां तक सम्भव हो अर्बी, फारसी आदि भाषा के शब्दों से दूर रहें क्योंकि प्रयोग ही करते करते तो शब्दों का प्रचलित होना सम्भव होता है। क्या प्रचलित करने के लिये प्रयोग के अतिरिक्त कोई दूसरा साधन है? अस्तु इस उदारता में हमारे मिश्रबन्धुओं ने इस पुस्तक में अति कर दी है। आप लोगों का कथन विलक्षण है, आप लोग कहते हैं कि जो संस्कृत के शब्द हिन्दी में लिखे जाते हैं उन्हें भी अशुद्ध लिखने में हानि नहीं। आप लोगों के शब्दों में यही बात इस प्रकार से कही गयी है :—

"कोई आवश्यकता नहीं है कि हम हिन्दी गद्य में भी शब्दों के शुद्ध संस्कृत रूप ही व्यवहृत करें।......संस्कृत शब्दों के रोज़ाना बोल चाल में प्रचलित रूप हिन्दी में क्यों न लिखे जांय और एकही शब्द को कई तरह लिखने में कौनसी हानि हुई जाती है ?" इत्यादि (भूमिका पृ० ७२)

आगे चलके आप लोग शब्दों के रूप दिखलाते हैं जिनमें के कुछ रूप ये हैं:—

वेष, भेष, वेश, वेश, भेस, भेख
महात्म्य, महात्म, महातम, माहातम, माहातम्य
क्षत्रिय, क्षत्री, छत्री
मण्डन, मन्डन, मंडन
सूर्य्य, सूर्य, सूर्ज सूरज, (भू० पृ० ७३)

ऊपर लिखे शब्दों के सम्बन्ध में आप लोगों का कथन है कि "हिन्दी में इन सब का वेधड़क व्यवहार होता है और होना चाहिये कोई आवश्यकता नहीं कि इनमें से कोई एक रूप अटल मान लिया जाय" (भू० पृ० ७३) इसके आगे आप लोग कहते हैं, कि "हिन्दी में शुद्ध संस्कृत शब्दों के प्रयोगों पर ज़ोर देना वैसा ही समझा जायगा कि जैसे कोई अङ्गरेजी में लैटिन शब्द लिखने का आग्रह करे" (भू० पृ० ७४) आगे चलकर आप लोग बङ्किम बाबू के "सौजन्यता" शब्द का व्यवहार दिखलाकर कहते हैं कि 'शब्दों के नूतन रूप बना लेने में भी हम कुछ हानि नहीं समझते' (भू० पृ० ७५) फिर आप लोग लिखते हैं कि "आज कल कितने ही लेखकों का मत है कि पद्य में तो हिन्दी में प्रचलित शब्दों के रूपों (अपभ्रंशों) का लिखना उचित है परन्तु गद्य में शुद्ध संस्कृत शब्द ही लिखने चाहिएं...कोई कारण नहीं है कि पद्य में तो हिन्दी शब्दों (अपभ्रंशों) का प्रयोग हो परन्तु गद्य में उनका स्थान एक दूसरी भाषा (?) के शब्द लेलेवें हिन्दी के स्वत्व पर संस्कृतादि भाषाओं का ऐसा अधिकार जमना घोर अन्याय है"।

इस विचार के सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि जिनको कविता करने की आवश्यकता पड़ती है उनके हृदय से आप पूछिये कि पद्यमें अशुद्ध संस्कृत शब्दों का प्रयोग वे क्यों करते हैं। मेरा तो विश्वास है

और पूरा विश्वास है कि पद्य लिखते समय छन्द के अनुरोधसे कवि को विवश होकर अशुद्ध शब्दों का प्रयोग करना पड़ता है और इसी लिये संस्कृत के कवियों का मत है कि "अपिमासं मसं कुर्यात् छन्दो भङ्गं न कारयेत्" अर्थात्—मास को चाहे मस करदे किन्तु छन्दाभङ्ग करके मास न लिखे। मुझे आश्चर्य होता है कि मिश्र-बन्धुओं ने यह कैसे लिखा कि पद्य में जिन शब्दों का प्रयोग जिन रूपों में होता है उन्हीं रूपों में उन शब्दों का प्रयोग गद्य में भी होना चाहिये। अधपढ़े हिन्दी के लिखनेवाले की भी ऐसी हिम्मत नहीं पड़ सकती कि वह हनुमान के लिये हनुमन्ता और तुरन्त के लिये तुरन्ता शब्द का प्रयोग करे जैसा कि गो० तुलसी दासजी ने अपनी चौपाई में प्रयोग किया है।

जेहि गिरि चरण देइ हनुमन्ता।
सो चल जात पताल तुरन्ता॥

(तुलसीकृत सुन्दरकाण्ड)

यह एक मोटी सी बात है, इसके लिये अनेक उदाहरणों का देना व्यर्थ है। साधारण मनुष्य भी गद्य और पद्य के शब्दों के रूप में भेद का कारण समझता है। यदि मिश्र-बन्धुओं की बात मान ली जाय तो अपभ्रंश शब्दों के प्रयोगों से हिन्दी भाषा, बड़ी कठिन हो जायगी और अभी तक इसमें जो यह गुण है कि इसे अन्य-भाषा-भाषी भारत-वासी सहज ही में जान लेते हैं सो जाता रहेगा क्योंकि एकही शब्द को अनेक रूपों में देखकर वे घबड़ा जायंगे। संस्कृत व्याकरण के आचार्य, महर्षि पतञ्जलि ने भाष्य के लिखते समय इस बात पर विचार किया है। उन्होंने लिखा है कि यदि हम यह बात बतलावें कि अशुद्ध रूप इतने हैं तो बहुत बात बढ़ जायगी क्योंकि एक एक शुद्ध शब्द के अनेक अपभ्रंश शब्द (अशुद्ध शब्द) प्रचलित हैं (देश भेद से) इसलिये हम शुद्ध रूप ही को यहां बतलावेंगे। विचार की बात है कि एकही शब्द को देश-भेद से हम अनेक रूपों में बिगड़ा हुआ पाते हैं, यदि हम बिगड़े हुए रूपों को न लिखकर शुद्ध संस्कृत रूप उसका लिखें तो सभी प्रान्त के लोग उसे अपने अशुद्ध रूप का मूल शब्द समझ सकेंगे और भ्रम न होगा क्योंकि संस्कृत में प्रान्तिक भेद नहीं है और यदि अपभ्रंश (अशुद्ध) शब्दों का प्रयोग किया गया तो जिस प्रान्त में उसका व्यवहार होगा

उसके अतिरिक्त दूसरे प्रान्त के लोग उसको नहीं समझ सकेंगे। हमारे आश्चर्य का ठिकाना इससे और भी नहीं रहता कि आप लोग कहते हैं कि शुद्ध रूपों को बिगाड़कर शब्दों के नूतन रूप बना लेने में भी हम कुछ हानि नहीं समझते! यदि मनमाने रूप बनाये जाने लगेंगे तो हिन्दी की क्या गति होगी? किसी अन्य भाषा के शब्द के स्थान में अथवा किसी विषय के पारिभाषिक शब्द के लिए शुद्ध संस्कृत से यौगिक शब्द बना लेना दूसरी बात है किन्तु व्याकरण को व्यर्थ बना देनेवाले अशुद्ध रूपों की भरमार के लिये आप लोगों की यह निर्भीकता हिन्दी के लिये मेरे विचार में हानिकर होगी।

अनेक रूप से शब्दों के लिखने में भी कठिनता बढ़ जायगी। बिना कारण शुद्ध शब्दों के स्थान में अशुद्ध शब्दों के प्रयाग से अर्थ का अनर्थ हो जाना सम्भव है, क्षत्रिय और छत्री के अर्थ को विचारिये, सूर्य और सूरज को देखिये तथा माहात्म और महातम का अन्तर विचारिये। छत्री का अर्थ होगा छत्र के धारण करने वाला मनुष्य, सूरज का अर्थ होगा वीर का पुत्र और महातम का अर्थ होगा महा अंधेरा। क्या इसी अर्थ में क्षत्रिय सूर्य और माहात्म्य का भी प्रयोग किया जाना सम्भव है! कभी नहीं, आप कहते हैं कि "कोई आवश्यकता नहीं कि इनमें से कोई एक रूप अटल मान लिया जाय" समझ में नहीं आता कि जिन शब्दों को सारा संसार एक रूप में अटल मानता है उनके अटल होने की बन्धुओं को आवश्यकता ही नहीं मालूम पड़ती।

स्वतन्त्रतामें अति

पिङ्गल का विचार करते हुए आप लोगोंने लिखा है कि "इस में मेरु, मर्कटी, पताका, नष्ट, उद्दिष्ट और प्रस्तार में सिवा कौतुक के और कुछ नहीं है" इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि साहित्य का पिङ्गल एक अङ्ग है और पिङ्गल का प्रधान अथवा प्रथम भाग वही है जिसमें मेरु आदि का वर्णन रहता है। जिस प्रकार पाटीगणित में परिकर्माष्टक को व्यर्थ मानना है उसी प्रकार पिङ्गल में इन ६ कर्मों को कौतुक मानना है। जिस साहित्य का इतिहास लिखा जाय उसके विषयों को—मुख्य २ विषयों को—कौतुक बतलाना एक कौतुकही कहा जायगा। आगे चलके आप लोग कहते हैं कि "गणागण विचार एवं दग्धाक्षर को हम बखेड़ा मात्र समझते हैं इनमें कोई सार पदार्थ

नहीं समझ पड़ता" इसमें आपका अधिक दोष नहीं है। जिस प्रकार लोग फलित ज्योतिष की ओर से श्रद्धा रहित हो रहे हैं और सभी कार्यों में देवी देवताओं पर विश्वास नहीं करते उसी प्रकार यहां गणागण और दग्धाक्षर के फलों और देवताओं के विचार को निःसार मानना अँगरेजी के पण्डितों के लिये आश्चर्य की बात नहीं है। तथापि जिस साहित्य का इतिहास लिखा जावे उसके मुख्य भागों में श्रद्धा का नाश करना स्वतन्त्रता का अति दोष है। भूमिका के पृ० ५६ में बन्धुओं ने लिखा हैं कि 'परन्तु लघु अक्षर' गुरू का काम कभी नहीं दे सकता' इसमें आप लोगों को भ्रम है क्योंकि छन्द के आचार्यों का मत है,—

"अनुस्वारीविसर्गी च दीर्घो युक्तपरस्तथा। वर्णो गुरुर्मतो ह्रप्रे पादान्ते चापि वा लघुः॥

अर्थात्—अनुस्वार और विसर्गयुक्त तथा युक्ताक्षर के पूर्व जो लघुवर्ण सो गुरू माना जाता है ह्र और प्र के पूर्व एवं पाद के अंत का जो लघुवर्ण सो आवश्यकतानुसार लघ अथवा गुरु दोनों का काम देता है। सारांश यह कि लघु अक्षर भी कभी २ गुरु का काम देता है। मिश्रबन्धुओं का इस विषय पर लेख भ्रमात्मक जान पड़ता है।

व्याकरण का विरोध

आपलोग संस्कृत, प्राकृत और हिन्दी सभी के व्याकरणों के विरोधी है। आप लिखते हैं "कि संस्कृत किसी समय में जनसमुदाय की भाषा रही होगी उसका चलन इसी कारण सर्वसाधारण से उठ गया होगा कि उसका व्याकरण परमपरिपूर्ण और सम्पन्न होने के कारण अति क्लिष्ट और दुर्ज्ञेय है। अतः हमारे विचार से हम लोगों का यह पवित्र कर्तव्य है कि हिन्दी को उस दशा में जा पड़ने से बचाया जावे" (७१—७२ पृ० भू०)" धीरे २ पण्डितों ने उसे (प्राकृतको) भी दुर्गम व्याकरण के अटल नियमों से जकड़ दिया जिसका फल यह हुआ कि थोड़े दिनों में वह लुप्त होगयी और धीरे २ हिन्दी ने उसका स्थान लिया। अभीतक हिन्दी में कोई परम दृढ़ व्याकरण नहीं स्थिर हुआ है, इसीसे वह दिनों दिन उन्नति करती जाती है। जिस समय उसका भी परम कठिन व्याकरण बन जायगा, तब वह भी मृतभाषाओं में परिगणित होने के लिये दौड़ने लगेगी, और देश में कोई दूसरी ही सुगम भाषा चल पड़ेगी" (८३ पृ० भू०)।

ऊपर के उद्धृत बचनों से पाठक समझ सकते हैं कि हमारे मिश्र-बन्धुओं का व्याकरण से कितना प्रगाढ़ बैर है। आप लोगों के मत से तो व्याकरण, भाषाओं की मृत्यु है !!! भला इस प्रकार के विचार को फैलाना हमारी हिन्दी संस्थायें स्वीकार करेंगी तो व्याकरण का नाम संसार में कैसे रह सकेगा ? मेरे विचार में इसमें मिश्र-बन्धुओं की भूल है। जिस व्यारण की 'बिना व्याकरणां वाणी' आदि-पद्यों में इतनी प्रशंसापूर्ण आवश्यकता बतलायी गई है, जिस व्याकरण की बदौलत ही आज सहस्रों वर्ष की प्राचीन भाषा (संस्कृत) भारतवर्ष के कोने कोने और विदेशों तक में बोली और समझी जा सकती है, जिस व्याकरण की आवश्यकता यहां तक मानी गई है कि उसको वेदों के छः अङ्गों में से एक प्रधान अङ्ग माना गया है और जिस व्याकरण का अस्तित्व प्रायः सभी सभ्य भाषाओं में किसी न किसी रूप में मिलता है, उसी व्याकरण का इतना बड़ा विरोध ऐसे पण्डितों की लेखनी से शोभा नहीं देता है। इतना ही नहीं इससे हिन्दी-भाषा-भाषियों में भ्रम फैलने का भय है। इस लिए समस्त हिन्दीप्रेमी विद्वानों को उचित है कि मिश्र-बन्धुओं के इस विचार का ज़ोर से विरोध करें और मिश्र-बन्धुओं को जानना चाहिये कि व्याकरण भाषा का जीवन है न कि मृत्यु। जिस भाषा का व्याकरण मौजूद है वह सहस्रों वर्ष की प्राचीन होने पर भी बोली और समझी जा सकती है अर्थात् व्याकरण ही उसका जीवन है।

आप लोगों ने व्याकरण सम्बन्धी—सन्धि, विभक्ति-प्रत्यय और लिङ्ग-भेद पर भी आक्रमण किया है। सबका सारांश यह है कि आप लोग कहते हैं कि हिन्दी ऐसी भाषा रहे जिसे सभी मनुष्य सरलता से समझ सकें। हिन्दी को सरल बनाने के लिये यह आवश्यक नहीं है कि उसे सब नियमों से छुड़ा कर एक जङ्गली भाषा बना दें। व्याकरण और उसके सारे नियमों का पालन करते भी भाषा की सरलता हो सकती है। इतना उत्कृष्ट व्याकरण होने पर भी संस्कृत भाषा को अनेक विद्वानों ने ऐसा लिखा है कि जिसे संस्कृत के न जाननेवाले भी अधिकांश में समझ सकते हैं। इस ढङ्ग के ग्रन्थ खुशीलाल शास्त्री (बरेली) के आप देख सकते हैं। किन्तु मेरे विचार में भाषा की सुगमता के लिए नीचे लिखी बातों

पर विशेष ध्यान देना चाहियेः—

(१) प्रचलित शब्दों का प्रयोग करना। अप्रचलित और निज कल्पित यौगिक शब्दों का प्रयोग न करना! [सरस्वती में साहित्याचार्य पं० रामावतार शर्मा एम० ए० के वे लेख जिनमें उन्होंने विदेशीय प्रदेशों एवं विद्वानों के नामों को अपनी कल्पना से संस्कृत के शब्दों में बदले हैं इस सम्बन्ध में देखने योग्य हैं]

(२) समास का अधिकता से व्यवहार न करना लाभदायक है। हिन्दी में समस्पन्न शब्दों के पढ़ने में और उसके समझने में अधिक कठिनता पड़ती है। समास करके लम्बे लम्बे शब्दों का बनाना ठीक नहीं है। मेरे विचार में भाषा को कठिन बनानेवाला मुख्य समास ही है।

समास के सम्बन्ध में हम मिश्र बन्धुओं के ही उदाहरण देंगे।

विना समास के शब्द		पं०	पृ०	मिश्रों के प्रयुक्त शब्द।
	भूमिका			
हिन्दी काव्यकी आलोचना ...	,,	५	६०	हिन्दी-काव्य-आलोचना।
का०ना० प्रचा० सभा की ग्रन्थ-माला	,,	१३	६४	काशी-नागरी-प्रचारिणी-सभा-ग्रन्थमाला।
उदाहरण का वाहुल्य ...	,,	५	१०४	उदाहरण-वाहुल्य।
	मूल ग्रन्थ	पं०	पृ०	
संसार का जातीय होड़ ...	,,	१०	१०६	सांसारिक जातीय-होड़।
दया का वाहुल्य ...	,,	११	१०६	दया-वाहुल्य।
हिन्दी भाषा का लेखन काल ...	,,	१६	१०६	हिन्दी-भाषा-लेखनकाल।
स्फुट विषय के सम्बन्धी ...	,,	१८	११६	स्फुट-विषय-सम्बन्धी।
विचार की स्वतन्त्रता ...	,,	१४	१७२	विचार-स्वतन्त्रता।
हिन्दी लेखन की प्रणाली ...	,,	२०	१७४	हिन्दी-लेखन-प्रणाली।
गद्यलेखन की शैली ...	,,	१५	१८२	गद्य-लेखन-शैली।

ऊपर लिखे शब्दों में यदि समास न करते तो साधारण मनुष्य को भी कुछ कठिनता समझने में न पड़ती। इसी प्रकार मिश्र बन्धुओं के और भी उदाहरण हैं। क्या व्याकरण के नियमों से डरनेवाले मिश्र-बन्धुओं में समास का प्रेम आश्चर्यजनक नहीं है? आप लोगों ने अप्रचलित संस्कृत शब्दों का प्रयोग भी अधिकता से किया है। इससे आपके ही कथन और कर्म में भेद जान पड़ता

है। प्रयोजन यह कि व्याकरण के नियमों का पालन करना भाषा को सरल बनाना है, न कि कठिन; और समास जैसे कठिन कारक, नियमों को स्वयं बुद्धिमान लेखक कम काम में लाते हैं।

वर्तमान लेखक गणना

पृष्ठ १७० में गद्य काल पर विचार करते समय मिश्र-बन्धुओं ने वर्तमान लेखकों और कवियों के नाम दिये हैं। जिनमें अनेक नाम ऐसे हैं कि जो प्रतिष्ठा अथवा अन्य किसी कारण विशेष से दिये गये होंगे क्योंकि उनके रचित कदाचित् ही छोटे मोटे दो एक ग्रन्थ हों। किन्तु जिन लेखकों ने अनेक पत्रों का सम्पादन किया है और जिनके लिखे पचासों ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं उनका नाम इसमें नहीं आया !!! उदाहरण के लिए हम चतुर्वेदी पण्डित द्वारका प्रसाद शर्मा, पण्डित जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल (प्रयाग), पंडित बाबूराव विष्णु पराडकर, पंडित अम्बिका प्रसाद बाजपेयी, बाबू राधामोहन गोकुलजी (कलकत्ता) पंडित लज्जारामशर्मा और इसी प्रकार अनके विद्वानों के नाम ले सकते हैं।

आक्षेप

आप लोगों ने संस्कृत के ज्ञाता हिन्दी के लेखकों पर बार बार आक्रमण किया है। इसमें सन्देह नहीं कि कोरे जो संस्कृत के पंडित हैं और केवल प्राचीन भाव जिनके हृदय में है उनके द्वारा हिन्दी को अधिक लाभ नहीं होसकता है। फिर भी इस समय जो संस्कृत के विद्वान हिन्दी के लेखक हैं और जो आदर्श हिन्दी लिखना अपना कर्तव्य समझते हैं उनपर यह आप लोगों का आक्रमण शोभा नहीं देता। संस्कृत भाषा को मृत भाषा और संस्कृत के विद्वानों को पगडवाज़ और उनसे हिन्दी के सम्बन्ध छूटाने की बात मिश्र-बन्धुओं की लेखनी से लिखे जाने से हमें आन्तरिक दुःख हुआ है। ऐसे विद्वानों से हमें ऐसी भूल होने का स्वप्न में भी सन्देह न था। जो लोग संस्कृत भाषा को मृत भाषा कहते हैं वे या तो आर्य जाति को मृत मानते हैं या आर्य्य धर्म को। जिनके सारे धर्म-ग्रन्थ संस्कृत में हों उनके मुँह से तभी संस्कृत को मृत भाषा कहना सम्भव है जब उन के हृदय से धर्म का भाव मर गया होगा। अस्तु, इस सम्बन्ध में हम अधिक न लिखकर केवल इतना ही कहते हैं कि हमारे मिश्र-बन्धुओं ने जितनी परिश्रम किया है उसकी सफलता यदि वे चाहते हैं तो

उन्हे अपनी त्रुटियों का संशोधन करके हिन्दी भाषा का एक बहुत बड़ी आपत्ति से बचाना चाहिये अन्यथा इस ग्रन्थ के द्वारा बहुत अनर्थ होने का भय है।

॥ इति शुभम् ॥

हिन्दी साहित्य सम्मेलन सम्बन्धी गत प्रथमा परीक्षा।

पद्य का प्रथम प्रश्न-पत्र।

समय ३ घंटा।

परीक्षक—पण्डित शुकदेवबिहारी मिश्र, बी० ए०।

१—महर्षि विश्वामित्र जब पृथ्वी का दान लेने गये थे, एवं जब सांगता की स्वर्णमुद्रा वसूल करने गये थे, तब प्रतिग्रह प्राप्ति की आशा रहते हुये भी उन्होंने महाराज हरिश्चन्द्र से क्रोध-प्रकाश क्यों किया? इससे उनका मुख्य अभिप्राय क्या था और वह अभीष्ट क्रोध-प्रकाश द्वारा क्योंकर सिद्ध हो सकता था?

२—निम्न लिखित प्रबन्धों का सरल हिन्दी में अनुवाद कीजिये—

(अ) अहा! स्थिरता किसी को भी नहीं है। जो सूर्य उदय होते ही पद्मिनीवल्लभ और लौकिक वैदिक दोनों कर्मों का प्रवर्त्तक था, जो गगनांगन का दीपक और काल-सर्प का शिखामणि था, वही इस समय परकटे गिद्ध की भाँति अपना सब तेज गवां कर देखो समुद्र में गिरा चाहता है।

(इ) सूरज धूम बिना की चिता सोऊ अन्त में लै जल मांझ बहाई।
बौलैं घने तरु बैठि विहंगम रोवत सो मनु लोग लोगाई।
धूम अँध्यार कपाल निसाकर हाड़ नछत्र लहू सी ललाई।
आनँद हेतु निसाचर के यह भूमि मसान की राति बनाई॥

३—भारतेन्दु जी ने सत्य हरिश्चन्द्र में डरावने और घृणा उत्पन्न करनेवाले वर्णनों की भी विशेषता क्यों रक्खी है?

४—नाटक का प्रभाव रोहिताश्व के पुनर्जीवित होने से अच्छा स्थिर रहा, अथवा उसके न जीने और शैव्या तथा हरि-

चन्द्र के भी मर जाने से ठीक पड़ता ? इस प्रश्न का सतर्क उत्तर दीजिये । ११

५—गौरि शम्भुतन परिहरै अचल मेरु चल होय ।
बोल्यो बोल हमीर को चलन हार नहिं सोय ॥

इस दोहे का अर्थ करिये और इसका कारण लिखिये कि कवि ने पार्वती और शम्भु का वियोग असम्भव क्यों माना है ? ६

६—संकट सुरेस को यथारथ निरखि देह दीन्ही है दधीचि पर स्वारथ प्रमान कै। करुना कपोत की कहत सिवराज दये काटि काटि अंगनि तुला मैं तौलि दान कै। दीन्हों सीस जगत् जसीले जगदेव आजु छत्री मैं हमीर कलि कीरति अमान कै। प्रकट अकारथ मरन सबही को हमैं राखिबे सरन परस्वारथ प्रधान कै ॥

उपर्युक्त छन्द के प्रथम दो पदों में वर्णित दधीचि और शिवि की कथाओं के वर्णन प्रायः दस दस पंक्तियों द्वारा कीजिये। कवि ने सबके मरण को अकारथ क्यों कहा है ? १४

७—निम्न लिखित चरणों का सरल हिन्दी में अनुवाद कीजिये—
भाग्यो सुलतान जाम बचत न जानि बेगि बलित बितुण्ड पै बिराजि बिलखाय कै। जैसे लगे जंगल मैं ग्रीषम की आगि चलै भागि मृग महिष बराह बिललाय कै। ६

यहाँ "बिराजि" शब्द का उपयोग उचित है अथवा अनुचित ? अपने उत्तर के कारण लिखिये और यह भी अनुमान कीजिये कि इस शब्द का प्रयोग क्यों हुआ ?

८—कहै बीर चौहान हम्मीर हठ्ठी सुनौ साँच उज्जीर मोल्हन्न येरे। गढ़ा मण्डला आदि उज्जैन सारी जिते कोट बंके तिते जानि मेरे ॥ रहै साह राजी चहै बम्ब बाजी कहीं एक ना एक सौ आठ फेरे। परयो मीर पाछे धरयो दण्ड डोला दियो जात नाहीं कहीं पास तेरे ॥

इस छन्द के तृतीय चरण में कवि ने बहुसंख्यक भाव की पुष्टि में एक सौ आठ की संख्या क्यों लिखी है ? २

९—एकु यहै रनथम्भ को खम्भ अहै चहुवान अजों अरने को।
दण्ड भरै न हमीर हठी हर बार जुरै न मुरै मरने को ॥

जिस छन्द के उपर्युक्त दो चरण हैं उसका नाम क्या है? उसका लक्षण भी लिखिये। इन पंक्तियों के आदि में कौन गण प्रयुक्त हुआ है? उसका देवता और फल भी लिखिये। छन्द के गणप्रयोग में कोई दूषण देख पड़ता है? यदि हाँ तो कौन? उसकी दोषशान्ति कैसे हुई है?

१०—कुँवर और उमराव बने बिगरे कछु नाहीं।
फूँक माहिं वे बनत फूँक ही सों मिटि जाहीं॥
पै दृढ़ कृषक समाज देश को सांचो गौरव।
नाश भये इक वार फेरि उपजन नहिं सम्भव॥
उपर्युक्त पंक्तियों का अर्थ लिखिये और यह बतलाइये कि कुँअर और उमराव फूँक से क्यों कर बनते और मिटते हैं?

११—निम्न लिखित चरणों में से किन किन में यतिभंग-दूषण है और किस किस स्थान पर?

(क) मेरी लरिकाई की बैठक भूमि सोहावनि।
(ख) काया की हानि को ज्ञान हू होन न पावै।
(ग) मानत हो तर्क में पादरी तिहिं चतुराई।
(घ) पास पहाड़ी ऊपर गिरिजा घर मन मोहै। ४

१२—या बिधि दीन दुखीन उबारन कौ अभिमानी।
त्रुटि हू वाकी सबै धर्म की ओर झुकानी॥
उपर्युक्त द्वितीय चरण में कथित त्रुटियों के दो उदाहरण भारतवर्ष से दीजिये। ४

पद्य का तृतीय प्रश्न-पत्र।

समय २॥ घंटा।

परीक्षक—पण्डित गंगाप्रसाद अग्निहोत्री।

विशेष सूचना—(क) और (ख) दोनों में परीक्षार्थी को एक ही भाग का उत्तर देना होगा। दोनों मिलाकर जो उत्तर देगा, उसे दोनों में उस भाग के अङ्क मिलेंगे जिसमें उसने कम अङ्क पाये हों। तीनों में (ग) भाग करना सब के लिये आवश्यक है।

(क) भाग—रामचरित मानस।

१—इन पद्यों के सरल भावार्थ गद्य में लिखिये—

(अ) केकयसुता सुमित्रा दोऊ। सुन्दर सुत जन्मत भइँ सोऊ॥
सो सुख सम्पति समय समाजा। कहिनसकहिसारदअहिराजा॥
अवध पुरी सोहइ यहि भाँती। प्रभुहि मिलन आई जनु राती॥
देखि भानु जनु मन सकुचानी। तदपि बनी संध्या अनुमानी॥
अगर धूम बहु जनु अँधियारी। उड़इ अबीर मनहुँ अरुनारी॥
मन्दिर-मनि-समूह जनु तारा। नृप-गृह-कलस सो इन्दु उदारा॥
भवन-वेद-धुनि अति मृदुबानी। जनुखग मुखरसमयरससानी॥
कौतुक देखि पतङ्ग भुलाना। मास दिवस तेइ जात न जाना॥ २०

(इ) उदित उदय गिरि मञ्च पर रघुवर बाल पतङ्ग।
बिकसे सन्त सरोज सब हरषे लोचन भृंग। ८

(उ) राम साधु तुम साधु सुजाना। राममातु तुम भलि पहिचाना॥
जस कौसला मोर भल ताका। तस फल देउ उनहिँ करि साका॥ ३

(ऋ) लताभवन तें प्रकट भे तेहि अवसर दोउ भाइ।
निकसे जनु युग बिमल विधु जलद पटल बिलगाइ॥ ८

(ऌ) लषन उतर आहुति सरिस भृगुपति कोप कृसानु।
बढ़त देखि जल सम वचन बोले रघुकुल भानु॥ ६

(ए) बाउ कृपा मूरति अनुकूला। बोलत बचन झरत जनु फूला॥
जो पै कृपा जरैं मुनि गाता। क्रोध भये तनु राखु विधाता॥ ७

२.—ऊपर के पद्योंमें जो शब्दालंकार हों उनका नामोल्लेख कीजिये। ८

३.—ऊपर के पद्यों में जो अर्थालंकार हों उनके सकारण नाम लिखिए २०

(ख) भाग—विनयपत्रिका।

१—नीचे के पदों का भावार्थ सरल हिन्दी में लिखिये २०

(अ) जन्म गयो बादिहिं बर बीति।
परमारथ पाले न परयो कछु अनुदिन अधिक अनीति।
खेलत खात लरिकपन गो चलि यौवन युवतिन लियो जीति।
रोग वियोग सोक स्रम संकुल बड़ी वयस वृथाहि गई बीति।
राग रोग ईर्षा बिमोह बस रुची न साधु समीति।
कहे न सुने गुनगन रघुपति के भई न राम पद प्रीति।
हृदय दहत पछिताय अनल अब सुनत दुसह भवभीति।
तुलसी प्रभुते होय सो कीजिय समुझि बिरद की रीति।

(इ) ऐसेहि जन्म समूह सिराने।
प्राननाथ रघुनाथ से प्रभु तजि सेवत चरन बिराने।
जे जड़ जीव कुटिल कायर खल केवल कलिमल साने॥
सूखत वदन प्रसंसत तिन कहं हरिते अधिक करि माने।
सुख हित कोटि उपाय निरन्तर करत न पाँय पिराने।
सदा मलीन पन्थ के जल ज्यों कबहुं न हृदय थिराने।
यह दीनता दूर करिबे को अमित यतन उर आने॥
तुलसी चितचिन्ता न मिटै बिनु चिन्तामनि पहिचाने।

(उ) कलिकाल अपर उपाय ते अपाय भये जैसे तम नासिबे को चित्र के तरनि।

(ऋ) तोहिं मांगि मांगि मांगनो न मांगनो कहायो,
सुनि स्वभाव सील सुजस जाचक जन आयो,
पाहन पसु बिटप बिहग अपने कर लीन्हे,
महाराज दसरथ के रंक राव कीन्हे।

२—इन पदों में जो अलङ्कार हों उनका सकारण नाम लिखिये।

३— (ऋ) में अन्तिम दो पदों में, 'पाहन, पसु, बिटप, बिहग कौन हैं तथा किस 'रंक' के 'राव' किये जाने की चर्चा है।

(ग) भाग—शिवाबावनी।

(अ) इस पद्य का हिन्दी में सरलार्थ लिखिये—

जिन फन फुतकार उड़त पहार भार
कूरम कठिन जनु कमल विदलिगो।
विषजाल ज्वालामुखी लवलीन होत जिन
झारन चकारि मद दिग्गज उगलिगो॥
कीन्हो जेहि पान पय पान सो जहान कुल
कोलहू उछलि जल सिन्धु खल भलिगो।
खग्ग खगराज महाराज सिवराज जूको
अखिल भुजङ्ग मुगलद्दल निगलिगो॥

(इ) उक्त पद्य में जो अलङ्कार हो उसका नाम कारण सहित लिखिये।

सूचना—सुन्दर और सुवाच्य लिपिके लिए ५ अङ्क दिये जायंगे।

पठित गद्य का प्रश्न-पत्र।

समय ३ घण्टे

परीक्षक—पं० मधुमंगल मिश्र, बी० ए०

१—पहिले ४ भागों (क ख ग घ) अथवा पिछले ५ भागों (ङ च छ ज झ) का आशय बोलचाल के शब्दों में स्पष्ट करके लिखिए।

(क) सरस्वती भी धन्य है? जो इनके मुखकमल के सम्पर्क का सुख अनुभव करती हुई, ऐसे महात्मा के प्रसन्न गम्भीर मानस में राजहंसी सी वास करती है। ४

(ख) बाहर तो तूमतड़ांग और लिफ़ाफ़े से रहते थे; पर भीतर मियां के सिवाय तीन सनहकी के और कुछ न था। ३

(ग) पञ्चानन में कसौटी के समय चालचलन की शिष्टता भी चन्दू ही के टक्कर की थी। इसी से दोनों की पटती भी थी। ४

(घ) कहीं उस आलवाल के चारों ओर कटीले पौधे न ऊग आये हों? जब तक उन्हें उखाड़ न फेंके तब लों चतुर माली की सराहना ही क्या? ५

(ङ) कलकत्ते में वङ्गभाषा के आज कल जो नामी पत्र कहलाते हैं वे उस समय भविष्य के गर्भ में निहित थे। २

(च) सब से अधिक सामयिक बातों का समावेश और उन पर आलोचना है। चाहे राय कुछ ही हो, पर उसमें वह मसाला तो होना चाहिये जो एक दैनिक पत्र को चाहिये। ४

(छ) ब्राह्मण लोग हिन्दू जाति के अगवे हैं। इसमें कुछ सन्देह नहीं कि बहुत से ब्राह्मणों ने पढ़ना लिखना छोड़ दिया है। परन्तु यह समय की गति है। उनका प्रभुत्व ज्यों का त्यों बना है। ३

(ज) खूब फक्कड़बाजी की नौबत आई थी। उर्दू के तूतिये हिन्द और अवधपञ्च में जैसी नोकझोंक हुई थी उसी का नमूना इन दोनों की छेड़छाड़ में था। ४

(झ) अकेली गङ्गा है। लम्बी चौड़ी वासनाओं का निवास उस स्थान में नहीं। आकाश पाताल को एक करनेवाले विचारों का वहां प्रवेश नहीं होता। ३

२—नीचे लिखे शब्दों का उपयोग अपने बनाये वाक्यों में करिए:—जंगरैतिन, टोह, तरल, अठखेली चाल, लटके, नितान्त, उद्धत, संवाददाता, चिट्ठा, तड़ितसमाचार। ५

३—नीचे लिखे शब्द किस आशय को प्रकाशित करते हैं:—आलोचना, समालोचना, प्रत्यालोचना, पण्डिताइन, पण्डिता, सठिया जाना, गदहपचीसी, घुणाक्षरन्याय। ४

४—इन कहावतों का आशय समझाइए—
आठ वार नौ त्यौहार, काला अक्षर भैंस बराबर, हाथी का खाया कैथ, रुपयों का ठीकरी करना, उलटे छुरा मूंडना, रेउड़ी के लिये मसजिद ढहाना। ६

५—अनुप्रास किसे कहते हैं? यदि वह गद्य में आता हो तो उस के दो तीन उदाहरण कण्ठ ही या बना के दीजिये। ६

६—(क) पहिले प्रश्न के घ भाग में आशय को सीधे २ न कह के व्यञ्जना से प्रकाश किया है। उस वाक्य में उपमान, उपमेय, साधारण धर्म और वाचक शब्द सब खोल २ कर अलग २ लिखिए।

यदि लुप्तोपमा हो तो लुप्त अङ्गों को कोष्ठक में लिखिए।
(ख) उत्प्रेक्षालङ्कार किसे कहते हैं? उदाहरण देकर समझाइए।

७—(क) इन शब्दों के समास बताइए और लक्षण लिखिये:— १०
सप्ताह; सुखकमल; यथाशक्ति; निरक्षरभट्टाचार्य; संवाददाता।
(ख) इन तद्धित वा कृदन्त शब्दों के प्रकार बताओ:—पढ़ना-लिखना; फक्कड़-बाजी; नोकझोंक; कतरनो; सनहकी; दयालु; सराहना; पातञ्जल; दौर; पढ़ीलिखी। ५

८(क) हिन्दी में कर्त्ता का चिन्ह 'ने' कहां २ नहीं आता?
(ख) क्या विशेषणों का रूप विशेष्य के अनुसार बदलता है? उदाहरण देके अपने उत्तर की पुष्टि कीजिये।

९—(क) जिन ७ शब्दों के नीचे रेखा खीची हैं उनकी व्याख्या कीजिये।
(ख) विसर्ग के स्थान में श, ष वा स आदेश किन २ दशाओं में होता है?

१० नीचे लिखे वाक्यों में अशुद्धियाँ हों तो सुधारिए—
पण्डितमानी लोग अपना भूल स्वीकर नहीं करते।
पण्डितजी आसन में बैठे हैं।
पण्डित ने लाठी को सीधी किया।
पण्डित कछुआ का बच्चा प्यार करता है।
पण्डित ! घास, पेड़, बूटी, लता, वल्ली वनस्पति कहाती हैं।
पण्डित मदनमोहन मालवीयजी की कृपा उस सम्बन्ध का कारण हुई थी।
सुन्दर अक्षर और शुद्ध लिखने के लिय १० अङ्क रक्खे गये हैं। १०

तीसरे प्रश्नपत्र की उत्तर-पुस्तकों पर परीक्षक की आलोचना।

उत्तरों के पढ़ने से जान पड़ा कि व्याख्या Parsing शब्द सब लोग नहीं समझे। इसकी चेष्टा करनी चाहिये। इस विषयपर केवल एक पुस्तक हिन्दी में मैंने देखी है उसका नाम "व्याख्या विधि" है। पं० विनायकराव पेन्शनर जबलपुर से तीन आने में मिलती है। मैंने इसी भय से पृथक्करण Analysis के प्रश्न नहीं दिये थे। इस विषय पर भी पं० कामता प्रसाद गुरु द्वारा लिखित केवल एक पुस्तक मेरे दृष्टिगोचर हुई है।

सुन्दर और शुद्ध लिखने का नोट मैंने पत्र के अन्त में दिया। प्रारम्भमें देना अच्छा होता प्रायः सुन्दर अक्षर और शुद्ध वर्णानुपूर्वी (हिज्जे) पर ध्यान नहीं दिया गया। थोड़े से सुन्दर अक्षर लिखने की योग्यता होना ही बस नहीं है। शीघ्रता से भी सुन्दर और शुद्ध लिख सकने का अभ्यास होना चाहिये।

अलङ्कारों के उदाहरण में विद्यार्थी व्रजभाषा ही का उदाहरण देते हैं। इसके दो कारण हैं या तो इन्होंने पुस्तकों में व्रजभाषा ही के उदाहरण पढ़े हैं और उन्हें उठाया है। अथवा खड़ी बोली की कविता में उन्हें अच्छे उदाहरण नहीं मिलते वा पढ़ो नहीं हैं।

प्रायः उत्तर की भाषा अच्छी हिन्दी में लिखी गई है। लखनऊ के एक उत्तर में उर्दू आई है। कदाचित् वह विद्यार्थी उर्दू जानने-वाला हो, अथवा वहां की बोलचाल की भाषा का असर हो।

मा० शी० कृ० ६ मधुमङ्गल मिश्र
सो० सं० ७१। जबलपुर

अपठित गद्य और पद्य का प्रश्न-पत्र

समय २॥ घंटा।

परीक्षक—बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन, एम० ए०, एलएल०बी०

(क) मेरे हृदय-गगन में अन्धकार छा लिया। मेरे मन रूपी *नन्दन कानन का *पारिजात पुष्प मालती थी। किन्तु दैत्य-विशेष ने उसे अपहरण किया।

(ख) सन्ध्या होगई। कोकिल बोल उठा। पर उसको भी चुप हो जाना पड़ा। एक सुन्दर कोमल कण्ठ से निकली हुई रसीली तान ने उसे भी चुप कर दिया। मनोहर स्वर-लहरी उस सरोवरतीर से उठकर तट के सब वृक्षों को गुंजरित करने लगी। मधुर *मलयानिल-ताड़ित जललहरी उस स्वर के ताल पर नाचने लगी। हर एक पत्ते ताल देने लगी। अद्भुत आनन्द का समावेश था। शान्ति का *नैसर्गिक राज्य उस छोटी रमणीय भूमि में मानों जमकर बैठ गया था।

(ग) १-हिन्दू जाति एवं हिन्दुस्तान की महानता का प्राण भारतवासियों का आधार सूत्र हिन्दी भाषा ही है।

२-यह चिट्ठी लिंकन की महनीयता का अच्छा परिचय देती है।

३-वह घटना जितनी कारुणिक है उतनी ही महत्त्वपूर्ण भी है। इसी से उसके महत्त्व की महिमा बहुत अधिक है।

४-पद्यकाव्य की ओर कवियों की रुचि तथा उनकी शक्ति की प्रवृत्ति ऐसी हो गयी है कि गद्य-काव्य की महत्ता को समझना उनके लिये *दुरूह होगया है।

(घ) कह्यो है पचायो अन्न पंडित पुत्र पतिव्रता स्त्री सुसेवित राजा विचारि करि कहिबो इनते बिगार कबहुं न उपजें। तृषावन्त असन्तोषी क्रोधी सदा सन्देही जो और के भाग की आश करै अति दयावन्त ये छहों सदा दुःखी रहैं।

१—(क), (ख) और (ग) में जिन शब्दों के नीचे रेखा खिची हुई है उनके मुहाविरे और प्रयोग पर अपने विचार प्रकट कीजिये।

२—जिन शब्दों के पूर्व यह, *चिन्ह लगा है उनमें प्रत्येक की व्याख्या कीजिए।

३—(ग) में 'महानता', 'महानीयता', 'महत्त्व', 'महिमा' और 'महत्ता' इन पाँचोंकी अलग अलग व्याख्या कीजिए और साथ ही इनके रूपों पर और दिये हुए वाक्यों में इनके प्रयोगों पर अपने विचार प्रकट कीजिए। ३

४—ऊपर दिये हुए (क) से (घ) तक के वाक्यों में जिन जिन अलंकारों का प्रयोग हुआ है उनके नाम लिखिए और अनलंकृत साधारण भाषा में उन्हीं वाक्यों को लिख कर उनका आशय प्रकट कीजिये। २०

पद्य

(क) पत्रों पुष्पों रहित बिटपी विश्व होवे न कोई,
कैसी ही हो सरस सरिता वारिशून्या न होवे,
ऊधो, सीपी सदृश न कभी भाग फूटे किसी का;
मोती ऐसा रतन अपना आह! कोई न खोवे।

(ख) सतत शब्दित गेह समस्त में,
विजनता परिवर्द्धित थी हुई,
कुछ विनिद्रित हो जिनमें कहीं
झनकता इक झींगुर भी न था।
वदन से तज के मिस धूम के,
शयनसूचक श्वास-समूह को
झलमलाहट-हीन-शिखा लिये,
परम निद्रित सा गृहदीप था।

(ग) रतन अनेक शैल उपजावत, नहिं छवि तासु तुपार घटावत।
थोरे दोष कोटि गुन माहीं, शशि महं अङ्क सरिस दवि जाहीं।
धातु विचित्र शिखर सोइ धारत, जो लहि तन अप्सरा सँवारत।
परत जासु मेघन महँ जोती, साँझ अकाल मनहुं नित होती।

१—ऊपर की कविता में प्रत्येक का भावार्थ सरल भाषा में लिखिए १६

२—जितनें अलंकार इन पद्यों में आए हों उनके नाम और लक्षण लिखिए। ८

३—खड़ी बोली और ब्रजभाषा दोनों की कविताओं के विषय में अपनी युक्तिपूर्ण सम्मति लिखिये, परन्त लेख बीस पंक्ति से अधिक न हो। १२

(क) जगदीश, प्रत्युत्तर, गौरीश, मनोरथ, वक्षःस्थल, इनकी सन्धि बताइए और नियम लिखिये। ५

(ख) धर्मात्मा, प्रजापति, गौरीशंकर, विद्यावारिधि, इनका समास लिखिये। ५

(ग) राम ने सीता को ग्रहण किया। लक्ष्मण ने राम की सेवा की। विभीषण का भाई बड़ा दुष्ट था। राजा भूखोंको अन्न देता है। लड़का गाड़ी से गिर पड़ा। इन वाक्योंमें रेखांकित पदों में कौन कारक हैं ? लक्षणसहित लिखिए। ५

(घ) खाना, पीना, सोना, पढ़ना, धातु के परोक्षभूत, वर्त्तमान और सामान्य भविष्यत् काल के मध्यम पुरुष के रूप लिखिए। १२

गद्य-लेख रचना का प्रश्न-पत्र।

समय ३ घंटा।

परीक्षक—पं० रघुवर प्रसाद द्विवेदी, बी०ए०

१—निम्नलिखित चार विषयों में से किसी एक पर गद्य लेख और चाहो तो पद्य लेख लिखिए:— १००

(क) रामायण में आचार वा व्यावहारिक नीति।

(ख) मितव्ययता वा किफ़ायत।

(ग) हिन्दुओं के तेवहार।

(घ) प्रातःकाल की शोभा।

पांचवें प्रश्नपत्र की उत्तर-पुस्तकों पर परीक्षक की आलोचना।

महाशय,

इस समय बहुत कार्य्य रहता है जिससे दम लेने का अवकाश नहीं मिलता, पर मातृ-भाषा की सेवा अपना परम कर्तव्य समझ मैंने परीक्षक बनना तथा परीक्षा का प्रबन्ध करदेना स्वीकार किया है। मुझे पं० नर्म्मदाप्रसाद मिश्र से पूर्ण सहायता मिली है।

जिस विषय में मैंने परीक्षा ली है उसके उत्तर पत्रों के सम्बन्ध में कुछ संक्षिप्त विवरण लिख भेजना मैं उचित समझता हूं। निबन्ध रचना के लिये जो विषय निर्धारित किये गये थे वे परीक्षार्थियों की शक्ति के बाहर न थे। सभी विषयों पर किसी न किसी परीक्षार्थी ने लेख लिखा है और तीन चार लेख पद्यात्मक भी हैं। आगे के लिये ऐसा कुछ प्रबन्ध किया जाय कि गद्य-रचना आवश्यक विषय समझा जाय और पद्य-रचना इच्छानुसार जिन परीक्षार्थियों ने पद्य रचना मात्र की है उनमें गद्य लिखने की कैसी शक्ति है और उन्हें भाषा का कैसा बोध है सो विदित नहीं होता।

(१) लिपि खेद के साथ कहना पड़ता है कि परीक्षार्थियों में से दो ही तीन ऐसे हैं जिनकी लिपि सन्तोषजनक है।

(२) शुद्ध-लेखन (क) इसकी तो खासी दुर्दशा देख पड़ती है। जिस प्रान्त में निरक्षर। लोग जिन शब्दों को जैसा बोलते हैं वैसा ही लिख मारा है यथा, सांथ २—हांथ—मांता आदि जिनमें अनुस्वार का निरर्थक उपयोग किया गया है और

(ख) कई शब्द जिनमें अनुस्वार अवश्य लिखना चाहिये अनुस्वार-हीन ही लिख दिये गये हैं; यथा, मै और मे—मैं और में के बदले उन्हे—उन्हें ,, ,,

(ग) बकार और वकार में बड़ी गड़बड़ दीखती है, कई ने तो बकार के नाम सौगन्द सी खाई है।

(घ) इसी तरह षकार और शकार की गड़बड़ है।

(च) इस मध्य प्रदेश में पाठ्य पुस्तकोंमें जैसा Spelling पाया जाता है उसी के अनुसार हम लोग लिखा करते हैं अतः आप लोगों के और हमारे (Spelling) में भेद है। यथा,

म० प्र०	सं० प्र० और विहार
सक्ता	सकता
कहे	कहै (ग्रामीण उच्चारण सा लगता है)
हुआ	हुवा
हमें	हमैं
सुनार	सोनार
सुनारिन	सोनारिन

यद्यपि मैंने इस भेद पर ध्यान देकर अंक नहीं काटे तथापि कुछ ऐसा प्रबन्ध होजाना चाहिये (नियम बन जाने चाहियें) जिससे लिखने में निरर्थक भेद और बाहुल्य न रहने पावे। नागरी-प्रचारिणी सभा के बनाये हुए नियम यदि सम्मेलन ठीक समझे तो छपवा कर प्रकाशित करदे और मध्य प्रदेश की रीति पर विचार कर जो ठीक निश्चित हो वह निर्धारित होजाय और शिक्षा-विभाग को सूचना देदी जाय कि पाठ्य-पुस्तकों का संशोधन होना अवश्य है! जहां तक हो समानता लाई जाय सम्मेलन के लिये यह उचित कार्य्य है।

(३) विरामादि चिन्ह इन चिन्हों का अभाव ही देखा, यहां तक कि पूर्ण विराम भी नहीं देते। समस्त पदों को Hyphen से विभक्त करना अथवा एकही लकीर नीचे लिखना आदि नियम तो कोई जानता ही नहीं। प्रश्न और आश्चर्य्यादि भावों के सङ्केत भी देखने में नहीं आये।

(४) शब्द—(क) "देशी घोड़ी और मरहटी जीन" की कहावत खूब चरितार्थ हुई है। "अकबरी विवाह" की अच्छी भरमार है, यथा,

प्रतिरोज!

उत्तम हालत!

(ख) संस्कृत का ज्ञान न रहने के कारण संस्कृत शब्दों का शुद्ध २ प्रयोग नहीं किया गया; यथा,

उसके शान्ति चित्त को देखकर (शान्त)

(५) भाषा और विषय उपर्युक्त दूषणों के रहते भाषा अच्छी नहीं होसकती पर कई ने अच्छी भाषा लिखी है। विषय का बोध भी कई को अच्छा है।

(६) व्याकरण वाक्य-विन्यास की भूलें बहुत पाई गईं। लिङ्ग की गड़बड़ भी देख पड़ी।

सम्मति।

साहित्य सम्मेलन की ओर से एक छोटा सी पुस्तिका छपनी चाहिये जिसमें उदाहरणों सहित ऐसे नियम रहें जिनके न जानने से यह सब गड़बड़ हुआ करती है। प्रत्येक परीक्षक महाशय से रिपोर्ट लीजिये और उसके आधार पर तथा अपने २ अनुभव के अनुसार नियम बना दिये जायं।

रघुवर प्रसाद द्विवेदी

इतिहास का प्रश्न-पत्र ।

समय २॥ घंटा ।

परीक्षक—पं० हरिमङ्गल मिश्र, एम०ए०

१—रामायण का इतिहास संक्षेप-रीति से लिखिये और यह भी बतलाइए कि लोगों को रामायण से क्या शिक्षा मिलती है ? ८

२—महाराज विक्रमादित्य के विषय में आपकी क्या सम्मति है ? प्रमाण पूर्वक लिखिए । ७

३—कालिदास भारतवर्ष में क्यों प्रसिद्ध हुए ? उनके रचित ग्रन्थों की नामावली लिखिए । ५

४—मेगास्थनीज़ के वर्णनानुसार चन्द्रगुप्त मौर्य के राज्य-प्रबन्ध का विवरण लिखिए । ८

५—अशोक, मौर्य और हर्षवर्द्धन का संक्षेप-वर्णन कीजिये । १२

६—अकबर के राज्य की स्थिरता और औरङ्गज़ेब के राज्य के विनाश के मुख्य मुख्य कारण बतलाइये । १०

७—मरहठोंने और सिक्खोंने किस प्रकार से भारतवर्ष में अपनी उन्नति की ? उनके अधःपात के कारण लिखिए । १४

८—मार्क्विस आफ़् हेस्टिङ्ग अथवा लार्ड विलियम बेण्टिङ्क की कारस्वाइयों का संक्षिप्त वर्णन लिखिए । १२

९—लार्ड डेलहौज़ी के क्या सिद्धान्त थे ? उनसे भारतवर्ष तथा इंगलण्ड-निवासियों को क्या क्या लाभ हुए ? १२

१०—ब्रिटिश-राज्य से भारतवर्ष को जो जो लाभ हुए उनको संक्षिप्त रीति से दिखलाइये । १२

भूगोल का प्रश्न-पत्र ।

समय ३ घंटा ।

परीक्षक—पं० कृष्णशंकर तिवारी, बी० ए०

१—दिन क्योंकर घटता बढ़ता है और वर्ष में वह कितनी बार और कब कब रात्रि के बराबर होता है ? १२

२—ऋतु के बदलने का क्या कारण है ? ८

३—जलाशयों का जल क्यों सूख जाता है और उसकी क्या क्या गति होती है ? ८

४—एशिया की पश्चिमी सीमा क्या है और इस महाद्वीप के किन किन भागों में घनी बस्ती है ?

५—तिब्बत से कौन कौन सी नदियाँ निकलती हैं और कहां कहाँ गिरती हैं ?

६—एशिया के प्रधान पहाड़ों और झीलों के नाम लिखिये।

७—एक जहाज़ करांची से रंगून जाता है। उसके रास्ते में किन किन नदियों के मुहाने और कौन कौन बन्दर पड़ेंगे ?

८—नीचे लिखे स्थान भारतवर्ष के किस भाग में हैं:—
हरद्वार, मुल्तान, राजकोट, अहमदाबाद, जबलपुर, पटना, शिलांग, पुरी और रामेश्वर।

९—राजपूताना और मध्य भारत के प्रधान रजवाड़ों के नाम लिखिये।

१०—भारतवर्ष का एक मानचित्र (नक़शा) खींचिए जिसमें सहायक नदियों के सहित गङ्गा और सिन्धु तथा अर्वली, विन्ध्या और नीलगिरि एवं दिल्ली, लाहौर, अजमेर, मुम्बई, हैदराबाद, मद्रास, कलकत्ता और बनारस का स्थान दिखलाइए।

सातवें प्रश्नपत्र की उत्तर पुस्तकों पर परीक्षक की सम्मति

[पं० कृष्ण शंकर तिवारी]

मुझे यह लिखने में हर्ष होता है कि "भूगोल" की परीक्षा का फल बहुत संतोषप्रद है। मैंने जितने पत्र पढ़े उनमें से प्रायः सब की स्वच्छता और उत्तमता की सराहना कर सकता हूं। परीक्षार्थियों के उत्तर बहुत स्पष्ट और सुन्दर भाषा में लिखे पाये गये हैं। किसी किसी परीक्षार्थी की भाषा भूगोल की भाषा से उत्कृष्ट होकर साहित्य के रूप को पहुंच जाती है। मानचित्र अधिकतर परीक्षार्थियों के बहुत ठीक हैं और एक दो ऐसे भी हैं जिनको देख कर संतोष ही नहीं वरन आनन्द होता है।

आरम्भिक विज्ञान और स्वास्थ्य-रक्षा का प्रश्न-पत्र

समय २॥ घंटा।

परीक्षक—पं० गोमतीप्रसाद अग्निहोत्री, बी० एस-सी०

१—चांदी की एक छोटी सी जंजीर का आयतन जानना है। कोई युक्ति बताइए। १२

२—पदार्थ की तीनों अवस्थाओं के लक्षण बताइए। क्या वही पदार्थ तीनों अवस्थाओं को प्राप्त हो सकता है? प्रमाण दीजिए १२

३—(क) सीसे के एक टुकड़े का वज़न ९ तोले ५ माशे है। पानी में तोलने से वह ८ तोले ७ माशे उतरता है तो बताइये कि सीसे का आपेक्षिक घनत्व क्या होगा? ४

(ख) यदि वही टुकड़ा शर्बत में तौलने से ८ तोले ६ माशे आवे, तो शर्बत का आपेक्षिक घनत्व बताइये। ५

४—किसी प्रयोग का वर्णन कीजिए जिससे यह सिद्ध हो कि वायु गरमी पाकर फैल जाता है। १२

५—भोजन सम्बन्धी किन किन नियमों का पालन करना स्वास्थ्यरक्षा के लिए आवश्यक है? १५

६—पानी के शुद्ध करने की रीतियाँ कौन कौन सी हैं? उनका संक्षेप में वर्णन कीजिये और बताइए कि हर एक से किस किस प्रकार की अशुद्धियां दूर होती हैं? १५

७—श्वास के द्वारा ली हुई वायु का शरीर में क्या उपयोग होता है? शुद्ध वायु के मुख्य २ अवयवों के नाम लीजिए और बताइए कि निःश्वास वाली वायु में कौन कौन सी अशुद्धियां रहती हैं? १०

८—"व्यायाम से लाभ" पर छोटा सा लेख लिखिए। १५

परीक्षक की आलोचना।

विज्ञान विषयक उत्तर प्रायः सन्तोषजनक थे। किन्तु दूसरे विषय अर्थात् स्वास्थ्य-रक्षा के प्रश्नों को बहुत से परीक्षार्थियों ने ध्यान देकर नहीं पढ़ा। नहीं तो अनावश्यक बातें उत्तरों में न पाई जातीं। यथा—'व्यायाम से लाभ' पर लेख लिखना था। कई एकों ने 'व्यायाम' ही को दिया हुआ विषय समझा और लाभों का

उल्लेख यथेष्ट नहीं किया। अन्य प्रश्नों के उत्तरों में भी वसी ही असावधानता की गई है।

इसके अतिरिक्त परीक्षार्थियों का शरीर-सम्बन्धी ज्ञान बहुत थोड़ा जान पड़ता है। ७ वें प्रश्न के पूर्वार्ध के उत्तर में तथा अन्य स्थानों पर भी निरी काल्पनिक बातें निःसंकोच भाव से लिख दी गई हैं।

परीक्षार्थियों को चाहिए कि विज्ञान और स्वास्थ्य-रक्षा इन दोनों विषयों को समान महत्व का समझें और अपने उत्तरों में ऐसी बातें न आने दें जिनकी यथाथता में उन्हें सन्देह हो।

ऐसी कुछ त्रुटियों के रहते हुए भी परीक्षा के फल की ओर देख कर मुझे सन्तोष होता है।

संयोजक की रिपोर्ट

मिति आषाढ़ वदि १३, (सं० १९७१) को स्थायी समिति ने एक विशेष मन्तव्यद्वारा एक परीक्षासमिति बनाकर उसे नियमानुसार परीक्षा का कार्य्य सौंप दिया और १३ वें नियम के अनुसार पांच मास के भीतर ही उपनियमों की रचना, पुस्तकों का चुनाव, विविध स्थानों में परीक्षाका प्रबन्ध, परीक्षकों की नियुक्ति पत्रादिका प्रबन्ध परीक्षा का फल प्रकाशित करना, एवं आगामी वर्षकी परीक्षाओं के लिए समय और पाठ्य ग्रन्थों का नियुक्त किया जाना आदि सारे काम इतने ही काल के भीतर करने पड़े। इतने थोड़े समयकी सूचना में समितिको २८ परीक्षार्थी मिले जिनमें २२ परीक्षा में बैठे और १५ उत्तीर्ण हुए। उत्तीर्ण परीक्षार्थियों की सूची इस रिपोर्ट के अन्त में दी जाती है।

इस परीक्षा के सम्बन्ध में कई बातें निवेदन करनी अत्यावश्यक है। तीसरे नियम के अनुसार विषयों का विभाग करके प्रत्येक वर्ग के सदस्य नियुक्त कर लिये जाते और प्रत्येक विषय की पाठ्य पुस्तकों का चुनाव उन वर्गों को सौंपा जाता तो समिति को बड़ी सुगमता होती किन्तु इस सुगम रीति से लाभ उठाने के

समय चाहिये था जिसका यहां सर्वथा अभाव था। अतः इस परीक्षा समिति ने बिना वर्गविभाग के ही कार्य्य करना निश्चित किया। अब जो परीक्षासमिति स्थायी समिति द्वारा नियुक्त होगी उसे इस वर्गविभाग की सुगमता से लाभ उठाना चाहिए।

१-पुस्तकों का चुनाव

पाठ्य-पुस्तकों के चुनाव में कई कठिनाइयां उपस्थित हुईं और कुछ काल तक उपस्थित होती रहेंगी। इन कठिनाइयों को कम लोग समझते हैं। प्रथमा और मध्यमा के लिए समितिने जो पुस्तकें चुनीं उनके विषय में प्रायः यह शिकायत आई है कि पुस्तकें नहीं मिलतीं यह शिकायत ठीक है, परन्तु कई कारणों से यह कठिनाई अनिवार्य है। लोग सोचते हैं कि अङ्गरेज़ी विश्व-विद्यालयोंमें जैसा प्रबन्ध है वैसा ही यहां क्यों नहीं है। अङ्गरेज़ी विश्व-विद्यालयोंका प्रबन्ध बहुत काल से संगठित है, विषयों का विभाग और उसकी समितियां पहले से संगठित रहती हैं। इन विभागों में अधिकांश उन्हीं विषयों के अध्यापक होते हैं। इन अध्यापकों को इस खोज की आवश्यकता नहीं होती कि पुस्तकें उपलब्ध होंगी वा नहीं, क्योंकि पुस्तक के प्रकाशक लोग इन्हें बरसों से घेरे रहते हैं विश्वविद्यालयों में पुस्तकें भी भेजते हैं, उनके चुने जाने के लिए प्रार्थना भी करते हैं; निदान कोई बात उठा नहीं रखते। चुननेवालों को यह भी चिन्ता नहीं कि अमुक पुस्तक परीक्षार्थियों को किस प्रकार मिलेगी। हमारे देश के पुस्तकक्रेता आप ही पुस्तकें मंगवा कर रखते हैं। फिर इनका चुनाव दो साल पहले हो चुका रहता है, जिन्हें पढ़ना होता है वह स्वयं मंगवाने का उचित प्रबन्ध करते हैं।

स्थायी समिति की पुस्तकालय में भी प्रत्येक प्रकाशक को अपनी पुस्तक की कम से कम एक प्रति अवश्य भेजनी चाहिये। किन्तु प्रकाशकों की उपेक्षा की यह दशा है कि मांगने पर भी नहीं सुनते। अतः इस पुस्तकालय की पूर्णता की अटकल सहज हीं की जा सकती है। जितना अल्प समय समिति को मिला था उतने में यदि एक सूची बना कर प्रकाशकों से पूछा जाता कि अमुक अमुक पुस्तकें उपलब्ध होंगी या नहीं, तो निश्चित समय के भीतर जो कुछ काम भला बुरा बन भी आया उतना भी होना

असम्भव होता । संयोजक ने स्वयं सूचीपत्र के लिए लिखा पढ़ी की। कतिपय प्रकाशकों ने उत्तर देने की भी कृपा न की। दो एक ने सूचीपत्र भेजा भी, सो भी अपूर्ण। हिन्दी के पुस्तक छापने वाले हानि के भय से थोड़ी संख्या में पुस्तकें छापते हैं। उनके पास यदि दस पांच प्रतियां भी बच रहीं तो सूची में उनका नाम बना रहता है। जब मांगें अधिक जाती हैं, ग्राहकों को दिलासा देते हैं कि हम छाप रहे हैं। प्रथमा की पुस्तकों का चुनाव हो जाने पर सम्मेलन कार्य्यालय ने चाहा कि कुछ प्रतियां प्रत्येक की मँगवा कर विक्रयार्थ रख ली जायं। इसके लिए लिखा पढ़ी की। किसी किसी ने महीनों उत्तर तक देने की कृपा न की। जिनके पास क्रयार्थ पुस्तकें थी उनमें दो एक ने तो यथोचित संख्या में अपनी पुस्तकें भेज दीं, शेष ने कार्य्यालय को वी० पी० मंगवाने को लाचार किया। मातृभाषा की भक्ति का दम भरनेवाले प्रकाशकों तथा सम्मेलन से सम्बद्ध प्रकाशक सभाओं की उपेक्षा की जब यह दशा है, तो कैसे आशा की जाय कि यह कठिनाइयां शीघ्र दूर हो सकेंगी। केवल इस विचार से कि अमुक ग्रन्थ न मिलेगा, उसी विषय के किसी रद्दी ग्रन्थ का रक्खा जाना कभी सम्मेलन के योग्य न समझा जायगा। इस विषय में अच्छा तो यह होगा कि उन पुस्तकों के तथा अन्य उत्तम ग्रन्थों के प्रकाशन का प्रबन्ध भी सम्मेलन करे वा करावे, जो उसके उद्देश्यों के सर्वथा अन्तर्गत है।

परीक्षासमिति पुस्तक सम्बन्धी कठिनाइयों को दूर करने के लिए सम्प्रति इतना ही कर सकती है कि जबतक विषयों का विभाग करके प्रति विषय पर विचार करने के लिए उपसमितियां या वर्ग न बन जायँ और समुचित प्रबन्ध न हो जाय तबतक परीक्षार्थियों को यह अधिकार दे कि यदि समिति की विवरण पत्रिका में निर्दिष्ट ग्रन्थ न मिल सकें तो उनकी बराबरी के जो ग्रन्थ उन्हें उपलब्ध हों उन्हीं ग्रन्थों का अध्ययन करें, किन्तु उस पुस्तक को चुन लेने के पूर्व समिति की लिखित अनुमति भी ले लें। यदि ऐसा न करेंगे तो उनकी परीक्षा में गड़बड़ हो जाने का दायित्व समिति पर न रहेगा। समिति भी अपनी उस अनुमति को सम्मेलनपत्रिका में समय समय पर प्रकाशित करती रहेगी।

२—समय की नियुक्ति

इस वर्ष की प्रथमा परीक्षा के लिए जो समय की संकीर्णता थी वह तो प्रत्यक्ष है। साथ ही आगामी मध्यमा के लिए भी हमको समय की अत्यन्त संकीर्णता में पुस्तकों का चुनाव करना पड़ा। यदि उस परीक्षाका विवरण अभी न प्रकाशित होता तो साथ ही यह शिकायत होती कि आगामी मध्यमाकी तय्यारी करनेवालोंको 'समय कुछ भी नहीं मिला। वस्तुतः मध्यमा परीक्षा जिस कोटिकी होनी उचित है उसके लिए एक वर्ष कभी पर्य्याप्त नहीं हो सकता। इस बात को समझ कर ही यह परीक्षा अभी यथेष्ट कठिन नहीं रक्खी गयी। साथ ही यह भी विश्वास था और है कि हमारी परीक्षाओंमें अभी साधारण विद्यार्थी तो कम, किन्तु असाधारण हिन्दी प्रेमी अधिक सम्मिलित होंगे। प्रथमाके परीक्षाफल की सूची पढ़नेसे हमारे इस विश्वासकी पुष्टि होती है। ऐसे सज्जनोंको साधारण विद्यार्थियों की अपेक्षा कम शिकायत होगी क्योंकि समितिको जिन कठिनाइयों का सामना करना है उनसे यह अनभिज्ञ न होंगे, वरन्, जैसा कि हमारा अनुभव है, अपनी अमूल्य सम्मतियों के द्वारा समितिके कार्य्य में सहायक होंगे। परीक्षाविवरण के छपने पर कई सज्जनों ने लिखा कि समय की नियुक्ति उपयुक्त नहीं हुई है। कुछ लोगों का कहना है कि ३१ मार्च को अर्थात् ४ मास पहले शुल्क भेजने की तिथि नियुक्त करनेसे परीक्षार्थियों को केवल चार पांच महीने के अध्ययनपर ही परीक्षा में सम्मिलित होने वा न होनेका निश्चय कर लेना पड़ेगा, परन्तु इतने थोड़े समय में निश्चय कर लेना कठिन है। समिति ने परीक्षार्थियों की कठिनाई की उपेक्षा नहीं की। यदि प्रबन्ध सम्भव होता तो विश्वविद्यालयोंकी नाई समिति भी केवल डेढ़ या दो मास पहले शुल्क लेती, परन्तु प्रथमा परीक्षाके प्रबन्ध में उसे जो कुछ अनुभव हुआ उससे विवश हो उसे परीक्षा और शुल्कग्रहण में चार मास से अधिक का अन्तर रखना पड़ा।

सम्मेलनके वार्षिकाधिवेशन के एक मास पहले परीक्षा फल प्रकाशित करनेको ३ मास पहले, अर्थात् अगस्त में परीक्षा लेनेका प्रबन्ध करना आवश्यक प्रतीत हुआ। जहां परीक्षक को प्रतिकापी कुछ

जँचवाई मिलती है वहां उन्हें कमसे कम एक मास का समय दिया जाता है तब भी ठीक समय पर परीक्षाफल नहीं प्रकाशित हो सकता। हमारे हिन्दी प्रेमी परीक्षक अपने बहुमूल्य समय को परीक्षा के अवैतनिक कार्य्यमें हर्षपूर्वक लगाते हैं, किन्तु यदि हम उन्हें पर्य्याप्त समय न दें तो यह अवैतनिक काम क्या बहुत कालतक चल सकेगा? इस विषय में हम अधिक नहीं कहना चाहते। जिनको उत्तर पुस्तकें विचारपूर्वक कभी जांचनी पड़ी होंगी वही इस कार्य्यमें अधिक समय लगाने की आवश्यकता समझ सकते हैं।

अगस्त के मास में परीक्षा होने से जुलाई में व्यवस्थापकों के पास कापियाँ और पत्रादि भेजे जा सकते हैं। हमारे व्यवस्थापक भी बहुत कालतक अवैतनिक हिन्दीसेवी होंगे और व्यवस्था प्रायः स्कूलों में ही होगी, क्योंकि अन्य स्थानों में बहु-संख्यक परीक्षार्थियों के लिए प्रबन्ध हो सकना बहुत कालतक संभव न होगा, जुलाईके पहिले मई जून में छुट्टियों के कारण सुगमतापूर्वक प्रबन्धविषयक पत्र-व्यवहार स्कूलों के अधिकारियों से नहीं हो सकता। ३१ मार्च को शुल्कादि आने से परीक्षा समिति पहले यह निश्चय करेगी कि कहां कहां परीक्षा देने वाले परीक्षार्थी कितने हैं? हिन्दी के सौभाग्य से हिन्दीभाषी भारतवर्ष क्या संसारभर में फैले हुए हैं। परीक्षाओं में सम्मिलित होने का सबको अधिकार है। परीक्षासमिति जितने स्थानों को अपने अनुमान से परीक्षा केन्द्र बना देती है उतने ही पर्याप्त नहीं हो सकते। गत परीक्षा में जिन स्थानों को केन्द्र बनाया गया उनकी सूची में पीछे से लखनऊ और अलीगढ़ को भी रखना पड़ा, और कोई परीक्षार्थी न मिलने से कलकत्ते को निकाल देना पड़ा। नये केन्द्रों की सूचना पहिले से न होने से परीक्षार्थियों से पत्रव्यवहार करके उनके लिये अधिक सुगम केन्द्र नियुक्त करना पड़ा। यहां विश्वविद्यालयों की नजीर नहीं लग सकती क्योंकि उनके यहां सम्बद्ध शिक्षालयों से ही छात्र आते हैं, तथा सम्बद्ध शिक्षालयों को केन्द्र बनाये जाने पर लाचार हो सब प्रबन्ध करना पड़ता है। शीघ्रतापूर्वक पत्रव्यवहार तथा प्रबन्ध करने को प्रत्येक बाध्य है। यहां समिति को हिन्दीप्रेमी स्कूल के अधिकारियोंसे अभी सहायताकी भिक्षा मांगनी है। यह भिक्षा हमें बड़ी सहृदयता से बड़े प्रेम से मिलती है, परन्तु स्वाधीन प्रबन्ध करनेवालों की

संख्या अगणित नहीं है। ऐसी दशा में प्रबन्ध विषयक समय की संकीर्णता हमारे सौकर्य्य में बहुत बाधक होगी। तब भी परीक्षार्थियों को हम यह आशा दिलाते हैं कि आगामी समिति यथासंभव शुल्क ग्रहण और परीक्षा के बीच इस विशाल अन्तर को घटाने का प्रयत्न अवश्य करेगी।

परीक्षा काल को छुट्टियों के भीतर रखने के प्रयत्न में भी उपर्युक्त कारणों से समिति असफल रही। प्रतिदिन एक से अधिक परचे अगस्त के महीने में देना व्यवस्थापक, निरीक्षक, और परीक्षार्थी सबको असुख का कारण होता। इसी लिये दिनोंकी संख्या भी बढ़ानी पड़ी।

३—गत परीक्षा

जिस समय इस समिति ने कार्य का भार लिया उसे आशा नहीं थी कि यह प्रथमा परीक्षा इतनी सफलता पूर्वक हो जायगी। इस कार्य में समिति को यदि व्यवस्थापकों, निरीक्षकों तथा परीक्षकों से निः संकोच, सहृदय तथा पूर्ण सहायता न मिलती तो यह कार्य सम्मेलन से पूर्व इस वर्ष तो कदापि न होता। अलीगढ़ के मिस्टर द्रविड़, आगरे के गोस्वामि व्रजनाथ शर्मा, आरे के बाबू व्रजनन्दन सहाय, जबलपुर के पंडित रघुवर प्रसाद द्विवेदी, दिल्ली के पंडित हरिश्चन्द्र विद्यालंकार, ब्यावर के सेठ दामोदरदास राठी, प्रयाग के बाबू माधव प्रसाद खन्ना और लखनऊ के बाबू श्याम सुन्दर दास जी व्यवस्थापक थे। इन सब सज्जनों की सहायताका समिति अनेक धन्यवाद देती है। इन आठ व्यवस्थापक महोदयों में चार तो स्वयं उसी स्कूल के हेडमास्टर हैं जहां परीक्षा हुई। परीक्षार्थियों की संख्या कम होने से शेष व्यवस्थापकों ने स्वयं प्रबन्ध कर लिया संख्या बहुत बढ़ जाने पर सम्भवतः हमें हिन्दी प्रेमी शिक्षकों की ही शरण जाना पड़ेगा।

परीक्षाफल परीक्षकों के ही हाथ में होता है। सब से अधिक हम परीक्षक महोदयों के उपकृत हैं जिन्होंने हमारी प्रार्थना के अनुसार दो तीन दिन में ही उत्तर पुस्तकें जांच लीं और परीक्षा के फल भेज दिये। परीक्षकों ने उत्तर पुस्तकों पर जो अमूल्य सम्मति

भेजी है वह प्रश्न पत्रों के साथ २ प्रकाशित की जाती है इन सम्मतियों से जान पड़ता है कि परीक्षकों ने उत्तर पुस्तकों पर गभीर विचार करके परीक्षा फल दिया है। हमको अत्यन्त जल्दी थी अतः सभी परीक्षकों से सम्मति ली न जा सकी आशा है कि अगली परीक्षाओं में समिति सब पर ऐसी सम्मतियां लेकर प्रकाशित करेगी। इन सम्मतियों से भूत और भावी सब तरह के परीक्षार्थियों को एवं साधारण विद्या प्रेमियों को बहुत लाभ होगा।

गत परीक्षा में २८ परीक्षार्थियों से शुल्क के ५६) मिले, और स्थायी-समिति ने परीक्षा के प्रबन्ध के लिए १००) अलग कर दिये थे। व्ययभी इसी के लगभग हुआ। उसका विवृत्त लेखा इस रिपोर्ट के अन्त में परिशिष्ट (ख) में दिया जाता है। साथ ही परिशिष्ट (क) में उत्तीर्ण परीक्षार्थियों की नामावली उत्तमता के क्रम से दी जाती है जिसे मार्गशीर्ष शुक्ला ३ भृगुवार (१९७१) के अधिवेशन में परीक्षा समिति ने स्वीकार कर लिया है अतः इस सूची में निर्दिष्ट परीक्षार्थी प्रमाणपत्र के अधिकारी हुए। इस परीक्षा में लखनऊ के पं० लक्ष्मीधर शुक्ल का फल सर्वोत्तम रहा और पूर्व प्रतिज्ञानुसार शुक्ल जी "बालकृष्ण भट्ट स्मारक" पदक के भी अधिकारी हुए। श्रेणी की दृष्टि से ९ प्रथमा, ३ द्वितीया, तथा ३ तृतीया श्रेणी में उत्तीर्ण हुए।

नियमानुसार वर्तमान परीक्षा समिति का कार्य्य अब समाप्त होगया। समिति को जिन सज्जनों ने सहायता दी उनको पुनर्वार धन्यवाद देती है। स्थायी समिति ने बड़ी शीघ्रता में इस समिति को चुना था अतः उससे त्रुटियों के सिवाय क्या आशा की जासकती थी। अपनी त्रुटियों और भूलों के लिए क्षमा मांगते हुए यह समिति अब पदत्याग करती है और नवीन स्थायी समिति से अनुरोध करती है कि इस बार सोच विचार कर कार्य्यक्षम और अनुभवी विद्वानों की एक समिति संगठित करे।

समिति की ओर से निवेदक,
(ह०) रामदास गौड़।

परिशिष्ट (क)

क्रम संख्या	परीक्षार्थी का नाम	पिता का नाम	निवास स्थान	श्रेणी	विशेष
८	लक्ष्मीधर शुक्ल	पं० सीताराम शुक्ल	लखनऊ	प्रथमा	बालकृष्णभट्ट स्मारक पदक के अधिकारी हुए।
१७	ईश्वरी प्रसाद शर्म्मा	पं० छिद्दू सिंह	अलीगढ़	प्रथमा	
७	पुत्तनलाल विद्यार्थी	लाला छोटे लाल	लखनऊ	"	
४	श्री कृष्णदत्त शर्म्मा पालीवाल	पं० ब्रजलाल शर्म्मा पालीवाल	ग्राम तनौरा (आगरा)	"	
१४	अध्यापक रामरत्न	पं० नन्दकिशोर	आगरा	"	
२६	श्याम सुन्दर लाल	श्रीयुत् कन्हू सिंह	नानकमता (नैनीताल)	"	
६	मन्नालाल द्विवेदी	पं० मिट्ठू प्रसाद द्विवेदी	कुकड़ेश्वर	"	
११	भागीरथ प्रसाद दीक्षित	पं० भोला नाथ प्रसाद जी दीक्षित	कोटा	"	
१६	ब्रजमोहन मालवीय	पं० विश्वेश्वर प्रसाद मालवीय	प्रयाग	"	
२३	रमाशंकर अवस्थी	पं० प्यारे लाल अवस्थी	प्रयाग	"	
२४	प्रधान मुद्रिका प्रसाद	श्रीयुत् प्रधान केसरी सहाय	प्रयाग	द्वितीया	
३२	बनवारी लाल ब्रह्म चतुर्वेदी	चतुर्वेदी पं० राधाकृष्ण	आगरा	"	
५	ब्रजनारायण शर्म्मा	गुरु पं० मोतीलाल जी	अलवर	"	
२५	विश्वेश्वर दयाल चतुर्वेदी	पं० लल्लूमल चतुर्वेदी	आगरा	तृतीया	
३	विष्णुदत्त व्यास	पं० बाबूराम व्यास	मेरठ	"	

परिशिष्ट (ख)

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा का आयव्यय।

आय		व्यय	
१००)	सम्मेलन की स्थायी समिति से प्राप्त हुआ।	८)	पुस्तक मोल ली गई।
५८)	शुल्क प्राप्त हुआ।	४॥-)	तार
३।)॥	पुस्तकों की बिक्री।	१३॥।)	डाक महसूल
		२॥)	रेल पार्सल
		३॥=)	स्टेशनरी
		६५॥=)	छपाई और कागज
		३६।≡)	परीक्षाके व्यवस्थापकों का खर्च
		१६॥=)॥	राह खर्च
		-)॥	फुटकर
१५६।)॥		१५४॥)।	व्यय
		४॥)।	बचत
१५६।)॥		१५६।)॥	

तरुण-भारत ग्रन्थावली

नागपुर की "हिन्दी-ग्रन्थ-प्रकाशक-मण्डली" के बन्द होने के बाद से ही (जो कि हिन्दी की अपने ढंग की पहली ग्रन्थ-प्रकाशक मंडली थी) मेरी इच्छा थी कि हिन्दी में ऐसा उद्देश्य लेकर ग्रन्थ प्रकाशन शुरू किया जाय जो भारत के तरुणों को योग्य मार्ग दिखला सके, उनको अपने देश की सेवा करने के योग्य विचारों में प्रवृत्त करे। अब हिन्दी के सौभाग्य से कई जगह ग्रन्थ-प्रकाशन का कार्य प्रारम्भ हुआ है और सब लोग साहित्य वृद्धि की दृष्टि से अच्छा कार्य कर रहे हैं। यह देख कर मेरी उपर्युक्त इच्छा फिर एक बार स्फुरित हुई है और हमने अपने नौनिहालोंकी सेवा करने का निश्चय किया है। इस ग्रन्थावली में ऐतिहासिक, चरित्र सम्बन्धी और नीति के तात्विक ग्रन्थ प्रकाशित होंगे। ग्रन्थों का मूल्य जहां तक हो सकेगा कम रखा जायगा विचारों का प्रचार करना ही इसका उद्देश्य होगा। पांच सौ ग्राहक होजाने पर पहला ग्रन्थ निकलेगा। कृपया अपना नाम पता भेज दीजिये मुझे पूर्ण आशा है कि भारतीय तरुण दो तीन मास में यह संख्या पूरी कर देंगे।

मेरा पता

लक्ष्मीधर वाजपेयी

मुज़फ़्फ़रखां का बाग आगरा

लीजिये ! बढ़िया ग्रन्थ ! लीजिये !

कर्म वीर गान्धी।

केवल आठ आने के पैसे खर्चकर इस महापुरुष के जीवन चरित का पाठ करो।

देशभक्त लाजपत

कोन हैं जो भारत के सपूत देशभक्ति लाला लाजपतराय जी के नाम को नहीं जानता। लीजिए एक रुपया खर्च कर इसे खरीदिये यह जीवन तथा व्याख्यान पढ़ने लायक है। सम्मेलन पत्रिका के ग्राहकों को बारह आने में मिलेगी। लीजिये। जल्दी कीजिये।

निवेदक—

मंत्री, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।

नीति दर्शन

"एक पन्थ दो काज"

लीजिये, पढ़िये बाबू राधामोहन गोकुलजीने नीति दर्शन में नीति सम्बन्धी अनेक विषयों का समावेश किया है लीजिये, खरीदिये, पुण्य संचय कीजिये, क्योंकि इसका मूल्य पसा फंड में जमा होगा, मूल्य ।||)

स्वामी सत्यदेव जी

रचित पुस्तकें

पढ़िये ! लीजिये !! पढ़िये !!!

मनुष्य के अधिकार

(मूल्य पांचआने)

सत्य निबन्धावली

(मूल्य आठ आने)

यदि आप अपनी सन्तान को हिन्दी प्रेमी, देश भक्त और सच्चरित्र बनाया चाहते हैं तो इन पुस्तकों को पढ़िये।

हिन्दी का सन्देश

(मूल्यएक आना)

छप गया ! लीजिये। स्वामी सत्यदेव जी का यह प्रसिद्ध व्याख्यान छप कर तय्यार है। इकट्ठी पुस्तकें मंगाइये। दस आनों से कम का बी० पी० नहीं भेजा जाता।

निवेदक—

मंत्री, हिन्दी साहित्यासम्मेलन, प्रयाग।

"सम्मेलन पत्रिका" के नियम ।

१—"सम्मेलन पत्रिका" हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन कार्य्यालय प्रयाग, से प्रतिमास प्रकाशित होगी।

२—इसका वार्षिक मूल्य १) इसलिये रक्खा गया है कि सर्व-साधारण इसके ग्राहक होसकें।

३—इस समय इसमें प्रतिमास कुल २४ पृष्ठ ही रहा करेंगे। परन्तु आवश्यकता होने पर भी कभी पृष्ठ संख्या बढ़ा भी दी जाया करेगी। आगे चलकर यदि इसकी सेवा साहित्य-सेवियों को रुचिकर हो, और इसके ग्राहकों की यथोचित संख्या हो जाय तो यही पत्रिका अधिकतर पृष्ठ-संख्याओं में और अधिकतर उन्नति दशा में प्रकाशित की जायगी।

४—इसके प्रबन्ध-विभाग के पत्र—ग्राहक बनने के लिये आवेदन, विज्ञापन-सम्बन्धी पत्र, मनीआर्डर इत्यादि—मन्त्री, साहित्य-सम्मेलन कार्य्यालय, जानसेनगंज प्रयाग, के नाम भेजे जाने चाहियें।

५—सम्पादक के नाम की चिट्ठियां, बदले के समाचार-पत्रादि समालोचना की पुस्तकें, पत्रिका में प्रकाशित होने के लिये लेखादि भी ऊपर ही के पते से भेजे जाने चाहिये।

विज्ञापनदाताओं के लिये नियम।

१—"सम्मेलनपत्रिका" में अश्लील विज्ञापनों को स्थान नहीं मिलेगा।

२—विज्ञापन साधारणतः पूरे और आधे पृष्ठ से कम स्थान के लिये स्वीकृत न होंगे।

१—पृष्ठ का मासिक मूल्य ... ४॥) होगा

२—आधे पृष्ठ का ... २॥) होगा

३—जो लोग १२ संख्याओं में विज्ञापन छपवाने का मूल्य एक साथ भेज देंगे, उनका विज्ञापन एक संख्या में बिना मूल्य छाप दिया जायगा, अर्थात् १२ की जगह १३ बार उनका विज्ञापन छापा जायगा।

४—किसी दशा में पेशगी मूल्य बिना मिले कोई भी विज्ञापन नहीं छापा जायगा।

५—विक्रयार्थ पुस्तकों के विज्ञापनों पर ऊपर दिये हुये मूल्य से कम मूल्य न लिया जायगा।

१ पृष्ठ का मूल्य १ मास के लिये ३॥) और

आधे ,, ,, २) होगा

६—अदालतों में लेखकों की नौकरी, अध्यापक-अध्यापिकाओं की नौकरी, इत्यादि हिन्दी-प्रचारार्थ नौकरियों के विज्ञापन एक बार बिना मूल्य छाप दिये जायंगे। दूसरी बार और अधिकवार के लिये ऐसे विज्ञापनों का मूल्य केवल १) प्रतिमास होगा। विज्ञापन ८ पंक्तियों से अधिक न हो।

मन्त्री, हि० सा० स० कार्य्यालय, प्रयाग।

पं० ओंकारनाथ वाजपेयी के प्रबन्ध से ओंकार प्रेस प्रयाग में छपा।

Reg. No. A629.

सम्मेलन पत्रिका

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की

मुखपत्रिका।

भाग २ } पौष और माघ संवत् १९७१ { अङ्क ४-५

विषय सूची

[वार्षिक मूल्य १)] एक संख्या =)

हिन्दी साहित्यसम्मेलन से बाबू नरेन्द्र नरायण सिंह द्वारा प्रकाशित

सम्मेलन के उद्देश्य

(१) हिन्दी साहित्य के अङ्गों की उन्नति का प्रयत्न करना।

(२) देवनागरी लिपि का देश भर में प्रचार करना और दे... व्यापी व्यवहारों और कार्यों के सुलभ करने के लिये हिन्दी भा... को राष्ट्र भाषा बनाने का प्रयत्न करना।

(३) हिन्दी को सुगम, मनोरम और लाभदायक बनाने के लि... समय समय पर उसकी शैली के संशोधन और उसकी त्रुटियों औ... अभावों के दूर करने का प्रयत्न करना।

(४) सरकार, देशी राज्यों, पाठशालाओं, कालेजों, विश्व... विद्यालयों और अन्य संस्थाओं, समाजों, जनसमूहों तथा व्यापा... ज़मीदार और अदालतों के कार्यों में देवनागरी लिपि और हिन्दी भाषा के प्रचार का उद्योग करते रहना।

(५) हिन्दी के ग्रन्थकारों, लेखकों, पत्रसंपादकों, प्रचारकों और सहायकों को समय समय पर उत्साहित करने के लिये पारि... तोषिक, प्रशंसापत्र, पदक, उपाधि आदि से सम्मानित करना।

(६) उच्च-शिक्षा प्राप्त युवकों में हिन्दी का अनुराग उत्प... करने और बढ़ाने के लिये प्रयत्न करना।

(७) जहाँ आवश्यकता समझी जाय वहां पाठशाला, समि... तथा पुस्तकालय स्थापित करने और कराने का उद्योग करना त... इस प्रकार की वर्त्तमान संस्थाओं की सहायता करना।

(८) हिन्दी-साहित्य के विद्वानों को तैयार करने के लि... हिन्दी की उच्च परीक्षाएं लेने का प्रबन्ध करना।

(९) हिन्दी भाषा के साहित्य की वृद्धि के लिये उपयो... पुस्तकें तैयार करना।

(१०) हिन्दी-साहित्य सम्मेलन के उद्देश्यों की सिद्धि ... सफलता के लिए अन्य जो उपाय आवश्यक और उपयुक्त सम... जांय उन्हें काम में लाना।

सम्मेलन-पत्रिका का उद्देश्य

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के उद्देश्यों की पूर्ति में सहा... करना, और साहित्य प्रेमियों से इसी के लिये उपदेश लेना।

सम्मेलनपत्रिका

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की कार्यकारिणी समिति
की ओर से प्रतिमास प्रकाशित।

भाग २ } पौष और माघ संवत् १९७१ { अङ्क ४-५

हिन्दी संसार।

लखनऊ में पञ्चम सम्मेलन

मार्ग शीर्ष शुक्ला ९। १० और ११ संवत् १९७१ अंगरेज़ी तारीख़ २६, २७ और २८ नवम्बर सं० १९१४ को लखनऊ में हिन्दी साहित्य सम्मेलन का पञ्चम अधिवेशन बड़ी सफलता से हुआ। सम्मेलन से पूर्व हिन्दी भाषा भाषियों में परस्पर सम्मेलन के समय के सम्बन्ध में जो आन्दोलन होरहा था, उससे यह सम्भावना होती थी कि शायद मातृभाषा के कुछ अनन्य भक्त इस बार सम्मेलन में योग न देसकेंगे। परन्तु सम्मेलन के समय के सम्बन्ध में आन्दोलन करनेवालोंने अपनी उदारता का परिचय दिया, असुविधाएं रहने पर भी उन्होंने सम्मेलनमें पधारने की कृपा की।

इस बार सम्मेलन में दूर दूरसे प्रतिनिधि पधारे थे। ऐसा कोई प्रान्त न था जहां से प्रतिनिधि न आये हों बम्बई, मध्यप्रदेश, पंजाब, विहार, प्रान्त बङ्गाल और संयुक्तप्रान्त, आदि सभी प्रान्तोंसे प्रतिनिधि गण पधारे थे। प्रतिनिधियों की संख्या ४६५ थी, जिनमें से लगभग ८९ स्थानीय थे।

प्रतिनिधियों के अतिरिक्त दर्शकों की भी बहुत अधिक संख्या थी। लगभग चार पांच हज़ार मनुष्यों से सभास्थल खचाखच भरा रहता था। क्या दर्शक, क्या प्रतिनिधि सभी के मुखों पर मातृ भाषा हिन्दी के प्रति उत्साह की अपूर्व ज्योति झलक रही थी स्वेच्छा सेवकों का उत्साह प्रशंसनीय था। सभास्थल में सुशोभित सज्जनों का उत्साह कैसा था इसका अनुमान केवल इतने सेही किया जा सकता है कि जब परीक्षोत्तीर्ण विद्यार्थियों की नामावली सुनाई गई तब आगामी परीक्षा में उत्तीर्ण होनेवाले विद्यार्थियों को रजत और सुवर्ण पदक प्रदान करनेवालों के इतने नाम आये थे, कि जो पढ़कर सुनाये नहीं जासके।

वक्तृताओं के विचार से भी पञ्चम सम्मेलन बहुत अच्छा हुआ। स्वागतकारिणी सभा के अध्यक्ष तथा सम्मेलन के सभापति के सुललित व्याख्यान तो हुए ही थे, किन्तु राय देवीप्रसाद (पूर्ण) बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन,श्रीयुक्त हरिश्चन्द्र विद्यालङ्कार,पं० दुर्गा प्रसाद श्रीब्रह्मचारी इन्द्रवेदालङ्कार,श्रीयुक्त सत्यदेव बाबू श्यामसुन्दर दास पं०रामनारायण मिश्र,तथा बांदाके वकील कुँवर हरप्रसादसिंह की अच्छी वक्तृताएं हुईं।पूर्ण कविजीकी हृदयग्राही कविता तथा प्रभाव शालिनी वक्तृतासे श्रोतागणको विशेष आनन्द प्राप्त हुआ। आगरेके पं० सत्यनारायण कविरत्नकी कविता भी ओजपूर्ण थी। पं० माधव शुक्ल तथा पं० जीवानन्द काव्यतीर्थ के मधुर गान से भी श्रोताओं को बड़ी प्रसन्नता हुई। अवध प्रान्त के अनेक ताल्लुकदारों और वकीलों ने आगे से अपने यहां के कार्य्यों को हिन्दी में करने की प्रतिज्ञा की थी। अन्त में सब से बढ़कर सम्मेलन को यह सफलता प्राप्त हुई कि पंजाब की राजधानी लाहौर से आगामी वर्ष के लिये निमन्त्रण आया सम्पूर्ण वृतान्त आगे दिया जाता है।

सभापति का आगमन।

सम्मेलन के अधिवेशन के एक दिन पूर्व अर्थात् मार्गशीर्ष शुक्ल ८ संवत् १९१४ गत २५वीं नवम्बर सन् १९१४ को सम्मेलन के सभापति पं० श्रीधर पाठक पञ्जाब मेल से लखनऊ पहुंचे। स्टेशन

पर आपके स्वागत के निमित्त पण्डित गणेश विहारी मिश्र, बाबू श्याम दास बी० ए०, बाबू पुरुषोत्तम दास टण्डन, ताल्लुकदार पंडित चन्द्र भाल वाजपेयी, करवी के श्रीयुक्त बाबा साहब मोरेश्वर बलवन्त जोग, पं० अम्बिका प्रसाद वाजपेयी, बाबू भगवान दास हालना प्रभृति अनेक सज्जन उपस्थित थे। मुहर्रम के कारण जुलूस की व्यवस्था नहीं हो सकी। सभापति महोदय के स्टेशन पर पहुंचने पर सभापति की जय, हिन्दी भाषा की जय से स्टेशन गूंज उठा।

गत २५वीं नवम्बर को सन्ध्या को स्थायी समिति का भी एक अधिवेशन हुआ जिस में सम्मेलन सम्बन्धी कई आवश्यक विषयों पर विचार किया गया।

प्रथम दिन।

मार्ग शीर्ष शुक्ल ९

कालीचरण हाईस्कूल में जहाँ बहुत से प्रतिनिधि ठहराये गये थे वहीं पर सभा मंडप बनाया गया था। सभा मंडप भव्य, सुन्दर और सुहावना था। अनेक स्थानों में बेल बूटों से सजाया गया था। मञ्च पर स्वागत कारिणी समिति के सभापति राजा रामपालसिंह सी आई० ई० ठाकुर सूर्य्यबक्ससिंह, पंडित चन्द्र भाल बाजपेयी, पंडित गोकर्णनाथ मिश्र, बाबू श्याम सुन्दर दास, पं० गणेश विहारी मिश्र, प्रभृति और साहित्य सेवी ताल्लुकदार बैठे हुए थे।

लगभग साढ़े बारह बजे के सभापति पं० श्रीधर पाठक सभा मंडप में पधारे, उनके पधारते ही तालियों की ध्वनि से सभा मंडप गूंज उठा। जनसमूह से सभापति की जय, हिन्दी भाषा की जय, राष्ट्र भाषा की जय इत्यादि ध्वनि हुई। आरम्भ में पं० माधव शुक्ल ने स्वरचित बन्देमातरम् का श्रोताओं को आकर्षण करने वाला सुन्दर गीत हारमोनियम पर गाया। इस गीत को सुन कर श्रोतागण बहुत प्रसन्न हुए। इसके पश्चात् तीन पंडितों ने वेद मन्त्रों द्वारा मङ्गलाचरण किया।

राजारामपालसिंह के मंत्री ठाकुर तिलक सिंह ने बाबू मैथिली शरण गुप्त की कविता पढ़ कर सुनाई, तत्पश्चात् स्वागतकारिणी सभा के सभापति राजा रामपालसिंह ने अपना विवेचना पूर्ण व्याख्यान पढ़ कर सुनाया, उन्होंने आरम्भ में आगुन्तक सज्जनों का स्वागत करते हुए, अवध के साहित्यसेवियों का भी प्रसङ्ग वश कुछ वर्णन किया था। इस व्याख्यान से अवध के प्राचीन और नवीन साहित्यसेवियों के प्रति उनकी भक्ति, प्रेम और सहानुभूति का परिचय मिलता है, हिन्दी के पद्यकाव्य के सम्बन्ध में आपने जो सम्मति दी थी, वह प्रत्येकसाहित्य सेवी के विचार के योग्य है। आप ने कहाः—"......हिन्दी के पद्य-काव्य की अवस्था आज कल शोचनीय हो रही है। विधिवत् गुरु से पढ़ साहित्य समुद्र मथन कर काव्य करने की रीति उठ गई है। जिसके जी में आया, वही तुकबन्दी करने लगा। काव्य शास्त्र के ज्ञाता अच्छे कवियों की आज भी कमी नहीं है, परन्तु खेद का विषय है कि सामयिक पत्रों में कविता प्रकाशित कराने वाले हमारे अधिकांश कवि हिन्दी को कलङ्कित कर रहे हैं और यदि यही क्रम रहा तो हिन्दी-साहित्य को बड़ी हानि पहुंचने की सम्भावना है। काव्य के विशेषज्ञों को चुपचाप यह अनर्थ न देखना चाहिये। बाबू मैथिली शरण गुप्त आदि की भांति यदि लोकप्रिय विषयों पर वे कविता प्रारम्भ कर दें तो बहुतेरे स्वयं सिद्ध कवि कपूर हो जांय और कविता करने की इच्छा रखने वालों को काव्य शास्त्र पढ़ना ही पड़े।" —

जो लोग यह कहते हैं कि अवध प्रान्त की भाषा उर्दू है, उनको मुंहतोड़ जवाब स्वागतकारिणी सभा के सभापति ने सरकारी रिपोर्टों के आधार पर यह दिया हैः—"मनुष्य गणना के गत विवरण से पता चलता है कि अवध के १२०५१८०० अधिवासियों की भाषा हिन्दी, ४८४६१९ की उर्दू है। शेष २१५८५ अवधवासी अन्य आर्य एवं अनार्य भाषाएं बोलते हैं। हिन्दी भाषियों की संख्या अपेक्षाकृत अत्यधिक होते हुए भी अङ्गरेजी काल में ४३। ४४ वर्ष तक अदालतों में उर्दू का ही रङ्ग जमा रहा और हिन्दी बहिष्कृत रही। यह जानकर अवध के भावी निवासियों को चकित होना पड़ेगा।

इसके आगे उन्होंने माननीय पण्डित मदनमोहन मालवीय के उद्योग और सर ऐण्टनी मेकडानेल्ड की कृपा से अदालतों में जो नागरी अक्षरों को अधिकार मिला है उसका जिक्र करते हुए कहाः—"घोर लज्जा का विषय है कि अवधवासियों ने भी युक्त प्रान्त के अन्य स्थानों के हिन्दी भाषी निवासियों की भांति इस आज्ञा से कोई लाभ नहीं उठाया। सम्मेलन की स्थायी समिति तथा दो एक नगरों की स्थानीय नागरी प्रचारिणी सभाओं के उद्योग से अब कुछ जिलों में कुछ कुछ अदालती कार्य्य नागराक्षरों में भी होने लगा है परन्तु हम अवधवासियों के कानों पर अभी तक जूं नहीं रेंगी। मेरे वकील मित्रगण मुझे क्षमा करें। यदि मातृभाषा के प्रति, जननी जन्म भूमि के प्रति अपना दायित्व समझ कर वे कटिबद्ध हो अपना कर्तव्य पालन करते तो बहुत कुछ सफलता प्राप्त हो सकती थी। भविष्य में भी हिन्दी भाषी वकीलगण अपने कर्त्तव्य की इसी प्रकार अवहेलना करते रहेंगे, यह आशा नहीं है।"

स्वागत कारिणी सभा के सभापति महाशय ने अवध में हिन्दी और उर्दू के प्रचार के सम्बन्ध में और भी बहुत सी बातें कही थी गत मनुष्य गणना—विवरण के सम्पादक की आपने निम्न उक्ति उद्धृत की थी:—" In practice, the Persian is still the court script and undoubtedly this makes a difference, causing it to be the more popular." अर्थात् वास्तव में, अदालतों में अभी तक फ़ारसी अक्षरों का ही साम्राज्य है और इसी कारण जनता इन अक्षरों का अधिक आदर करती है। प्रयागीय विश्व विद्यालयों में हिन्दी को स्थान न मिलने पर दुःख प्रकट करते हुये प्रारम्भिक शिक्षा पुस्तकों की भाषा के सम्बन्ध में अनेक युक्तियों से बतलाया कि उनकी भाषा कैसी होनी चाहिये। आपने कहाः—"पिगट कमेटी के निर्णय पर विचार कर गत २६वीं अगस्त के प्रादेशिक गज़ठ में प्रारम्भिक शिक्षा-विषयक युक्तप्रदेश की सरकार का मन्तव्य प्रकाशित हुआ है। इस मन्तव्य में सरकार ने इस बात पर बल दिया है कि प्रारम्भिक शिक्षा सामान्य भाषा जिसे सरकार हिन्दुस्थानी या उर्दू कहती है द्वारा ही होना आव-

श्यक है। युक्त प्रान्त के छोटे लाट सर जेम्स मेस्टन महोदय की सम्मति है कि युक्त प्रान्त के शिक्षित समुदाय की यही भाषा है। शिक्षित मुसलमानों की यही भाषा हो सकती है। परन्तु शिक्षित हिन्दू मात्र की भाषा उर्दू है, यह विश्वास करने के योग्य नहीं। बाद के लिये यदि यह स्वीकार भी कर लिया जाय कि युक्त प्रान्त के शिक्षित हिन्दुओं की भाषा उर्दू है, उनकी भाषा वही है जिसमें वे शिक्षित मुसलमान भाईयों से बातचीत करते है या आवश्यकता पड़ने पर सरकारी कर्मचारियों से वार्तालाप करते हैं तो भी प्रारम्भिक शिक्षा उर्दू भाषा में ही देने की उपयोगिता सिद्ध नहीं होती।

गत मनुष्य गणना विवरणके अनुसार युक्त प्रान्तके ४८०१४०८० अधिवासियों में त, म तथा Dog कहने वालों को मिलाकर भी शिक्षितों की संख्या केवल १६१८ ४६५ है। इनमें १३४०१४३ हिन्दू और २२४२ ८८ मुसलमान हैं और शेष अन्य जातियों के मनुष्य हैं अशिक्षितों की संख्या बहुत बड़ी है। १६१८४६५ शिक्षित को लज्जित करने के लिये ४५५६३५७६ अशिक्षित युक्तप्रान्त में वर्तमान हैं। गणना विवरण में ४३७६६६५६ हिन्दी भाषी स्वीकार किये गये हैं और ४०६५७२८ उर्दू या हिन्दुस्थानी—भाषियों की संख्या बतायी गयी है। सरकारी अङ्कों के अनुसार ही अशिक्षितों में हिन्दी भाषियों का ही प्राधान्य है और उर्दू भाषियों की संख्या नहीं के बराबर है। एक बात यह भी विचारणीय है कि जिस भाँति नगरों के रहने वाले अधिकांश शिक्षित हिन्दी उर्दू बोलते हैं उसी भांति ग्रामीण अशिक्षित मुसलमान सब हिन्दी ही बोलते हैं। इस अवस्था में मुट्ठी भर पढ़े लिखों की बोल चाल की भाषा को कोटियों हिन्दी भाषियों पर बलपूर्वक लादना कहां तक युक्ति संगत है, यह शासक वर्ग स्वयं विचार लें"। अन्त में पंडित श्रीधर पाठक को सभापति करने का प्रस्ताव उपस्थित किया। इस भाँति युक्ति और तर्क पूर्ण—स्वागत कारिणी सभा के सभापति का भाषण था।

स्वागतकारिणीसभा के सभापति की वक्तृता के पश्चात् पंडित अयोध्या सिंह उपाध्याय और पं० जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी ने श्रीयुक्त पं० श्रीधर पाठक जी के सभापति करने के प्रस्ताव का अनुमोदन और समर्थन किया। पं० श्रीधर पाठक जी ने सभापति

का आसन ग्रहण किया। और मंडप तालियों की आनन्द ध्वनि से गूंज उठा।

सभापति महाशय अस्वस्थ्य थे, अतएव उनकी वक्तृता बाबू श्याम सुन्दर दास बी० ए० महोदय ने पढ़ कर सुनाई, सभापति महोदय की वक्तृता विद्वत्ता पूर्ण थी। उसमें साहित्य निर्माण सम्बन्धी काव्य नाटक उपन्यास दृष्टान्त संग्रह आदि कई विषयों पर अच्छा विचार किया गया है। लेख शैली कैसी होनी चाहिये, क्रिया लिङ्ग, कारक, सम्बन्धी विषय परभी उन्होंने अपनी सम्मति प्रकटकी। पिछले वर्ष हिन्दी साहित्य में जो जो नूतन ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं उनके सम्बन्ध में भी आपने अपनी सम्मति प्रकट की थी। सभापति के व्याख्यान में कहीं कहीं राष्ट्रीयताकी भी झलक थी। इसके आगे सभापति महोदय ने खड़ी बोली और ब्रजभाषा के सम्बन्धमें अपने विचारप्रकट किये थे, ब्रजभाषाके सम्बन्धमें आपने कहा—"ब्रजभाषा सरीखी रसीली वाणीको कविता क्षेत्रमें बहिष्कृत करनेका विचार केवल उन हृदयहीन अरसिकोंके ऊपर हृदयमें उठना सम्भवहै जो उस भाषा के स्वरूप ज्ञान से शून्य और उसकी सुधा के आस्वादन से बिलकुल बञ्चित हैं। जिस सुकवि हंसालिसंसेवित सारस्वत सरोवर से सूर तुलसी प्रभृति सुरि सम्राट सत्पद्य-पीयूष के अक्षय स्रोत प्रवाहित कर गये हैं उसे रुद्धद्वार कर देने की कामना या चेष्टा कहां तक सहृदयता से अनुमोदित होसकती है केवल सहृदय ही अनुमान कर सकते हैं? आपने साहित्य की श्रीवृद्धि के लिये उद्यान सम्मिलन, सान्ध्य सम्मिलन तथा दूसरे प्रकार की छोटी छोटी गोष्ठियों की प्रथा की अनुमति दी थी। आशा है हिन्दी साहित्य सेवी, सभापति महाशय के परामर्श के अनुसार साहित्य की श्रीवृद्धि के लिये कार्य करेंगे।

सभापति का व्याख्यान लगभग एक घण्टे में समाप्त हुआ। इसके पश्चात् बाबू श्यामसुन्दर दास ने युक्त प्रदेश के छोटे लाट सरजेम्स मेस्टन, माननीय पं० मदनमोहन मालवीय पं० बदरीनारायण चौधरी तथा अन्य सज्जनों के सहानुभूति के तार पढ़ सुनाये पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय ने "उलाहना" नामक अपनी कविता पढ़ी जो अन्यत्र प्रकाशित है ब्रजेश कविने हिन्दी कवियों के सम्बन्ध

में अपनी कविता और पं० माधव शुक्ल ने बाबू मैथिली शरण गुप्त की कई कविताएं पढ़ सुनाईं। लगभग सन्ध्या के चार बजे आजका कार्य्य समाप्त हुआ। रात्रि को सात बजे विषय निर्वाचन समिति बैठी और रात्रि के १२ बजे तक अनेक मन्तव्यों पर विचार होता रहा।

दूसरा दिन

मार्गशीर्ष शुक्ल १०

आज अनुमान १२ बजे के कार्य्य प्रारम्भ हुआ। सभा स्थल खचाखच भरा हुआ था। प्रथम प्रस्ताव यूरोप के वर्त्तमान युद्ध और सम्राट की विजय कामना के सम्बन्ध में था सभापति ने यह प्रस्ताव उपस्थित किया और सर्व सम्मति से स्वीकृत हुआ। दूसरा प्रस्ताव भी सभापति द्वारा उपस्थित किया गया और सर्व सम्मति से स्वीकृत हुआ। यह प्रस्ताव इस वर्ष जिन हिन्दी हितैषी लेखकों और सहायकों की मृत्यु हो गई है, उनके सम्बन्ध में था।

टंडनजी की वक्तृता।

उपर्युक्त दोनों प्रस्तावों के स्वीकृत होजाने के पश्चात् बाबू पुरुषोत्तम दास टंडन नोटों और सिक्कों पर हिन्दी को स्थान दिलाने के प्रस्ताव को उपस्थित करने को खड़े हुए। आपकी वक्तृताका साराँश यह है:—"आजकल भारत में राष्ट्रीयता की आवश्यकता बतलाई जा रही है परन्तु इसकी प्राप्ति के लिए जो वास्तविक साधन हैं उन पर पूरा ध्यान नहीं दिया जाता। दुःखसे कहना पड़ता है कि हमारे नेताओं में आत्मिक बल की कमी है। हम अपने सन्मुख उपस्थित किसी विषय पर अच्छी तरह और न्याय के साथ विचार भी नहीं करते। सार्वजनिक आन्दोलनो में छोटे छोटे गिरोहों को बाँधकर हम लोग खड़े होते हैं और अपने अपने प्रान्तों की बात को आगे करते हैं। राष्ट्रीयता के सम्पादन के लिये भाषा ही सब से बड़ा सूत्र है। परन्तु हमारी राष्ट्रसभा काँग्रेस में मुख्य प्रश्न सदा छोड़ दिये जाते हैं। मैं हिन्दी का पक्ष केवल हिन्दू होने की दृष्टि से नहीं वरन् राष्ट्रीयता की दृष्टि से करता हूं। यह स्पष्ट है कि भाषा

हीसे जाति पहिचानी जाती है। परन्तु आजकल हम क्या देखते हैं? हिन्दू युवक अंगरेज़ी पढ़ लिखकर प्रायः उसी विदेशी भाषा में चिट्ठी पत्री तक लिखने लगते हैं। मैं ने स्वयं कुछ थोड़ीसी अङ्गरेज़ी पढ़ी है मैं अङ्गरेज़ी पढ़ने का विरोधी नहीं हूं। यह लक्षण उसी जाति का हो सकता है जो गिरती हुई हो और जिसमें कुछ भी स्वाभिमान न हो।

हम सब को यह समझ लेना चाहिये कि राष्ट्रीयता की प्राप्ति के लिए हमें कुछ स्वार्थत्याग अवश्य करना पड़ेगा। यह उचित है कि हिन्दू, मुसलमान, ईसाई सब मिलकर इस प्रश्न पर विचार कर और एक ऐसी भाषा को निर्धारित करें जो हिन्दुस्तान की राष्ट्रभाषा होसकती है। इस विषय में हिन्दी की उपयुक्तता बड़े २ विद्वानों ने स्वीकार कर ली है। हिन्दी-साहित्य की उच्चता भी प्रसिद्ध भाषाशास्त्रज्ञों को माननी पड़ी है। श्रीयुत राजेन्द्रलाल मित्र की सम्मति में किसी इतर देशी भाषा का साहित्य हिन्दी के साहित्य से श्रेष्ठ नहीं है। बीम साहब ने भी अपनी 'Comparative Grammar" में यही बात कही है। ऐसी अन्य बहुतसी साक्षियां दी जा सकती हैं,।

सचमुच हिन्दी का प्रश्न हमारे लिये प्रधान प्रश्न है। हिन्दीकी शिक्षा का प्रभाव कितना हितकर होता है इसका प्रमाण मेरा यह अनुभव है कि जहां जहां हिन्दी के माध्यम से शिक्षा दी गई है वहाँ बालकों का चरित्र अन्य स्थानोंकी अपेक्षा अधिक अच्छा पाया गया है। हमारी हिन्दी एक तरह से इस समय भी हिन्दुस्तान की 'Lingua Franca' (राष्ट्रभाषा) है। मद्रास को छोड़कर नागरी अक्षर चारों ओर फैले हुये हैं और स्वयं मद्रास में भी संस्कृत के प्रचार के कारण लोगों को नागरी अक्षरों से परिचय है। महान् आश्चर्य का विषय है सरकार ने इन्हीं नागरी अक्षरों को नोटों से उठा दिया है! मेरे कानों में कई बार यह आवाज़ पड़ चुकी है कि नोटों पर नागरी न रहने के कारण बेचारे गाँववालों को धोखा हो गया और वे यह न जान सके कि नोट का मूल्य क्या है। अस्तु, मैं उन लोगों से सहमत नहीं हूं जो कहते है कि इस विषय में अब हमें सरकार से व्यर्थ प्रार्थना न करनी चाहिये। मेरा विश्वास है

कि गवर्नमेन्ट प्रबल लोकमत की बहुत दिनों तक उपेक्षा नहीं कर सकती। यदि हमारी शिकायतें लगातार सरकार तक पहुंचती रहेंगी तो उसे झखमारकर नोटों पर नागरी को स्थान देना पड़ेगा।

सीतापुर के पं० दुर्गाप्रसाद बी० ए० एल० एल० बी० के अनुमोदन और कालाकाकर के श्रीयुत देवदत्त के समर्थन करने पर यह प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकृत हुआ।

चौथा प्रस्ताव पंजाब और प्रयागके विश्वविद्यालयोंमें हिन्दीको स्थान देनेके सम्बन्धमें था। इस प्रस्तावको लखीमपुरके वकील पं० सूर्य नारायण दीक्षित ने उपस्थित करते समय निम्न वक्तृता दी:— "हिन्दी के विरोधी विश्वविद्यालयोंमें हिन्दीको उच्च स्थान न मिलने के सम्बन्धमें कई प्रकारकी दलीलें दिया करते हैं। उनमेंसे किसी २ का कहना है कि हिन्दी कोई भाषा ही नहीं हैं। कुछ कहते हैं कि हिन्दी में साहित्य नहीं है। ऐसी पोच दलीलोंके उत्तर देनेकी आवश्यकता नहीं है। जिस भाषामें हम बातेंकर रहे हैं, क्या वह हिन्दी नहीं है? किसी भाषा में दूसरी भाषा के शब्द आजाने से वह भाषा मर नहीं जाती। अंगरेजी में भी दूसरी भाषाओं के शब्द मिलते हैं। मगर फिर भी अंगरेज़ी मरी हुई भाषा नहीं है, वह अंगरेज़ी ही बनी हुई है। इसी तरह हमारी भाषा भी ज़िन्दा जीती हुई है और जिस दिन हमारी भाषा न होगी उसी दिन हमारी जाति भी न रहेगी। सरकारी बिश्वबिद्यालय हमारी इस भाषा की उपेक्षा कर रहे हैं। मान लीजिये कि हिन्दी मुर्दाही है फिर इससे क्या हुआ? वह प्राचीन है इस विचार से ही उसे विश्वबिद्यालयों में स्थान मिलजाना चाहिये था। जिनका यह कहना है कि पुस्तकें नहीं मिलती हैं उनसे मेरा यह निवेदन है कि यदि बी० ए० एम० ए० में हिन्दी पढ़ाई जाय तो इस समयभी उपयुक्त हिन्दी पुस्तकें मिलसकती हैं। इस प्रस्तावका अनुमोदन करते हुए पं० नन्दकुमारदेव शर्मा ने कहा:—"शिक्षाके दो उद्देश्य होते हैं एक तो बुद्धि का विकास, दूसरा प्राप्त की हुई विद्याका उपयोग। ये उद्देश्य तभी सिद्ध हो सकेंगे जब बिद्यार्थियों को मात्र भाषा द्वारा शिक्षा मिलेगी। हिन्दी में पढ़ने योग्य पुस्तकें नहीं मिलती, यह दलील बिलकुल निकम्मी है। मिश्र बन्धुओं ने जो मिश्रबन्धु विनोद ग्रन्थ लिखा है उसमें हिन्दीकी पुरानी पुस्तकोंका

पता लगता है। जब बम्बई में स्वर्गीय रानाडे महोदय ने बम्बई विश्वविद्यालय में मराठी को स्थान दिलाने का प्रयत्नकिया तब उनको भी यही उत्तर मिला था। हरद्वार के गुरुकुल और वृन्दावनके प्रेममहाविद्यालय में शिक्षा माध्यम हिन्दी ही है । तब यूनिवर्सिटीयों में कोई अड़चल उपस्थित नहीं हो सकती।" पं० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी ने इसका समर्थन किया।

पांचावां प्रस्ताव जो स्कूलों में शिक्षा के माध्यम के सम्बन्ध में था काशी के पं० रामनारायण मिश्र ने उपस्थित किया, आपने कहाः—" देशी भाषा द्वारा शिक्षा देने के लाभ किसीसे छिपे नहीं हैं, प्रत्यक्ष है। हिन्दी उर्दू मिडिल पास करके जो लड़के अंगरेज़ी स्कूलों के "स्पेशल" "दर्जों" में भरती होते हैं, उनकी दशा उन विद्यार्थियों से कहीं अच्छी होती है, जो शुरू से अङ्गरेज़ी पढ़ते हैं। वे अपनी योग्यता द्वारा उन विद्यार्थयों से जो प्रारम्भ से अङ्गरेज़ी शिक्षा पाते हैं विशेष पारितोषकादि पाते हैं। हिन्दी उर्दू मिडिल पास विद्यार्थियों की दूसरे विद्यार्थियों से शारीरिक अवस्था भी अच्छी होती है।" "सद्धर्म प्रचारक" के सम्पादक, श्रीयुक्त इन्द्र वेदालङ्कार ने इस प्रस्ताव का सारगर्भित वक्तृता द्वारा अनुमोदन किया, जिसका सारांश यह है:—" यदि किसी विषय को हृदयङ्गत करना हो उसे मातृभाषा द्वाराही पढ़ना चाहिये सारे सभ्य देशों में विद्यार्थी अपनी मातृभाषा द्वारा ही शिक्षा प्राप्त करते हैं। परन्तु एक अमेरिकन यात्री के शब्दों में भारतवर्ष "विचित्रताओं का देश है। थोड़े दिन हुए कि एक अमेरिकन यात्री गुरुकुलमें आया था, उसे जब यह बतलायागया कि भारतवर्ष में बालकों को विदेशी भाषा द्वारा शिक्षा दी जाती है। तब वह कहने लगा "अमेरिका में सुना करते थे कि भारत विचित्रताओं का देश है निस्सन्देह यह भी उसकी विचित्रता है।" यह क्रम कितना अस्वभाविक और हानिकारक है, यह स्पष्ट ही है। शिक्षा का ऐसा क्रम कितना अस्वभाविक और हानिकारक है, यह स्पष्ट ही हैं। मेरी तो दृढ़ सम्मति है कि हमारी सारी शिक्षा मातृभाषा द्वारा ही होनी चाहिये और इसलिये इस प्रस्ताव में जो स्कूल की ऊपरी दो श्रेणियों को छोड़ देने वाला अंश है, उसका मैं विरोधी हूं। वर्तमान अस्वभाविक

अवस्था तब तक बनी रहेगी, जब तक कुल शिक्षा का प्रबन्ध हम लोग अपने हाथोंमें नहीं लेंगे। मुझे खेद के साथ कहना पड़ता है कि समस्त भारत वासियों की "अपनी" भाषा इस समय कोई नहीं है। जाति के जीवन में भाषा का बड़ा महत्व है। किसी जाति को नष्ट करनेके लिये पहिले उसकी भाषा को नष्ट करना होता है आप लोगों को कदाचित् मालूम होगा कि जर्मन सरकार ने पोलिश भाषाको निर्मूल करने के लिये कैसे कैसे प्रयत्न किये। मगर पोलिश जाति भी मातृभाषा की ऐसी कट्टर भक्त थी कि उसके सामने जर्मन अधिकारियों की कोई दाल नहीं गली। आज्ञा होगई थी कि जो पोलिश बालक जर्मन भाषा को छोड़ अपनी भाषा में ईश्वर प्रार्थना करें उनके बेंत लगाये जायँ और जो अध्यापक ऐसा आचरण करें वे निकाल दिये जायँ। परन्तु पोलिश अपने मत पर अड़े रहे और आखिर जर्मन सरकार कोअपनी आज्ञा रद्द ही करनी पड़ी।

मोतिहारी के पं० रामदहिन मिश्र ने समर्थन करते हुए कहा कि कलकत्ता यूनिवर्सिटी में मेट्रिक्युलेशन के विद्यार्थी इतिहास के प्रश्नपत्रों के उत्तर बङ्गला में लिख सकते हैं परन्तु प्रयाग के विश्व-विद्यालय ने अभी तक हिन्दी के सम्बन्ध में यह नियम नहीं बनाया है।

श्रीयुत मुख्तार सिंह, श्रीयुत रुद्रनारायण, पं० गणपति जानकी राम, और पं० रामरत्न के समर्थन करने पर प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

तदन्तर मध्यप्रदेश के सागर जिले से आये हुए पं० सुखराम चोबे ने कुछ मनोरञ्जक पद्य पढ़ सुनाये। इसके पीछे पं० जीवानन्द शर्मा ने कई गीत बड़े मधुर स्वर में गाये, तत्पश्चात्त आगरा धांधूपुरा के पं० सत्यनारायण कविरत्न ने मनोहर और चित्ताकर्षण करने वाली कविताएं पढ़ीं।

सम्मेलन की परीक्षा

सम्मेलन के प्रधान मंत्री, बाबू पुरुषोत्तमदास टंडन ने सम्मेलनकी परीक्षा के सम्बन्ध में कुछ शब्द कहे, उसके पश्चात् परीक्षा समि-

ति के संयोजक, बाबू रामदास गौड़ एम० ए० ने परीक्षा सम्बन्धी विवरण सुनाया जो पत्रिका के पिछले अङ्कमें छपचुका है। सर्वोत्तम परीक्षार्थी पं० लक्ष्मीधर शुक्ल लखनऊ का पं० जनार्दन भट्ट ने पं० बालकृष्णभट्टकी स्मृति में रौप्य पदक दिया। और एक सुवर्ण पदक बाबू पुरुषोत्तमदास टंडन ने दिया। श्रीयुत सत्यदेवने अन्य परीक्षार्थियों को अपनी पुस्तकें भेंट कीं।

इस समय सभास्थल मेंबैठे हुए सज्जनोंका उत्साह देखने योग्य था. प० जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी ने यह सूचना दी कि वे परीक्षाके प्रथम उत्तीर्ण विद्यार्थीको स्वर्ण पदक प्रदान करेंगे। 'चारों ओरसे पदक प्रदान करने वालों के नाम आने लगे। और इतने सज्जनोंके पदक देने के लिये पत्र आये वे सब पढ़कर नहीं सुनाये गये। कितने ही सज्जनोंने अपनी जाति के परीक्षार्थियों को पदक देने की प्रतिज्ञा की, और एक सज्जन ने सबसे कम नम्बर से फ़ेल होनेवाले को पदक देने की सूचना दी। श्रीवेङ्कटेश्वर समाचार के सम्पादक श्रीयुत पं० अमृतलाल चक्रवर्ती स्त्रीशिक्षा की वर्त्तमान प्रणाली के विरोधी हैं, इस पर एक महाशय ने "अमृतलाल चक्रवर्ती पदक" उस बालिका को देने की सूचना दी जो सम्मेलन की आगामी वर्ष की परीक्षा में उत्तीर्ण होगी"। इस पर श्रीयुत पं० अमृतलाल चक्रवर्ती ने भी "उस बालिका को एक रत्न जटित सुवर्ण पदक देने की प्रतिज्ञा की, जो केवल अपने पति से शिक्षा पाकर सम्मेलन की परीक्षा में उत्तीर्ण होगी"। इस के अनन्तर विहार के कुमार गणेश प्रसाद सिंह की ओर से यह सूचना दी गई कि वे गणित और फलित ज्योतिष की गवेषणा पूर्ण पुस्तक लिखने वाले को २००) उपहार स्वरूप देंगे और पुस्तक की योग्यता का निर्णय पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी अथवा उनके द्वारा नियुक्त कोई महाशय करेंगे।

इसके अनन्तर छटवां प्रस्ताव हिन्दू विश्व विद्यालय के संचालकों से हिन्दी को शिक्षा का माध्यम बनाने के अनुरोध के सम्बन्ध में था, इस प्रस्ताव को श्रीयुक्त पं० हरिश्चन्द्र विद्यालङ्कार ने बड़ी ओजस्विनी वक्तृता द्वारा उपस्थित किया, जिसका सारांश यह है "मातृ भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाने के विरुद्ध यह कहा जाता

है कि वह इस योग्य नहीं है कि उसमें शिक्षा दी जा सके। परन्तु इस युक्ति में कुछ भी सार नहीं है। जो भाषा हम नित्य बोलते लिखते हैं और जिस में सोचते हैं उसमें योग्यता का प्रश्न क्या है। समस्त सभ्य देशों में बालक अपनी मातृ भाषा द्वारा ही उच्च से उच्च विषयों की भी शिक्षा पाते हैं। केवल हमी लोग उलटे रास्ते पर चल रहे हैं और इस अस्वभाविक क्रम का परिणाम हमारे लिये कैसा हानिकारक होरहा है यह स्पष्टही है। आज से ५० वर्ष पहले जापान के साहित्य में क्या था? परन्तु आज उसका साहित्य इतना उन्नत इसलिये है कि जापानियों ने अपनी शिक्षा का माध्यम जापानी भाषा ही को रक्खा। पाश्चात्य वैज्ञानिक पुस्तकें सभी जापानी भाषा में अनुवादित करके जापानी बालकों को पढ़ाई गईं और इसी से मानसिक विकाश और स्वतन्त्र विचार में जापानी भारतवासियों से कहीं बढ़े चढ़े हैं। यहां तो बेचारे विद्यार्थियों को अङ्गरेजी पुस्तकें रट रट कर दिमाग़ खराब करना पड़ता है।

कुछ लोग कहते हैं कि हिन्दी में उपयुक्त पुस्तकें नहीं हैं। मेरा विश्वास है कि जब यूनिवर्सिटियों में मातृ भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाया जायगा तब बहुत पुस्तकें हो जावेंगी। गुरुकुल में यही कठिनाई हुई थी परन्तु वह हल हो गई।" इसका अनुमोदन करते हुये, बांदे के वकील कुंवर हरिप्रसाद ने कहा कि सारे भारत में हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने का साधन हिन्दू विश्व विद्यालय हो सकता है। अगर हमारे भाई ही हमारी अपील को नहीं सुनेंगे तो सरकार कैसे सुन सकती है।

बाबू श्यामसुन्दर दास ने अपनी स्वाभाविक ओजस्विनी वक्तृता द्वारा—सातवां प्रस्ताव प्रयाग विश्वविद्यालयों में हिन्दी के अच्छे विद्वानों को "फेलो" नियुक्त करने के विषय में उपस्थित किया। आपने राम कहानी" पुस्तक की बड़ी आलोचना की। पं० सूर्यनारायण दीक्षित के अनुमोदन करने पर प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। इसी अवसर पर यह सूचना सुनाई गई कि स्वामी ब्लाकटानन्द ने उस सज्जन को स्वर्ण पदक देने की प्रतिज्ञा की कि जो देश भक्ति पर धार्मिक कविता कर आगरे की नागरी प्रचारिणीसभा को भेजेंगे।

तीसरा दिन

मार्गशीर्ष ११ सं० १६७१

तीसरे दिन नियत समय पर पुनः कार्य्यारम्भ हुआ। आरम्भ में पं० जीवानन्द शर्म्मा काव्यतीर्थ ने श्रोताओं का चित्त अपने मधुर गीत से प्रसन्न किया। बाद उस के श्रीयुक्त सत्यदेवजी का "लेखन कला" पर ओजस्विनी व्याख्यान हुआ। वक्ता महाशय ने आरम्भ में "लेखन-कला" क्या है? इस विषय की व्याख्या करते हुए उत्तम लेखकों के गुण, उनके ग्रन्थों की उपयोगिता, बतलाते हुए कहाः-'कोई मनुष्य जिसके पास नये विचार, नयी बात लिखने का मसाला न हो वे किसी पुस्तकके लिखनेमें हाथ न डाले। जिनके पास कोई संदेशा नहीं उसको अधिकार नहीं है कि वह ग्रन्थ लिखे" आगे उन्होंने ऐसे लेखकोंकी आलोचनाकी, जो दूसरोंसे पुस्तक लिखा कर अपना नाम देदेते हैं आगे कहाः—"जो अपने सिद्धान्त को छिपाता है, वह पाठकों को धोखा देता है। उसकी पुस्तक नहीं पढ़नी चाहिये। उस उपदेशक का, उस लेखक, का कुछ भी प्रभाव नहीं, जिसका चरित्र कमजोर है।

इसके पीछे पं० तोताराम सनाढ्य का व्याख्यान हुआ, जिसमें उन्होंने जङ्गली जातिओंको मातृभाषासे कैसा प्रेमहै यह बतलाया? आपने कर्मवीर गान्धी और डाक्टर मणिलाल वरिस्टर-एट-ला के उन पत्रों को पढ़कर सुनाया जो उन्होंने हिन्दी में फ़ीजी में रहने वाले भारतीयों के नाम लिखे थे।"

श्रीयुक्त पं० कामता प्रसाद गुरु ने हिन्दी व्याकरण पर एक निबन्ध पढ़ा इस निबन्ध में व्याकरण संबन्धी कई विवेचनापूर्ण बातें कहीं थी। तत्पश्चात् पं० माधव शुक्ल, पं० सत्यनारायण कवि-रत्न, पीलीभीतके पं० राधेलालकी पाठकोंके चित्त प्रसन्न करनेवाली कविताएं हुईं इसके अनन्तर पं० अमृतलाल चक्रवर्त्ती ने जोशीले शब्दों में पैसाफ़ण्ड की अपील की जिस समय चक्रवर्त्ती जी अपील कर रहे थे. उस समय लखनऊके डिप्टी कमिश्नर तथा म्युनिसपल बोर्डके यूरोपियन सेक्रेटरी आये। पं०गोकर्णनाथ मिश्र और श्रीयुक्त सत्यदेवजीने भी पैसाफ़ण्डके लिये अपीलकी पं० गोकर्णनाथ मिश्रने अपील करते हुए कहाः—"इसी लखनऊमें सिर्फ़ दस वर्ष पहले यदि कोईहिन्दीकी बात कहता, तो लोग उसकी हंसी किया करते थे। मानो

वह अभी मद्रासले आरहा हो। पर आज यही लखनऊ हिन्दी प्रेम से पूरित है यह आप लोगों से छिपा हुआ नहीं है। एक आदमी ने कल कहा कि यह सम्मेलन देखकर मुझ पर बड़ा प्रभाव पड़ा है। बिना देखे मैं विश्वास नहीं कर था सकता कि यहां वालोंमें हिन्दीका इतना प्रेम होगा। आगे आपने कहा कि मेरे बहुत से मित्र इङ्गलैण्ड से पत्र भेजते हैं कि हमें "सरस्वती" और "मर्यादा" भेजिये। आपने यह भी कहा कि मैं हिन्दू विश्वविद्यालय कमेटी का सदस्य हूं और मैं आप लोगों को विश्वास दिलाता हूं कि उक्त समिति इस विषय पर विचार कररही है कि विश्व विद्यालय में हिन्दी तथा संस्कृत को यथा संभव अधिक स्थान दिया जायगा।

श्रीयुत् सत्यदेवजी ने अपने ओजस्विनी शब्दों में अपील करते हुये अपनी चद्दर पैसा फण्ड में दान करदी। यह चद्दर उसी समय ४१) रुपये में शाहजहांपुर के लाला नानकचन्द कपूरने खरीद कर श्रीयुक्त सत्यदेवजी को उढ़ा दी। एक सज्जन ने उत्साह में आकर अपना कोट बेचदिया, वह बाबू राधामोहन गोकुलजी ने ५) रुपया में खरीदलिया। पं० माधवशुक्लने अपना साफ़ा देदिया और एक सज्जन ने ७) सात रुपये में खरीद कर साफ़ा शुक्लजी को लौटा दिया। गोरखपुर के स्वामी सच्चिदानन्द जी ने अपने जूते दान दिये। जिसको गोरखपुर के पं० जयनारायण मिश्र ने ५) रुपये में खरीद लिये और उनको लौटा दिये। पैसा फंड में जिन महाशयों ने मुख्य मुख्य रकमें दीं उनका नाम नीचे दिया जाता है:—

श्रीमान् राजा रामपाल सिंह	२००)
" " इन्द्र विक्रम सिंह	२००)
" ठाकुर शिवनारायण सिंह	२००)
" पं० चन्द्रभाल बाजपेयी	१००)
" पं० सोमेश्वर दत्त शुक्ल	१००)
" सेठ खेमराज श्रीकृष्णदास	१००)
" कुमार गणेशप्रसाद सिंह	१००)
" ठाकुर जगन्नाथ सिंह	१००)
" पं० गोकर्णनाथ मिश्र	५०)
" पं० रघुवर दयाल मिश्र	५०)
" पं० शिवबिहारी लाल बाजपेयी	२५)

श्रीमान् राय देवीप्रसाद पूर्ण ११)
श्रीयुक्त मन्नूलाल १०)
" स्वामी ब्लाकटानन्द १०)

इसके पश्चात् बांदाके सुयोग्य वकील श्रीयुत् कुंवर हरप्रसादसिंह जी के मुहर्रिर मुंशीमथुराप्रसादको अदालतोंमें तीनहजार दरख्वास्तें देने के कारण सभापति महोदय ने सम्मेलन की ओर से चांदी का क़लमदान और प्रमाणपत्र दिया। इसके पश्चात् बाबू हरिकृष्ण दास धावन बी०ए०, एल०एल०बी०, बाबू लक्ष्मणप्रसाद श्रीवास्तव पं० ब्रजनाथ एम०ए०, एलएल०बी०, रायदेवीप्रसाद पूर्ण कवि आदि वकीलों ने प्रतिज्ञा की कि अबसे हम अपने यहां का हिन्दी में कार्य्य करेंगे। पं० गोकर्णनाथ मिश्र ने भी कहाः—"मैंने भी अपने मुहर्रिर से तीन दिन पहिले ही हिन्दी में काम करने के लिये कह दिया है। अब आगे से मेरे यहां भी हिन्दी में ही सब काम होगा। अवध में एक मुक़द्दमा हो रहा है वह मेरे हाथ में है उसका काम भी हिन्दी में करूंगा और वहाशायद अवध में पहला मुकद्दमा हिन्दी में होगा" लखनऊके लाला सांवलदास नें कहाः—मैं अपने बहीखाते हिन्दी में करूंगा"। पण्डित गणेशबिहारी मिश्र ने हिन्दी में काम करनेकी प्रतिज्ञा की। ठाकुर जगन्नाथप्रसाद सिंह रहवांने कहाः—"मैं अवध का छोटा सा जमीन्दार हूं, मेरा कार्य्य पहले से ही हिन्दी में होता है। राजासाहब दोहरा ने तीन महीनों से अपने यहां हिन्दी करदी है। प्रयागपुर, सूरजपुर और श्रीमान राजारामपाल सिंह के यहां हिन्दी में ही बही खाते का काम होता है। उन्नाव अवध के पं० चन्द्रभाल बाजपेयी ने भी हिन्दी की प्रतिज्ञा की। इसके अनन्तर प्रधान मन्त्री-जी ने सूचना दी कि श्रीयुत महावीर प्रसादजी आनरेरी मेजिस्ट्रेट आगे से अपने फैसले हिन्दी में लिखा करेंगे। कर्वीके बाबासाहब मोरेश्वर बलवन्त जोगे अपने फैसले हिन्दी में लिखा करते हैं, श्रीयुक्त शिवनारायणसिंह बहादुर ताल्लुकदार ने भी हिन्दी में काम करने की प्रतिज्ञा की। श्रीयुक्त पं० महेशदत्त शुक्ल ने कानपुर में जो कुछ कार्य हिन्दी में होरहा है,उसका परिचय देते हुए कहा कि मेरा मुसलमान मुहर्रिर सब काम हिन्दी में करता है।

"हिन्दी नहीं आर्य्य भाषा"

इसके बाद एक गुजराती सज्जन खड़े हुए, और कहने लगे कि मैं गुजराती होकर भी हिन्दी बोलता हूं और हिन्दी में ही अपना काम करता हूं। परन्तु हिन्दी नाम अशुद्ध है, आर्य्यभाषा नाम होना चाहिये। इस पर चारों ओर से बैठ बैठ जाओ मत बोलो की आवाज आने लगी। इतने में ही श्रीयुक्त हरिश्चन्द्र विद्यालङ्कार खड़े हुए, और कहा कि आर्य्य भाषा कहना आर्य्य समाज का यह सिद्धान्त नहीं है। लड़ाई झगड़े की बात साम्प्रदायिक सङ्कीर्णता का फल है। साम्प्रदायिकता ने भारतवर्ष को दग्ध कर दिया है। कम से कम अभी कुछ समय तक सम्मेलन को इस साम्प्रदायिकता से अलग ही रहने दीजिये। एकता की लहरें उठने दीजिये जब सब आपस में मिलजांय तब सलझ लीजियेगा।"

इसके अनन्तर रायदेवी प्रसादजी पूर्ण कवि की १३ वें प्रस्ताव पर हृदयग्राही और सुललित वक्तृता हुई, जो अन्यत्र प्रकाशित है। उक्त प्रस्ताव का अनुमोदन कालपी के श्रीयुक्त कृष्ण बलदेव वर्मा बी० ए०, और समर्थन पं० जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी और श्रीयुक्त हरिश्चन्द्र विद्यालङ्कार ने किया और सर्व सम्मति से स्वीकृत हुआ। अन्य प्रस्ताव सभापति द्वारा उपस्थित हुए और सर्व सम्मति से स्वीकृत हुए।

लाहौर में छठवां सम्मेलन।

श्रीयुक्त हरिश्चन्द्र जी ने १३ वें प्रस्ताव के अनुमोदन करने के पश्चात् चतुर्थ सम्मेलन के सभापति, श्रीमहात्मा मुन्शीरामजी का तार पढ़कर सुनाया जिसमें लाहौर के राय रामशरणदास, श्रीयुक्त रोशनलाल, लाला गोपाललाल भण्डारी और भक्त ईश्वरदास की ओर से निमन्त्रण था।

इसके पश्चात् प्रधान मन्त्रीजी ने सम्मेलन के कार्यालय के कार्य विवरण का संक्षिप्त वृतान्त सुनाया और सर्व सम्मति से कार्य विवरण स्वीकृत हुआ उसके पश्चात सम्मेलन के कार्यकर्ता और स्थायी समिति के सभासदों का निर्वाचन हुआ। सभापति

स्वेच्छा सेवक, स्वागतकारिणी सभा आदि को धन्यवाद देकर सभा विसर्जित हुई।

राय साहब की वक्तृता।

राय देवी प्रसाद जी पूर्ण कवि ने तेरहवें प्रस्ताव को उपस्थित करते समय जो हृदयग्राही और सुललित वक्तृता दी थी, उस का सारांश यह है :—

विद्या रसिक सज्जनो! हिन्दी हितैषी मित्रों! जिस प्रस्ताव को आपके सामने उपस्थित करने लिये मैं खड़ा हुआ हूं वह इस भांति है:—

"यह हिन्दी साहित्य सम्मेलन अपना नितान्त आश्चर्य प्रकट करता है कि पिगट्स के मेम्बर ने हिन्दी को मृतभाषा कहने का साहस किया है (सभा में "मिथ्या"की बाणी) और "सैयद करामत हुसैन" की सब कमेटीने यह मिथ्या आरोप्य किया है कि हिन्दी के प्रचारक राजनैतिक उद्देश्यों से उसका साहित्य गढ़ रहे हैं (सभा में "सब मिथ्याकी बाणी) वह सम्मेलन लोकल गवर्नमेण्टको धन्यवाद देता है कि उसने ऐसे निर्मूल अपवादों पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया (हर्ष ध्वनि)

मैं असमञ्जस में हूं कि इस मन्तव्य की प्रस्तावना में क्या कहूं, स्वयं सिद्ध को क्या सिद्ध करूं तथापि आज सभापति ने प्रोग्राम के अतिरिक्त वक्तृताओं और कविताओं के लिये उदारता पूर्वक समय दिया है, इस समय मेरा कथन भी खण्डित खण्डन तथा मण्डित मण्डन पूर्वक जो कार्य हम कर चुके हैं उसका अनुचिन्तन स्वरूप और जो कार्य हमें करना है भूमिका स्वरूप होगा (हर्षध्वनि)

महाशयो! माधवजी के पीलू और देश के स्वरों में उस गान के उपरान्त जो अभी आप ने सुना है, मेरे कर्कश शब्द आप पर क्या प्रभाव डाल सकेंगे? तथापि चक्रवर्ती महाराज ने जो पड़े हुए गले के साथ उच्चस्वर से अपनी "पैसा फंड" की अपील आप के हृदयों तक पहुंचाई है, उसके सहारे "सूत्रस्येवास्ति मे गतिः" के अनुसार मैं आशा कर सकता हूं कि मेरे कर्कश शब्द भी वहां तक पहुंच जावेंगे। (हर्षध्वनि और विनोद) महाशयो! सा-

हित्य में एक अलङ्कार होता है उसका नाम है "मिथ्या ध्यवसित" अलङ्कार, उसका प्रयोग बहुधा वेदान्त में हुआ करता है:-"वन्ध्या का पुत्र गन्धर्व नगर में आकाश पुष्प संचय के लिये पंगु होकर भी सैर कर रहा है बिना नाक के भी उन पुष्पों को सूंघता है, जैसे यह सब सत्य वा असत्य है, उसी प्रकार हिन्दी का निर्जीव होना भी सत्य वा असत्य है (हर्षध्वनि) मुझे तो अब ही ज्ञात हुआ है कि मुर्दा भी बड़े बड़े काम करता है दूर दूर से यात्रा कर के आता है (हास्य) दान देता है दान लेता है। और खाता है और खिलाता भी है (हास्य), मन्तव्य स्वीकार करता है और चियर्स भी देता है (हर्षध्वनि) यह करताल ध्वनि नहीं है यह अन्धकार के किले का बम्बार्डमेंट होरहा है (अत्यन्त हर्षध्वनि) क्या आश्चर्य जो हिन्दी को मुर्दा कहने वाला वेदान्ती हो जो "ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या" के भाव से हिन्दी साहित्य को कोई वस्तु नहीं समझता ब्रह्म ही तो वस्तु है जिसमें अवस्तु का आरोप हुआ करता है। उर्दू में वस्तु को चीज़ कहते हैं, उर्दू बोलने वालों का बोल चाल ही हुआ करता है कि "अज़ी जनाब यह ख़ाक सार तो बिलकुल नाचीज़ है (हास्य और हर्षध्वनि) ऐसे ही भाव से किसी ने हमको भी कुछ कह सुन दिया होगा। हां एक बात और याद आई हिन्दी के प्रचारक तो उसका साहित्य गढ़ ही रहे हैं, परन्तु अन्धेर यह है कि हमारी सरकार भी इस धुन में पड़ गई है, मिला देखिये सरकारी वार कम्यूनीक जो नागरी अक्षरों में निकलते हैं और जो उर्दू अक्षरों में निकलते हैं (वक्ता ने बहुत से युद्ध समाचार विज्ञप्तियां जो सरकार की ओर से प्रकाशित होती हैं सभा को दिखलाईं और नमूने की भांति उनमें से कुछ वाक्य पढ़े जो शुद्ध और सुन्दर हिन्दी के उदाहरण थे और उन पर विनोद पूर्ण तिलक करते हुए "अनुमानतः" शब्द जब आया तब कृत्रिम क्रोध से पत्र को टेबुल पर पटक दिया और कहा कि यह सरकारी हिन्दी अब असहनीय है सभा में विनोदसे करताल ध्वनि होती रही)।

महाशयो ! लोग कहा करते हैं कि "मुर्दा दिल ख़ाक जिया करते हैं" हम तो "मुर्दादिल" उसी को समझते हैं, जो एक जीती जागती इस देश की सब से अधिक प्रसिद्ध और प्रचलित भाषा से विमुख होने के अतिरिक्त उससे द्रोह भी रखता हो। अब मैं एक पद्य द्वारा

ईश्वर का धन्यवाद करता हूं कि उसकी कृपा से हिन्दी केवल जीवित ही नहीं है, किन्तु एक परिपूर्ण प्रकाश वाली वस्तु है (हर्ष ध्वनि) इसी में साहित्य का गौरव भी गर्भित है।

महाशयो ! "रसखान" की सुन्दर रस मया कविता आप आज ही इस प्लेटफार्म से सुन चुके हैं, कुछ "रसलीन" की रस लीनता की बानगी लीजिये, जो इसी अवध प्रान्त में बिलग्राम में हो गये हैं उनका नाम मुहम्मद अरिफ़ था।

"राधा पद बाधा हरन साधा करि रस लीन
अङ्ग अगाधा लखन को कीन्हों मुकुट नवीन।
(हर्ष ध्वनि)

यह "अङ्गदर्पण" का प्रथम दोहा है. एक दोहा उनका बहुत ही प्रसिद्ध है. जिसे लोग भ्रान्ति से दूसरे कवि का समझते है। वह दोहा यह है, इसमें यथा संख्यालङ्कार का अपूर्व चमत्कार है।

"अमी हलाहल मद भरे श्वेत श्याम रतनार'
जियत मरत झुकि झुकि परत जेहि चितवत इकबार।
(हर्ष ध्वनि)

एक बात और भी याद आ गई। ईसाई मिशनरियों को जिनको यहां के सर्व साधारण में अपने मत का प्रचार करना अभीष्ट था होली बाईबिल का अनुवाद करके लाखों पुस्तकें छपवाईं और बेचीं अथवा वितरण कीं। क्यों उनको भी हमारी तरह मुर्दा भाषा का साहित्य गढ़ना था। (हर्ष ध्वनि)

(प्रथम छप्पै)

अन्धकार है वहां जहां अदित्य नहीं है।
है वह मुर्दा देश जहां साहित्य नहीं है।
जहां नहीं साहित्य नहीं आदर्श वहाँ है*।
जहां नहीं आदर्श वहां उत्कर्ष कहां है।
है धन्यवाद उस जगत् के स्वामी विश्वादित्य का।
जो जग में पूर्ण प्रकाश है हिन्दी के साहित्य का।
(हर्ष ध्वनि)

* यथा मनु, वसिष्ठ, हरिश्चन्द्र, राम, कृष्ण, भीष्म पितामह, युधिष्ठिर, सती, गौरी, सावित्री, सीता, गान्धारी, इत्यादि।

अब दूसरे पद्य में यह निवेदन है कि हिन्दी का निर्जीवत्व एक असम्भव विचार है, अपितु उसे निर्जीव कहना ही एक निर्जीव आरोपण है और इस सम्मेलन की सत्ता ही इस पक्ष में प्रमाण है।

(दूसरा छप्पै)

मिथ्याध्यवसित अलङ्कार जो सुनत आये,
उसके हमने उदाहरण सब माने पाये।
शशक शृङ्ग लै घड़ी पङ्गु बन्ध्यासुत घूमै,
मृगजल-कमल-अगन्ध-अलिसुत बिन चूमै*
यों ही हिन्दी—निर्जीविता आरोपण निष्प्राण है।
सम्मेलन यह इस बात का सच्चा पूर्ण प्रमाण है।

(हर्षध्वनि)

अब तीसरे पद्य में यह प्रश्न करते हैं कि जो इस प्रकार अतीव प्रबल है और जो इस प्रकार विविध ध्वनियों से बड़े बड़े कार्य कर रही है क्या वह निर्जीव कही जा सकती है।

(तीसरा छप्पै)

प्रेम ध्वनि से जो लोगों को सदा जगावे।
शंख ध्वनि से जो ईश्वर का प्रेम सिखावे॥
सिंह ध्वनि से फूट और कुमति को मारै।
मेघ ध्वनि से दुराभाव को जो ललकारै।
यह विनय ध्वनि से प्रश्न है, जो यों प्रबल अतीव है।
तुम कहो हृदय पर हाथ रख, क्या हिन्दी निर्जीव है?

(हर्षध्वनि)

(चौथा छप्पै)

शोक न होता यदि यों मुर्दा कहने वाला।
होता कोई आफ्रिका का रहने वाला।
हिन्द निवासी हाय कहै हिन्दी को मुर्दा!
होगा उसका बड़ा ग़ैर मामूली गुर्दा!
क्यों भला देख पड़ती नहीं हिन्दी भाषा हिन्द की।
यह प्रभा पूर्ण जब है सभा दवा मोतिया बिन्द की।

(हर्षध्वनि)

---

* सब एक से एक अधिक असम्भव!

अब यह दिखलाते हैं कि हिन्दी का प्रयोग भारतवर्षीय संसार के संगीत में किस अधिकता से है। बङ्गाली, और महाराष्ट्र गवैये भी तानसेन बैजूबावरे सदारङ्ग इत्यादि के हिन्दी गीत गाते हैं।

(पाँचवां छप्पै)

जिसमें "ध्रुवपद" "भजन" "शूल" "धम्माल" सुरीले।
गाते हैं "ठुमरियां" रँगीली सदा रँगीले॥ *
हा! जिसमें मर्सिये तलक गावें दर्दीले।
मधुर स्वरों में जिसके हों व्याख्यान रसीले॥
ध्वनि गूंज रही जिसकी सरस भारत में अभिराम है।
मुर्दा कहना उस व्यक्ति को किन कानों का काम है॥ †

अब अगले पद्य में यह सूचना करते हैं कि मुसलमानों में भी हिन्दी अच्छे लेखक बराबर होते चले आये हैं, तो वह मर कब गई? यह भी सूचित करना अभीष्ट है कि पिछले समय में मुसलमानों को हिन्दी से द्वेष नहीं था, प्रत्युत उसके प्रति प्रेम और आदर था, अब भी बहुत से मुसलमानों को हिन्दी से उसी प्रकार प्रीति है।

(छठवां छप्पै)

हुए न थे जब दर्शन तक उर्दू बीबी के
"कुतुब अली" "मसऊद" हुए दो कवि हिन्दी के।
पीछे "कुतुबन शेख़" आदि हिन्दी के लेखक
हुए काव्य के रसिक और विद्या उत्तेजक॥
गुणवान "खाने खाना" सदृश कविता नेमी हो गये
"रसखान" और "रसलीन" से हिन्दी प्रेमी हो गये।

(हर्ष ध्वनि)

राजनैतिक उद्देश्य से न सही, धार्मिक उद्देश्य से सही!

एक पादरी पर जो जुङ्ग सवार हुई तो उन्होंने निर्जीव हिन्दी का व्याकरण ही लिख डाला। जिस का नाम प्रसिद्ध "भाषा भास्कर"

* मुहम्मद शाह के दरबार के गवैयों के गीतों में बहुधा "सदा रँगीले" सम्बोधन भी आता है।

† यह छप्पै कागज़ों की लपेट में रह गया था, सभा में नहीं पढ़ा गया था।

है (हर्ष ध्वनि) और उस जुङ्को शिक्षा विभाग ने भी ऐसा निबाहा कि वर्षों तक हिन्दी व्याकरण की वही पुस्तक स्कूलों में पढ़ाई जाती रही। (हास्य और हर्ष ध्वनि)

अब हिन्दी कवियों के नाम उदाहरणार्थ गिनाते हैं, जिनसे प्रत्यक्ष ही सिद्ध है कि हिन्दी मरने वा शिथिल होने के बदले क्रमशः उन्नति करती हुई आपके समय तक पहुंची है।

(सातवां छप्पै)

सुकवि "चन्द" "जगनिक" ऐसे होते ही आए
"गोरखनाथ" "कबीर" प्रेम बोते ही आए।
"तुलसी" "केशव" "सूर" "गंग" सेना पति"
"नरहरि" "भूषण" "देव" "विहारी" "मति" "पद्माकर"
है बहुत बड़ी नामावली श्री हरिचन्द प्रताप तक
है सदा वृद्धि पाती हुई हिन्दी पहुंची आप तक।
(हर्ष ध्वनि)

महाशयो! अब स्वयं हिन्दी की उक्ति है, वह कहती है कि यदि मेरी सामग्री उर्दू फेर दे तो वह बोल ही न सके प्रथम चार चरणों में उदाहरणवत् शब्दावली है परन्तु शब्द ऐसे चुने हैं कि जिस से एक विशेष दूसरा अर्थ भी झलकता है।

(आठवां छप्पै)

जिसे पलक पल घड़ी पहर दिन रात सिखलाया
पखवारा ऋतु बरस महीनों तक रटवाया।
जिसे एक दो तीन चार पांचादि पढ़ाया।
दूने पौने ड्योढ़ पहाड़ा कण्ठ कराया।
मम कोष व्याकरण फेर कर बीबी बोलें तो सही!
मम सन्मुख, मुझ से विमुख हो कुछ मुंह खोलें तो सही!
(हर्षध्वनि)

अगले छप्प में भी उदाहरण के लिये हिन्दी के शब्द दिये गये हैं, हिन्दी कहती है बिना मेरे उर्दू की सत्ता ही नष्ट होती है।

(नवां छप्पै)

आना जाना रोना गाना खाना पीना।
कहना सुनना रहना बहना मरना जीना।
पोता भाई बहिन बाप माँ लिखना पढ़ना।
मेल बढ़ावा सजधज कड़ुई बातें गढ़ना।
मुझ बिन उर्दू को एक भी जुमला रचना कठिन है।
जुमला-रचना की क्या कथा ? जीती बचना कठिन है।

(हर्षध्वनि)

अब हिन्दी कुछ आतङ्क से, अपनी पोसी हुई के प्रति कुछ उलाहने से कहती है।

(दशवाँ छप्पै)

जिस पक्षी को मृदुल शब्द दानों से पाला।
रक्षा को व्याकरण रूप पिंजड़े में डाला॥
सुर्ख़ ज़र्द की जगह लाल पीला सिखलाया।
नवों रसों का जिसे सरस जलपान कराया॥
मुझपर ही ग्रीवा की मटक ? अरी कपोती वाह वा॥
तू मुझ से ही चोंचें करे परी, तोती वाह वा (हर्षध्वनि)

और भी हिन्दी ही की उक्ति है, वह उर्दू को दोष न देकर समय को दोष देती है।

(ग्यारहवां छप्प)

प्रीति—पालने में मेरेही पलने वाली।
अभी हुई है निज पैरों कुछ चलने वाली॥
सीखा कैसा चलन लगी क्या चाल बनाने।
बोल चाल कुछ सीख चली है बात बनाने॥
मत चरचा चालो नीति की जग का येही हाल है।
उपकार भुला देना सहज आज कलह की चाल है॥

(हर्ष ध्वनि)

अगले पद्य में भी हिन्दी ही की उक्ति है, परन्तु अब आतङ्क की विशेषता है।

(बारहवाँ छुप्प)

कोसो जी भर हमें द्वेष से वा ईर्ष्या से।
कोई मरता नहीं किसी के कोसे कासे॥

हां, मेरा आतङ्क नोट चाहो तो कर लो।
होगा व्यर्थ कलङ्क चोट चाहो तो करलो॥
हूं, दिव्य, देववाणी, सुता, नाश नहीं मेरा कहीं।
मैं अमरों की सन्तान हूं मैं मरने वाली नहीं॥

(हर्ष ध्वनि)

अगले पद्य में हिन्दी अपनी अमरता का कारण स्पष्टता से बतलाती है।

(तेहरवां छप्पै)

मैंनेचर से बनी पली नेचरल् नियम से।
संस्कृत का पीयूष पिया मैंने संयम से॥
है ज्यों रविचन्द्रादि प्रकृति-सामग्री से धन्या।
मैं भी हूं कुछ वस्तु, देववाणी की कन्या॥
मम प्राकृति यह शब्दावली अस्त कभी होगी नहीं।
प्रतिभा—नभ की चन्द्रावली अस्त कभी होगी नहीं।

(हर्षध्वनि)

अब हिन्दी और हिन्दी के स्पष्ट सम्बन्ध पर दृढ़ विश्वास के आधार से कहते हैं।

(चौदहवां छप्पै)

संभव नहीं कदापि धर्म को छोड़ै धर्मी।
होसकती है दूर कभी पावक से गर्मी॥
स्वयं सिद्ध है, मित्र हिन्द हिन्दी का नाता।
है अभिलाषा यही रहे अनुकूल विधाता॥
तुम निष्ठा से लो आसरा प्रभु के पद अरविन्द का।
यह नाता है जगदीश कृत हिन्दी का अरु हिन्द का॥

(हर्षध्वनि)

अगले पद्य में भी उसी विश्वास की दृढ़ता का कथन है।

(पन्द्रहवाँ छप्पै)

यहां कुमढ़े की नहीं अजी बतिया है कोई।
ऊँगली से निर्देश हुआ अरु बस वह जोई॥
नहीं पतङ्गी रङ्ग धूप लगते उड़ जावे।
है यह वह संगठन कभी छूटने न पावे॥

संयोग नहीं यह ओस कण और मृदुल अरविन्द का।
यह नाता समझो प्रलय तक हिन्दी का अरु हिन्द का॥

(हर्षध्वनि)

अब हिन्दी देवी की अत्यन्त संक्षेप से एक पद्य में स्तुति करके मैं निवेदन समाप्त करता हूं।

(सोलहवां छप्पै)

छल जड़ता अज्ञान आदि असुरों के दल का।
करै दलन अरु हरै भार विद्या भूतल का॥
धर्म काव्य, इतिहास, नीति विज्ञान, महत्ता।
अर्थ, देश हित, मेल सुमति, दश आयुध सत्ता॥
उद्योग-सिंह-आरूढ़ शुभ दश-दिश भुजी महेश्वरी।
हो वरदा भारतवर्ष की श्री हिन्द पूर्णेश्वरी॥

जातीयभाषा

[कवि—पं० श्रीयुक्त अयोध्यासिंह उपाध्याय]

षट्पद

जातियां जिससे बनीं ऊंची हुईं फूलीं फलीं।
अंक में जिसके बड़े ही गौरवों से हैं पलीं॥
रत्न हो करके रहीं जो रंग में उसके ढलीं।
राज भूलीं पर न सेवा से कभी जिसकी टलीं॥
ऐ हमारे बंधुओ जातीय भाषा है वही।
है सुधा की धार बहुमरु भूमि में जिससे बही॥१॥
जो हुए निर्जीव हैं उनको जिला देती है वह।
धार सुरसरि कर्म्मनाला में मिला देती है वह॥
स्वच्छ पानी प्यास वाले को पिला देती है वह।
जो कली कुम्हला गई उसको खिला देती है वह॥
नीम में हैं दाख के गुच्छे वही देती लगा।
ऊसरों में है रसालों को वही देती उगा॥ २॥
आन जिनकी दिखातो देस ममता है निरी।
जो सपूतों की न उंगली देख सकते हैं चिरी॥
रह नहीं सकतीं सफलतायें कभी जिन से फिरी।

वह नई पौधें उठी हैं जातियां जिन से गिरी ॥
थीं इसी जातीय भाषा के हिंडोले में पलीं ।
फूंक से जिनकी घटायें आपदाओं की टलीं ॥३॥
है कलह वो फूटका जिसमें फहराता फरहरा ।
दंभ उल्लू नाद जिसमें है बहुत देता डरा ॥
मोह आलस मूढ़ता जिसमें जमाती है परा ।
वह अंधेरा देस का बहु आपदाओं से भरा ॥
दूर करती है इसी जातीय भाषा की किरन ।
भानु का सा है चमकता भालका जिसके रतन ॥ ४ ॥
सूझती जिनको नहीं अपनी भलाई की गली ।
पड़ गई है बीच में जिनके बड़ी ही खलबली ॥
है अनाशारंग में जिनकी सभी आशा ढली ।
जिन समाजों की जड़ें भी हो गई हैं खोखली ॥
ढंग से जातीय भाषा ही उन्हें आगे बढ़ा ।
है समुन्नति के शिखर पर सर्वदा देती चढ़ा ॥ ५ ॥
उस स्वकीया जाति भाषा सर्वथा सुख दानिकी ।
परम सुरला सुन्दरी आधार भूता आनिःकी ॥
जननि सी उपकारिका प्रतिपालिका कुल कानिकी ।
उस निराली नागरी अति आगरी गुण खानिकी ॥
प्रापमें कितनी है ममता दीजिये मुझको बता ।
आज भी क्या प्यार उससे आप सकते हैं जता ॥६॥
खोलकर आंखें निरखिये बंगभाषा की छटा ।
मरहठी की देखिये कैसी बनी ऊंची अटा ॥
क्या लसी साहित्य नभ में गुर्जरी की है घटा ॥
आह ! उर्दू का है कैसा चौंतरा ऊंचा पटा ॥
किन्तु हिन्दी के लिये ए बार अब भी दूर हैं ।
आज भी इसके लिये उपजे न सच्चे सूर हैं ॥ ७ ॥
फिर कहें क्यों आप उससे प्यार सकते हैं जता ।
फिर कहें क्यों आप में है उसकी ममता का पता ॥
फिर कहें क्यों है लुभाती नागरी लोनी लती ।
किन्तु प्यारे बंधुओ देता हूं मैं सच्ची बता ॥
दृष्टि उससे दैव की चिरकाल रहती है फिरी ।

जिस अभागी जाति की जातीय भाषा है गिरी ॥ ८ ॥
क्यों चमकते मिलते हैं बंगाल में मानव रतन।
किस लिये है बंबई में देवतों से दिव्य जन ॥
क्यों मुसलमानों की है जातीयता इतनी गहन।
क्यों जहां जाते हैं वे पाते हैं आदर मान धन ॥
और कोई हेतु इसका है नहीं ऐ बंधु गन।
ठीक है जातीय भाषा से हुई उनकी गठन ॥ ९ ॥
आंख उठाकर देखिये इस प्रान्त की बिगड़ी दसा।
हैं जहां पर यूथ हिन्दी भाषियों का ही बसा ॥
आज भी जो है बड़ों के कीर्त्ति चिन्हों से लसा ॥
सूर तुलसी के जनम से पूत है जिसकी रसा ॥
सिद्ध विद्या पीठ गौरव खानि विबुधों से भरी।
आज भी है अंक में जिस के लसो काशीपुरी ॥१०॥
अल्प भी जो है खिंचा जातीय भाषा ओर चित।
तो दशा को देख करके आप होवेंगे व्यथित ॥
नागरी अनुरागियों की न्यूनता अवलोक नित।
चित्त ऊबेगा दृगों से बारि भी होगा पतित ॥
आह ! जाती हैं नहीं इस प्रान्त की बातें कही।
नित्य हिन्दी को दबा उर्दू सबल है हो रही ॥११॥
यह कथन सुन कह उठेंगे आप तुम कहते हो क्या।
पर कहूंगा मैं कि मैंने जो कहा वह सच कहा ॥
जांच इसकी जो करेंगे आप गावों बीच जा।
तो दिखायेगा वहां पर आप को ऐसा समा ॥
हिन्दुओं के लाल प्रति दिन हाथ सुबिधा का गहे।
भूल अपनापन को उर्दू ओर ही हैं जा रहें ॥ १२ ॥
जो उठा कर हाथ में दस साल पहले का गज़ट।
देख लेंगे और तो होगी अधिक जी की कचट ॥
मिड्ल हिन्दी पास का था जो लगा उसकाल ठट।
वह गया, है एक चौथे से अधिक इस काल घट ॥
बढ़ रही है नित्य यों उर्दू छबीली की कला।
घोंटते हैं हाथ अपने हाय ! हम अपना गला ॥ १३ ॥
बन फलों को प्यार से खा छाल के कपड़े पहन।

राज भोगों पर नहीं जो डालते थे निज नयन ॥
फूल सा बिकसा हुआ लख जाति भाषा का बदन।
जो सदा थे वारते सानंद अपना प्राण धन ॥
उन द्विजों की हाय ! कुछ सन्तान चाहों भरी।
पड़ गई है पेच उर्दू में तजी निज नागरी ॥ १४ ॥
हिन्द हिन्दू और हिन्दी कष्ट से होके अथिर।
खौल उठता था अहो निज के शरीरों का रुधिर ॥
जो हथेली पर लिये फिरते थे उनके काज शिर।
थे उन्हीं के वास्ते जो राज तज देते रुचिर ॥
बहु कुंवर उन क्षत्रियों के तुच्छ भोगों से डिगे।
तोड़ नाता नागरी से रंग उर्दू में रंगे ॥ १५ ॥
हो जहां पर शिर धरों का आज दिन यों शिर फिरा।
फिर वहां पर क्यों फड़क सकती है औरों की शिरा ॥
किन्तु क्यों है नागरी के पास इतना तम घिरा।
आंख से कुछ हिन्दुओं के क्यों है उसका पद गिरा ॥
आप सोचेंगे अगर इसको तनिक भी जी लगा।
तो समझ जायेगे है अज्ञानता ने की दगा ॥ १६ ॥
आज दिन भी गांव गांवों में अंधेरा है भरा।
है वहां नहिं आज दिन भी ज्ञान का दीपक बरा ॥
आज दिन भी है मूढ़ता का है वहां डेरा परा।
जाति हित के रंग से कोरी वहां की है धरा ॥
हाथ का पारस भला वह फेंक देगा क्यों नहीं।
आह ! उसके दिव्य गुणको जानता है जो नहीं ॥ १७ ॥
है नगर के वासियों में ज्ञान का अंकुर उगा।
जाति हित में किन्तु वैसा जी नहीं अब भी लगा ॥
फूंक सेवह आपदा है सैकड़ों देता भगा ॥
जाति भाषा रंग में नर रत्न जो सच्चा रँगा ॥
उस बदन की ज्योति देती है तिमिर सारा नसा।
जाति के अनुराग का न्यारा तिलक जिस पर लसा ॥ १८ ॥
नागरी के नेह से हम लोग आये हैं यहां।
किन्तु सच्चा त्याग हममें आज दिन भी है कहां ॥
जाति सेवा के लिये हैं जन्मते त्यागी जहाँ।

आपदायें ढूढ़ने पर भी नहीं मिलती वहाँ ॥
जाति भाषा के लिये किस सिद्ध की धूनी जगी।
वे कहां हैं जिनके जी को चोट है सच्ची लगी ॥१६॥
निज धरम के रंग में डूबे तजे निज बन्धु जन।
हैं यहां आते चले यूरोप के सच्चे रतन ॥
किस लिये ! इस हेतु ! जिसमें वे करें तमका निधन।
दीन दुखियों का हरें दुख औ उन्हें देवें सरन ॥
देखिये उनको कहां आ करके क्या करते हैं वे।
एक हम हैं आंख से जिसकी न आंसू भी स्रवे ॥२०॥
जो अंधेरे में पड़ा है ज्योति में लाना उसे।
जो भटकता फिर रहा है पंथ दिखलाना उसे।
फंस गया जो रोग में है पथ्य बतलाना उसे।
सीखता ही जो नहीं कर प्यार सिखलाना उसे ॥
काम है उनका जिन्हें पा पूत होती है मही।
इस विषम संसार पादप के सुधा फल हैं वही ॥ २१ ॥
आज का दिन है बड़ा ही दिव्य बहु रत्नों जड़ा।
जो यहां इतने स्वभाषा प्रेमियों का पग पड़ा ॥
किन्तु होवेगा दिवस वह और भी सुन्दर बड़ा।
लाल कोई बीर लौं जिस दिन कि होवेगा खड़ा ॥
दूर करने के लिये निज नागरीकी कालिमा।
औ लसाने के लिये उन्नति गगन में लालिमा ॥ २२ ॥
राज महलों से गिनेगा झोंपड़ी को वह न कम।
वह फिरेगा उन थलों में है जहां पर घोर तम ॥
जो समझते यह नहीं, है काल क्या, हैं कौन हम।
वह बता देगा उन्हें जातीय उन्नति के नियम ॥
वह बना देगा बिगड़ती आंख को अंजन लगा।
जाति भाषा के लिये वह जाति को देगा जगा ॥ २३ ॥
वह नहीं कपड़ा रंगेगा किन्तु उर होगा रंगा।
घर न छोड़ेगा, रहेगा पर नहीं उस में पगा ॥
काम में निज वह परम अनुराग से होगा लगा।
प्यार होगा सब किसी से और होगा सब सगा ॥
बात में होगी सुधा उसका रहेगा पूत मन।

जाति भाषा तेज होगा दमकता बर बदन ॥ २४ ॥
दूर होवेगा उसी से गांव गांवों का तिमिर।
खुल पड़ेगी हिन्दुओं की बन्द होती आंख फिर ॥
तम भरे उर में जगेगी जोति भरी अति ही रुचिर।
वह सुनेगी बात सब,जो जाति है कब की बधिर ॥
दूर होगी नागरी के सीस की सारी बला।
चौगुनी चमकेगी उसकी चारुता डूबी कला ॥ २५ ॥
दैनिकों के वास्ते हैं आज दिन लाले पड़े।
सैकड़ों दैनिक लिये तब लोग होवेंगे खड़े ॥
केतु होंगे नागरी की कीर्ति के सुन्दर बड़े।
जगमगायेंगे बिभूषण अंग में रत्नों जड़े ॥
देस भाषा रूप से वह जायगी उस दिन वरी।
सब सगी बहनें बनायेंगी उसे निज सिरधरी ॥ २६ ॥
मैं नहीं सकटेरियन हूं और हूं न उतावला।
बात गढ़कर मैं किसी को चाहता हूं कब छला ॥
मैं न हूं उरदू बिरोधी मैं न हूं उससे जला।
कौन हिन्दू चाहता है घोंटना उसका गला ॥
निज पड़ोसी का बुरा कर कौन जग फूला फला।
हैं इसी से चाहते हम आज भी उसका भला ॥२७॥
किन्तु रह सकता नहीं यह बात बतलाये बिना।
ज्यों न जीयेगा कभी जापान जापानी बिना ॥
ज्यों न जीयेगा मुसल्मां पारसी अरबी बिना।
जी सकोगे हिन्दुओ वों हीं न तुम हिन्दी बिना ॥
देखकर उरदूकुतुब यह दीजिये मुझको बता।
आप की जातीयता का है कहीं उसमें पता ॥२८॥
क्या गुलाबों पर करेंगे आप कमलों को निसार।
क्या करेंगे कोकिलों को छोड़कर बुल बुल को प्यार ॥
क्या रसालों को सरो शम शाद पर देवेंगे वार।
क्या लखेंगे हिन्द में ईरान का मौसिम बहार ॥
क्या हिरासे और दजला आदि से होगी तरी।
तज हिमालय सा सुगिरिवर पूत सलिला सुरसरी ॥२९॥
भीम अर्जुन की जगह पर गेव रुस्तम को बिठा।

सभ्य लोगों में नहीं दृग आप सकते हैं उठा ॥
साथ कैकाऊस दारा प्रेम की गांठें गठा ।
क्या भला होगा ! रसातल भोज विक्रम को पठा ॥
कर्ण की ऊंची जगह जो हाथ हातिम के चढ़ी ।
तो समझिये ढह पड़ेगी आप की गौरव गढ़ी ॥३०॥
क्या हसन की मसनवी से आप होकर मुग्ध मन ।
फेंक देंगे हाथ से वह दिव्य रामायन रतन ॥
क्या हटाकर सूर तुलसी मुख सरोरुह से नयन ।
आप अवलोकन करेंगे मीरग़ालिब का बदन ॥
क्या सुधा को छोड़कर मंजुल मयंक मुखी सखी ।
आप सहबा पान करके हो सकेंगे गौरवी ॥३१॥
जो नहीं तो देखिये जातीय भाषा का बदन ।
पोंछिये उस पर लगे हैं जो बहुत से धूलिकन ॥
जी लगाकर कीजिये उसकी भलाई का जतन ।
पूजिये उसका चरन उस पर चढ़ा न्यारे रतन ॥
जगमगाजायेगी उसकी ज्योति से भारत धरा ।
आपका उद्यान यश होगा फला फूला हरा ॥३२॥
भाग्य से ही राज उस सरकार का है आज दिन ।
जो उचित आशा किसी की है नहीं करती मलिन ॥
शान्ति का जिसने यहां आकर अराजकता अगिन ।
उंगलियों पर जिसके सब उपकार हैं सकते न गिन ॥
जो न ऐसा राज पाकर आप सोते से जगे ।
तो कहें क्यों आप हैं रंग जाति भाषा में रंगे ॥३३॥
हे प्रभो उर हिन्दुओं में ज्ञान का अंकुर उगे ।
हिन्द में बन कर रहें सब काल वे सबके सगे ॥
दूसरों की हानि पहुंचाये विना औ बिन ठगे ।
दूर हों सब विघ्न बाधा भाग हिन्दी का जगे ॥
जाति भाषा के लिये जो राजसुख को रजगने ।
बुद्ध शंकर भूमि कोईलाल फिर ऐसा जने ॥३४॥

वर्णविचार समिति का विवरण।

सिद्धान्त।

कई वर्षों से इस विषय पर विचार हो रहा है कि हमारी देवनागरी लिपि में किन किन सुधारों की आवश्यकता है जिसमें वह सर्वमान्य हो जाय और उसमें जो जो त्रुटियां हों वे दूर हो जांय।

हमारी वर्णमाला में प्रधान गुण यह है कि उसकी प्रत्येक ध्वनि हमारे सब कामों के लिये अलग है और उसके प्रत्येक चिन्ह अर्थात् अक्षर का वही नाम है जो उन ध्वनियों का है। अतः इस प्रश्न पर विचार करने के लिये हमें अपनी वर्णमाला की ध्वनि पूर्णता, उच्चारण निश्चितता, सरलता, सुन्दरता का ध्यान रखना चाहिये और साथ ही ऐसे प्रस्ताव उपस्थित करने चाहिएं जिससे उसमें शीघ्र-लेखन शक्ति भी प्राप्त हो जाय।

ध्वनि-पूर्णता के सम्बन्ध में दो भिन्न भिन्न विचार हैं। कुछ महाशयों का तो यह कथन है कि हमारी भाषा और बोलियों के लिये जिन जिन ध्वनियों का प्रयोजन है उतनी ही ग्रहण की जाँय। इसके विरुद्ध कुछ महाशय कहते हैं कि संसार की जितनी भाषाएं हैं उन सब की ध्वनियों के लिये उसमें संकेत हों। वे लोग कहते हैं कि इस उद्देश्य में सफलता प्राप्त करने के लिये कुछ थोड़े से चिन्हों के मान लेने से हमारा काम चल जायगा और हमारी वर्णमाला ऐसी सर्वांग पूर्ण हो जायगी कि इसकी समता संसार की कोई लिपि न कर सकेगी। प्रथम पक्ष वाले कहते हैं कि यह कार्य असम्भव है और इस आदर्श के मानने में हम एक बड़े सिद्धान्त को भूलते हैं जो इस बात को स्पष्ट कहता है कि प्रत्येक भाषा की ध्वनियाँ के लिये उसकी विशेष लिपि ही उपयुक्त है और उसका उच्चारण उन संकेतों के आधार पर वे ही ठीक ठीक कर सकते हैं जिनकी वह मातृभाषा है। हम लोग इसी सिद्धान्त को मानते और इसी के अनुकूल कार्य करना उचित समझते हैं तथा दूसरे सिद्धान्त के अनुकूल कार्यकरनेमें शिक्षा प्रकार में बाधाकी आशंका करते हैं*।

* हम में से केवल मुझ शुकदेव विहारी मिश्र का विचार है कि केवल दो चिन्ह बढ़ाने से नागरी लिपि द्वारा अङ्गरेजी और भारत में प्रचलित सभी बोलियों का शुद्ध व्यक्त होना सम्भव है, सो दो चिन्ह बढ़ाने चाहिये। शुकदेव विहारी मिश्र।

उच्चारण-निश्चितता के सम्बन्ध में हम लोग इस बात को मानते हैं कि हमारी वर्णमाला में यह प्रधान गुण वर्तमान है कि प्रत्येक ध्वनि का उच्चारण निश्चित है और उसके संकेत भी उसी नाम से अंकित हैं अर्थात् "अ" ध्वनिके लिये जो चिन्ह हमारी वर्णमालामें निर्धारित है वहभी "अ" ही नाम से अंकितहै। इस गुण को सदा बनाए रहना ही हमारा सिद्धान्त होना चाहिये। इसमें किंचित भी फेर फार अनावश्यक अनुचित और हानिकारक है क्योंकि हमारी वर्णमाला की सरलता भी इसीउच्चारण निश्चितता पर निर्भर है।

हमारी वर्णमाला में सरलता और सुन्दरत रूपी गुण तो स्पष्ट ही हैं। उनके विषय में कुछ कहना आवश्यक नहीं है।

जिस गुण का हमारी वर्णमाला में अभाव है वह शीघ्र लेखन शक्ति है। स्पष्टता और शीघ्र लेखन शक्ति इन दोनों का आपस में विरोध है। जहां एक में पूर्णता है वहां दूसरे का अभाव है। पर समयका प्रवाह इस बात के पक्ष में है कि जहां तक संभव हो शीघ्र लेखन शक्ति का सम्पादन किया जाय। हम लोगों के विचार में भी यह उचित जान पड़ता है परन्तु साथही हम स्पष्टता का सर्वनाश करके इस गुण के सम्पादन करनेके पक्षपाती नहीं हैं।

इन पांच बातों का ध्यान रखकर हम लोग अपने विचार नीचे लिखते हैं।

(१) स्वर वर्णों में हमारी लिपि में ॠ, ऌ, ॡ की कोई आवश्यकता नहीं है। ये अक्षर वर्णमाला से निकाल दिये जाँय। प्रायः सभी पाठ्य पुस्तकों में यह परिवर्त्तन कर भी दिया गया है।

कुछ महाशयों की यह भी सम्मति है कि ऋ की भी आवश्यकता नही है, इसका काम साधारण "र" से चल सकता है। हम लोग इस मतके समर्थक नहीं हैं, क्योंकि इससे अनेक शब्दों में जो संस्कृतसे ज्यों के त्यों हमारी भाषा में आये हैं गड़ बड़ मच जायगा और समस्त शब्दों के बनने में संधि के नियमों में उलट फेर करना पड़ेगा।

(२) ए, ऐ, ओ, औ अक्षरों के दो उच्चारण कहीं पूर्ण और कहीं अर्ध हमारी भाषा में और विशेष कर उसके पद्य में होते हैं, कुछ महाशयों की सम्मति है कि जहां पूर्ण उच्चारण हो वहां तो

वर्तमान रूप बने रहें पर जहां आधा उच्चारण हो वहां इन्हीं रूपों में कुछ साधारण परिवर्तन करके उच्चारण स्पष्ट कर दिया जाय, जैसे ो ौ आदि। हम लोगों की सम्मति इसके विरुद्ध है। हम नये चिन्ह बनाना नहीं चाहते। तिस पर इन अक्षरों के उच्चारण में जो विशेष रूप से भेद देख पड़ता है वह प्रायः पद्य में ही होता है और वह भी केवल पिंगल शास्त्र के नियमों का पालन करने में ये नियम और पद्यों के पढ़ने का ढंग इस बात का स्पष्ट पथ प्रदर्शक है कि कहां कैसा उच्चारण होना चाहिये फिर भी यदि आवश्यकता समझी जाय तो उन नियमों का पता लगाया जाय जिनके अनुसार उच्चारण में भेद पड़ता है और वे विचार पूर्व निर्धारित किए जांय।*

(३) हिन्दी में चन्द्रबिन्दु और पूर्णबिन्दु के प्रयोग में बड़ी गड़बड़ है। इसको दूर करने के लिये नियम निश्चित होना चाहिये हम लोगों की सम्मति में इस कार्य के लिये एक अलग समिति का संगठन किया जाय जो विचार पूर्वक यह सम्मति दे कि किन किन नियमों का बनाना आवश्यक है। पर ऐसे नियमों के बनाने की आशा कम की जा सकती हैं क्योंकि चंद्रबिन्दु सानुनासिक के लिये और पूर्णबिन्दु अनुस्वर के लिये लिखे जाते है जिन में एक स्वर और दूसरा व्यंजन है।

(४) हम लोगों के विचार में हिन्दी लिखने में परसवर्ण के नियमों का पालन होना अनावश्यक है। हमारा उद्देश्य लेखन रीति को सुगम करने का है और परसवर्ण के नियमों के पालन करने में इसमें जटिलता आती है और समय अधिक लगता है। जहां दो पंचम वर्ण एक साथ आवें वहां अनुस्वारसे काम न लिया जाय जैसे जन्म सम्मान सम्मति आदि में। अन्य अवस्थाओं में अनुस्वार से काम लिया जाय। इस सिद्धांत को मान लेनेसे हमारी वर्णमाला में ङ ञ की आवश्यकता नहीं रह जाती। पर वर्ग विभाग में हम उलट फेर करने के पक्षपाती नहीं हैं अतएव हमारी सम्मति में इन ध्वनियों के चिन्ह वर्तमान रहें।

(५) कुछ महाशयों का मत है कि विदेशीय भाषाओं के जो जो शब्द हमारी हिन्दी में आगए हैं और जिनका प्रयोग साधारणतः होता है वे अपने शुद्ध रूप में लिखे जांय। ऐसा करना मानो इस

*मैं यहां भी नये चिन्हों का पक्षी हूं। शुकदेव बिहारी मिश्र।

बात को स्पष्ट स्वीकार करना है कि हमारी भाषा में यह सामर्थ्य नहीं है कि वह अन्य भाषा के शब्दों को लेकर उन्हें अपनी टकसाल में ढाल कर अपना बना सके। किसी प्रौढ़ भाषा में यह नहीं देखा जाता है कि वह दूसरी भाषाओं के शब्दों को लेकर उन्हें अपने मुख्य रंग में रंजित न करले। हमारी भाषा में भी यह सामर्थ्य होते हुए जो महाशय यह चाहते हैं कि हिन्दी में विदेशीय शब्द ज्यों के त्यों बने रहें वे कभी भी उसमें न मिल सकें, उनके मत के समर्थक हम लोग नहीं होसकते। हम अपनी भाषा को पूर्ण सामर्थ्यवती बनाना चाहते हैं और उसपर व्यर्थ लांछन नहीं लगाना चाहते।

इतिहास इस बात को पूर्णतया सिद्ध करता है कि संसार में सब जातियों की भाषा और रहन सहन पर उन अन्य जातियों का पूर्ण प्रभाव पड़ा है जिनसे किसी न किसी रीति से उनका कुछ घनिष्ट सम्बन्ध हो जाता है। यह सम्बन्ध प्रायः दो प्रकार से होता है एक तो जब एक जाति दूसरी जाति को पराजित करके उस देश का शासन करने लगती है और दूसरे जब दो जातियों में परस्पर व्यापार का सम्बन्ध होजाता है। इस प्रकार से सम्बन्ध होने पर परस्पर शब्दों का हेर फेर होने लगता है और प्राकृत नियमानुसार वे शब्द काल पाकर अपना रूप किंचित परिवर्तन करके स्वयं उस भाषा में मिल जाते और उसके शब्द माने जाते हैं यद्यपि उनकी उत्पत्ति के विषय में यही कहा जाता है कि वे शब्द अमुक भाषा के हैं। इस प्रकार से जिस भाषा में शब्द मिल जाते हैं उस भाषा की कुछ अप्रतिष्ठा नहीं मानी जाती वरन् आत्मीय करण शक्ति की प्रशंसा होती है और उसका शब्द भंडार दिनों दिन बढ़ता जाता है तथा उसमें नए नए भावों और विचारों के प्रगट करनेकी शक्ति बढ़ती जाती है। अतएव नीचे ऊपर चिन्हों को देकर न हम अपनी वर्णमाला को जटिल बनाना चाहते हैं और न अपनी भाषा की आत्मीय करण शक्ति को नष्ट किया चाहते हैं। हमारी भाषा में तद्भव शब्दों की विशेष संख्या इस शक्ति का प्रमाण है। इसे बनाए रखना और इसकी वृद्धि करना हमारा परम कर्तव्य होना चाहिये।

(६) ड़ ढ़ चिन्हों के उच्चारण हमारी भाषा में वर्तमान हैं अत एव उन्हें यथास्थित रखना चाहिये ।

अब अपनी वर्ण मालाके रूपों पर हम लोग अपने विचार प्रकट करते हैं यद्यपि हम लोग यह स्वीकार करते हैं कि हमारी वर्णमाला के लिखने का जो ढंग प्रचलित है उसमें आवश्यक से कुछ अधिक समय लगता है, पर ध्यान रहे कि शीघ्रता के लिये हम अपनी स्पष्टता को नष्ट करने के लिये उद्यत नहीं हैं हां स्पष्टता को स्थिर रक्खे हुए जहां तक शीघ्रता सम्पादित हो सके उसे मानने के लिये हम लोग तैयार हैं। हमारी सम्मति में अक्षरों के ऊपर जो लकीरें खींची जाती हैं लिखने में उनका प्रयोग उठा दिया जाय। इससे लगभग तिहाई समय की बचत अवश्य हो जायगी और हमारी समझ में यह अलम है। इससे अधिक शीघ्रता प्राप्त करने में लाभ की अपेक्षा हानि की अधिक आशंका है यदि यह मान लिया जाय तो हम लोग निम्न लिखित अक्षरों के लिखने के रूप में किञ्चित परिवर्तन करने की सम्मति देंगे।

अक्षर	परिवर्तित रूप
अ	[illegible]
ख	[illegible]
घ	[illegible]
ण	[illegible]
भ	[illegible]
ध	[illegible]

ऊपर लिखे हुए सिद्धांन्त हम लोगों ने विचार पूर्वक स्थिर किये हैं। आशा है इन पर यथोचित ध्यान देकर कुछ निर्णय किया जायगा।

जगन्मोहनवर्म्मा
श्यामसुन्दरदास
गौरीशंकर हीराचंद ओझा
शुकदेव विहारी मिश्र
श्रीशचन्द्र वसु
बाबूराव विष्णु पराड़कर

यह विचार प्रायः सब मेरे अभिमत हैं मुझे जो कुछ विशेष विज्ञापन करना है सो उस लेख से विदित होगा जो मैं पहिले भेज चुकाहूं आशा है लिपि की शीघ्रता के विषय में जो मत उस लेख में निवेदित है वह और उसमें निर्दिष्ट "मुआल्लिमे नागरी" नामक में दिये हुए उदाहरण ध्यान के योग्य समझे जाव—श्री कृष्णजोशी।

जोशीजी की सम्मति

हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्थायी सभा के श्रीयुत मन्त्री महाशय के समीप निवेदन है कि श्रीयुत बाबू श्यामसुन्दर दास जी के पत्र से विदित हुआ कि भागलपुर के अधिवेशन से साहित्य सम्मेलन ने देवनागरी वर्णमाला सम्बन्धी प्रश्नों पर विचार करने के लिये एक उपसमिति बनाई और उसमें स्थान देकर मुझको भी आदृत किया। मेरी अल्प बुद्धि में तो यह प्रतीत होता है कि इस विषय में पुरातन समयों में अद्भुत प्रज्ञाशाली और सूक्ष्मदर्शी महापुरुषों ने चिरकाल तक विचार करके इस वर्णमाला को ऐसा सर्वांग सुन्दर और परिपूर्ण बना दिया है कि वह जगत भर में अद्वितीय मानी गई। अब इस विषय में विचार का बहुत अवकाश नहीं दिखाई देता। देवनागरी के प्रचार की अपेक्षा है उस पर विचार की बहुत आवश्यकता नहीं है। नागरी के प्रचार में सम्मेलन की स्थायी समिति जो उद्योग कर रही है उसका धन्यवाद करना सब नागरी के प्रेमियों को उचित है, उस उद्योग से सम्मेलन और नागरी प्रचारिणी इत्यादिक सभाओं की ओर से उत्तरोत्तर वृद्धि की आवश्यकता है। जहां नागरी का प्रचार हो जाता है वहां विचार की आवश्यकता नहीं रहती। मध्य भारत में, अलमोड़ा नैनीताल आदि प्रान्तों में और ग्वालियर रीवां प्रमुख राज्यों में जहां राज्य कार्य और लोक व्यवहार से नागरी प्रचलित है वहां कोई कठिनता किसी को नहीं होती और न कोई संशयग्रस्त और विचारस्पद विषय उपस्थित होते हैं। जहां नागरी लिपि का प्रचार बहुत नहीं है वहां लोग कहा करते हैं कि नागरी में और तो सब गुण हैं पर शीघ्र नहीं लिखी जा सकती। इस अपवाद को सुन कर उन प्रान्तों के लोग हंसते हैं जहां नागरी लोक व्यवहार में प्रचलित है। यह सच है कि पोथी के अक्षरों को संपूर्ण और सुन्दर बनाने में समय लगता है। अंग्रेजी के छापे के अक्षर भी हाथ से लिखे जाते हैं तो लिपि के अक्षरों से बहुत अधिक समय लगता है पर अंग्रेजी लिपि के अक्षर जो शीघ्र लिखे जाते हैं छापे से वस्तुतः भिन्न नहीं होते वैसे ही जहां नागरी लोक व्यवहार में है वहाँ वह भी शीघ्र लिखी जाती है और पोथी या छापे के अक्षरों से वस्तुतः भिन्न नहीं होती और न उसमें अस्पष्टता का दोष होता। पोथी के अक्षर अभ्यास से क्रमशः किस भांति शीघ्र लिपि में परिणत अथवा अव-

नत हो जाते हैं वह मुअल्लिमे नागरी नामक एक पुस्तक में दिखाया गया है जो उर्दू फारसी जानने वालों को नागरी सिखाने के लिये बनी है। उस पुस्तक की एक प्रति इस पत्र के साथ है। उसके ६०वें पृष्ठ में पोथी की लिपि का उदाहरण है जिसमें एक २ अक्षर पृथक लिखा जाता है। ६२, ६४ और ६६ पृष्ठ में उस लिपि के उदाहरण हैं जिसमें एक एक शब्द पृथक लिखा जाता है। और पोथी की लिपि की अपेक्षा शीघ्र लिखी जाती है। ६८ पृष्ठ में व्यावहारिक लिपि का उदाहरण है जो और भी शीघ्र लिखी जाती हैं। ७० और ७२वें पृष्ठ में जो लिपि है वह बहुत शीघ लिखी जा सकती हैं परन्तु रूप में वस्तुतः ६० पृष्ठ वाली पोथी की लिपि से भिन्न नहीं है। यह लिपि वैसी ही हैं जैसी कि गतवर्ष की वर्णविचार समिति ने यों निर्दिष्ट की हैः—"स्पष्टता को स्थिर रखते हुए जहाँ तक शीघ्रता प्राप्त हो सके उसे मानने के लिये हम लोग तैयार हैं हमारी सम्मति में जो अक्षरों के ऊपर लकीर खींची जाती है उसका प्रयोग उठा दिया जाय" यह सम्मति उन प्रान्तों के व्यवहार के अनुकुल है जहां नागरी न्यायालयों और कार्य्यालयों में प्रचलित है। मुअल्लिमे नागरी में जो उदाहरण शीघ्र लिपि के हैं वह अलमोड़ा प्रभृति प्रान्तों में चिरकाल से प्रचलित हैं और थोड़े से अभ्यास करने पर वह लिपि शीघ्र लिखी जाती है और शीघ्र पढ़ी जाती है।

इसी मुअल्लिम नागरी में दो और विषयों के उदाहरण विद्यमान हैं जिनका विचार गतवर्ष की समिति ने किया है। उनमें से एक तो ए, ऐ, ओ, औ इन स्वरों के भिन्न उच्चारणों के सूचक संकेत और दूसरा हिन्दी भाषा में विदेशी भाषाओं के जो शब्द प्रचलित हो गये हैं उनके लिखने के संकेत। इन दोनों विषयों के उदाहरण उस पुस्तक के ८० से ८३ पृष्ठ तक दिये हैं। इन उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि फारसी अरबी कैसी सुगमता से नागरी में लिखी जा सकती हैं। पढ़ने में तो फ़ारसी अरबी के अक्षरों की अपेक्षा नागरी में लिखी हुई फ़ारसी अरबी बहुत ही सुगमता से पढ़ी जाती है क्योंकि फारसी अरबी के अक्षरों में लिखे हुए शब्दों का ठीक २ उच्चारण वही कर सकता है जो उन शब्दों से परिचित हो क्योंकि एक शब्द कई भांति पढ़ा जा सकता है जैसे शब्द सुख़न सखुन् सुख़नि इत्यादि कई प्रकार पढा जा सकता है।

नागरी में सुख़न् लिखा जाय तो सुख़न् ही पढ़ा जायगा पढ़ने वाला शब्द को चाहे जानता हो या न जानता हो जिन संकेतों का प्रयोग उन उदाहरणों में किया गया है अर्थात् ऊपर अर्द्ध-चन्द्र और नीचे विन्दु उनकी आवश्यता केवल उनके लिये है जो शब्दों के उच्चारण को और छन्द की गति को नहीं जानते। छपी हुई पुस्तकों में और विशेष कर बालकों के पढ़ने की पुस्तकों में इन संकेतों का प्रयोग उपयोगी होसकता है। शब्दों को और छन्दों को जानने वालों के लिये जो हस्त लिखित वस्तु है उसमें संकेतों की आवश्यकता नहीं है नागरी वर्णमाला के अक्षर पर्याप्त हैं। अंगरेज़ी को या किसी और विदेशी भाषाको नागरी में लिखकर कोई नहीं पढ़ता और न यह आशा की जा सकती है कि कभी कोई पढ़ेगा इसलिये नागरी में अंग्रेजी इत्यादि विदेशी भाषा लिखने के लिये संकेतों की चिन्ता करना निरर्थक दिखाई देता है। किसी विदेशी वर्णमाला के अक्षरों को नागरी वर्णमाला में मिलाना कदापि श्रेय नहीं है। विजातीय का प्रवेश किसी समुदाय में कल्याणकारी नहीं पाया जाता। पण्डित शुकदेव विहारी मिश्र जी का कथन यथार्थ है कि दो एक नये चिन्ह बढ़ादेने से नागरी वर्णमाला समस्त भारत-वर्ष की भाषाओं के लिये उपयोग में आसकती है। बङ्गला गुजराती इत्यादि आर्यभाषाओं का निर्वाह तो निःसंदेह होसकता है और मराठी का होता ही है। द्राविड़ी प्रभृति दक्षिण की भाषाओं को या और किसी भाषा को नागरी में लिखने का कभी समय आजाय तो उन भाषाओं में जिन ध्वनियों के लिये नागरी में वर्ण न हों उनके लिये नये वर्ण उन्हीं अवयवों की योजना से बनने उचित हैं। जिनसे नागरी के अकारादिस्वर और ककारादि व्यञ्जन बने हैं जैसे अवर्ण तीन सरल तिर्यक् रेखा, एक उनको जोड़ने वाली भुग्नरेखा, एक सरल ऊर्द्ध रेखा का बना है क वर्ण में पहिले एक अर्द्ध वृत्त है तब एक सरल उर्द्ध रेखा है तब एक ईषद्वर्तुल रेखा है जो एक अधो-गत सरल रेखा से संयुक्त है ख वर्ण के पहिले अवयव में आधी अधोगत सरल रेखा है आधी आवर्जित सरल रेखा है और यह दो रेखा एक वर्तुलाकार विन्दुसे जुड़ी हुई हैं दूसरा अवयव क वर्ण के पहिले दो अवयवों का बना है। अब तक नागरी वर्णमाला के लिये नये वर्णों की कल्पना करने की आवश्यकता नहीं हुई कभी होतो नये

वर्णों के अवयव और उनकी योजना ऐसे होने चाहियें कि वर्तमान वर्णों के साथ विजातीय न दिखाई दें। क्रि यह एक कल्पित नया वर्ण है जो ई और क के अवयवों से बना है र्क यह भी एक नयी कपोल कल्पना है जिसके अवयव व और र हैं इसी प्रकार बहुत नये वर्ण बन सकते हैं जो देवनागरी वर्णों में मिल सकते हैं पर अब तक कोई प्रबल आवश्यकता नये वर्णों की नहीं दिखाई देती। और न कोई और प्रकार का परिवर्तन वर्णमाला में करने की आवश्यकता दिखाई देती। ऋ ॠ ऌ ॡ स्वर वर्ण और ङ ञ व्यञ्जन वर्ण को वर्णमाला से निकाल देना योग्य नहीं दिखाई देता क्योंकि हिन्दी भाषा को संस्कृत के शब्दों की सम्पत्ति से सम्पन्न करने की आवश्यकता है जैसा कि बङ्गला मराठी आदि भाषाओं में किया जा रहा है और संस्कृत के शब्दों में इन वर्णों की आवश्यकता निस्सन्देह है। इसलिये संस्कृत और हिन्दी की वर्णमाला एक होनी चाहिये। ऋतु को रितु और मातृभाषा को मात्रिभाषा लिखना अशुद्ध है और ऐसा अत्याचार संस्कृत के शब्दों पर नहीं होना चाहिये। व्यापारियों और श्रमजीवियों और इतर अविद्वानों के लिये जो पुस्तक हों उनमें संस्कृत के अविकृत शब्दों का बहुत प्रयोग करना उचित नहीं पर जिसको बङ्गला में साधुभाषा कहते हैं और जिसको शास्त्रीय भाषा अथवा विद्वानोंकी भाषा भी कह सकते अपभ्रंश प्रचलित होगयाहै उसमें संस्कृतके शब्द शुद्ध लिखे जाने योग्य हैं। जिन शब्दोंका अपभ्रंश प्रचलित होगया है वह अपभ्रष्टरूपमें लिखे जांय तो हानि नहीं। सरकारी पाठशालाओं में पढ़ाने के लिये जो पुस्तकें हिन्दीकेनामसे गढ़ी जाती हैं उनके गढ़नेवाले हिन्दीभाषा पर और संस्कृतके शब्दों पर जो कुछ अत्याचार करें उनको अधिकार है परन्तु उनकी हिन्दी विद्वानोंके व्यवहार से सर्वथा वहिष्कृत रहनी चाहिये। पर सवर्ण न हो ऐसा नियम कियाजायतो उच्चारण शब्द को उत्चारण लिखना पड़ेगा और उल्लेख को उत्लेख लिखना पड़ेगा। हां सम्पत्तिको संपत्ति चिन्ताको चिंता, बिन्दु को बिंदु लिखने में कोई हानि नहीं है पर इस विषयमें कोई नियम बनाने की भी आवश्यकता नहीं दिखाई देती। जिसको जैसा अभ्यास हो वैसा लिखे। चन्द्रबिन्दु और पूर्ण बिन्दुके विषयमें भी नियम बनानेकी कोई बड़ी आवश्यकता नहीं दिखाई देती। चन्द्रबिन्दु का प्रयोग बहुत थोड़ा होता है भँवर कुँवर चँवर इत्यादि

शब्दों में चन्द्रबिन्दु का प्रयोग होना चाहिये पर लिखने और छापने वाले प्रायः सुगमता के कारण पूर्ण बिन्दु रख देते हैं परन्तु पढ़ने वाले उच्चारण शुद्ध ही करते हैं। इसमें इतना दोष अवश्य है कि कुछ शब्द जिनके उच्चारण और अर्थ भिन्न है वे एक से लिखे जाते हैं जैसा दन्त का अपभ्रंश दांत शब्द और इन्द्रियदमन करने वाले का बाचक दान्त शब्द दोनों दांत लिखे जाते हैं परंतु प्रसंग से शब्द का यथार्थ रूप स्पष्ट होजाता है नियम की कोई आवश्यकता नहीं दिखाई देती। इन थोड़ी सी बातों को छोड़कर और सब विषयों में गतवर्ष की वर्ण विचार समिति की सम्मति सर्वथा युक्ति युक्त और आदरणीय जान पड़ती है।

शुभम्
श्रीकृष्णजोशी

पंचम हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन,

के

प्रस्ताव

(१)

युरोपीय युद्ध।

बृटिश साम्राज्य और जर्मनी, आष्ट्रिया तथा टर्की में जो भयंकर युद्ध होरहा है, उसमें बृटिश सरकार से इस सम्मेलन की पूर्ण सहानुभूति है और इसे दृढ़ आशा है कि हमारे सम्राट् की इसमें शीघ्र ही जीत होगी।

(सभापति द्वारा)

(२)

हिन्दी हितैषियों की मृत्यु।

यह सम्मेलन पं० बालकृष्ण भट्ट, कविराजा मुरारिदान, मनीषि समर्थ दान, राय गंगाप्रसाद वर्मा बहादुर, राजा रामप्रताप सिंह बहादुर, स्वामी नित्यानन्द, बाबू ब्रजचन्द्र, लाला बैजनाथ, बाबू घनूलाल अग्रवाल तथा राय श्रीरामबहादुर की शोकजनक मृत्युपर

अपना आन्तरिक दुःख प्रगट करता है, और उनकी हिन्दी सेवाका स्मरण करता हुआ उनके सम्बन्धियों से अपनी समवेदना प्रदर्शित करता है।

(सभापति द्वारा)

(३)

नोटों और सिक्कों पर हिन्दी ।

इस सम्मेलन को इस बात का अत्यन्त दुःख है कि भारतगवर्नमेण्ट ने नागरी से परिचित बहुसंख्यक भारतीय प्रजा की सुविधा की ओर ध्यान न देकर नोटों पर से नागरी अक्षरों को उठा दिया है और अनेक बेर प्रार्थना करने पर भी इस सम्बन्ध में सम्मेलन के निवेदन को स्वीकार नहीं किया है। इस सम्मेलन ने सिक्कों पर नागरी अक्षर रखने के लिए भी कई बार भारतीय गवर्नमेण्ट का ध्यान आकर्षित किया है पर उसका भी अभी तक कोई फल नहीं हुआ। अतः यह सम्मेलन भारतगवर्नमेंट से पुनः सानुरोध प्रार्थना करता है कि नोटों और सिक्कों पर शीघ्र नागरी अक्षरों को स्थान दे।

प्रस्तावकर्ता—बाबू पुरुषोतम दास टंडन एम. ए. एलएल. बी.
अनुमोदनकर्ता —पं० दुर्गाप्रसाद बी. ए. एलएल. बी. सीतापुर।
समर्थनकर्त्ता—पं० देवीदत्त

(४)

विश्वविद्यालय में हिन्दी का स्थान ।

यह सम्मेलन इस बात पर अपना घोर असन्तोष और हार्दिक दुःख प्रकट करता है कि पंजाब और प्रयाग के विश्वविद्यालयों ने युनिवर्सिटीज कमीशन के सम्मति देने और दोनों गवर्नमेण्टों के उस सिद्धान्त से सहमत होने पर भी अब तक कालिज विभाग में देश भाषाओं की उपयुक्त और पूर्ण शिक्षाओं के होनेका कोई नियम नहीं बना है। इस सम्मेलन की सम्मति में इन दोनों विश्वविद्यालय को शीघ्र ही देश भाषाओं की पढ़ाई को भी अन्य विषयों की भांति पाठ्यक्रम में उपयुक्त स्थान देकर इस अभाव की पूर्ति करना चाहिये।

प्रस्तावकर्ता—पं० सूर्यनरायण दीक्षित बी. ए. एल. एल. बी.
अनुमोदनकर्ता—पं० नन्दकुमारदेव शर्मा ।
,, पं० जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी ।

(५)

स्कूलों में शिक्षा का माध्यम ।

इस सम्मेलन का यह दृढ़ निश्चय है कि स्कूलविभाग में अंगरेज़ी साहित्य को छोड़कर गणित, विज्ञापन, इतिहास, भूगोल आदि विषयों की शिक्षा का माध्यम अंगरेजी होने से वालकों की उपयुक्त और आवश्यक मानसिक उन्नति में बहुत बाधा पड़ता है और उन विषयों में उनका समुचित प्रवेश नहीं होने पाता तथा उनका बहुत सा समय व्यर्थ नष्ट होजाता है । अतएव यह सम्मेलन भारत तथा संयुक्तप्रदेश की गवर्नमेएटों से प्रार्थना करता है कि, वे कृपाकर ऐसी आज्ञा निकालें जिसमें यदि स्कूल विभाग की समस्त श्रेणियोंमें नहीं तो कम से कम ऊपर की श्रेणियों को छोड़कर बाकी सब श्रेणियों में अङ्गरेज़ी साहित्य के अतिरिक्त अन्य सब विषयों की शिक्षा देशभाषा द्वारा हो ।

प्रस्तावकर्ता—पं० रामनरायणजी मिश्र बी० ए० काशी ।
अनुमोदनकर्ता—श्रीयुत इन्द्रजी वेदालङ्कार ।
समर्थनकर्ता—पं० रामदहिन मिश्र काव्यतीर्थ मोतिहारी ।
,, बाबू मुख़्तार सिंह ।
,, मु० रुद्र नारायण ।
,, पं० गणपति जानकीराम दुबे ।
,, पं० रामरत्न जी ।

हिन्दू विश्वविद्यालय में हिन्दी ।

(६)

यह सम्मेलन हिन्दू विश्वविद्यालय के संचालकों से वलपूर्वक अनुरोध करता है कि उक्त विश्वविद्यालय में शिक्षा का माध्यम हिन्दी को बनावें ।

प्रस्तावकर्ता—पं० हरिश्चन्द्रजी विद्यालंकार देहली ।
अनुमोदन कर्ता—कुंवर हरिप्रसादसिंह जी वकील, बांदा ।

(७)

प्रयाग विश्वविद्यालय, टेक्स्टबुक कमेटी तथा अन्य समितियों में हिन्दी के ज्ञाता।

(क) इस सम्मेलन को दुःख है कि इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सदस्यों में हिन्दी विद्वानों की नितान्त कमी होने के कारण हिन्दी की अनपयुक्त पुस्तकें नियत होती हैं तथा परीक्षकों में उपयुक्त हिन्दी के ज्ञाता नहीं चुने जाते। यह सम्मेलन उक्त विश्वविद्यालय के चैंसलर महोदय से सानुनय प्रार्थना करता है कि वे अवसर मिलतेही हिन्दी के पांच माननीय ज्ञाताओं को यूनीवर्सिटी का फेलो नियत करने की कृपा करें।

(ख) शिक्षाविभाग सम्बन्धी ऐसे प्रश्नों पर विचार करनेवाली समितियों में जिनका देश भाषाओं से सम्बन्ध हो हिन्दी के विद्वानों का नियत होना परमावश्यक समझकर, यह सम्मेलन संयुक्त प्रदेश की गवर्नमेंट से प्रार्थना करता है कि ऐसी कमेटियों में उन्हें भी संख्या में स्थान दिया करे।

प्रस्तावकर्ता—बा० श्मामसुन्दरदास बी०ए० लखनऊ

अनुमोदनकर्ता—पं० सूर्यनारायण दीक्षित बी०ए०एल०एल०बी० लखीमपुर।

हिन्दी का लिङ्ग भेद।

(८)

यह सम्मेलन निम्न लिखित महाशयों की एक समिति नियत करता है जो आगामी सम्मेलन के पूर्व इस विषय पर विचार कर अपनी सम्मति दें कि हिन्दी में और विशेष कर उसके निर्जीव-पदार्थों के द्योतक शब्दों के लिंग निर्णय करने के लिये क्या कसौटी होना चाहिये और उसके लिए क्या नियम बनाना उपयुक्त होगा?

१—पं० कामता प्रसाद गुरू—संयोजक
२—पं० रामावतार पाण्डेय एम० ए०
३—पं० अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी
४—गोस्वामीराधाचरणजी
५—पं० गोविन्द नारायण मिश्र
६—पं० चन्द्रधर शर्मा गुलेरी

७—पं० पद्मसिंह शर्मा
८—पं० अमृतलाल चक्रवर्ती
९—पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय
१०—बा० श्यामसुन्दर दास बी० ए०
११—पं० चन्द्रशेखरजी शास्त्री
१२—पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी ।

(सभापति द्वारा)

वर्णविचार समिति ।

(९)

यह सम्मेलन वर्णविचार समिति के सदस्यों को उनकी रिपोर्ट के लिए धन्यवाद देता है और यह निश्चय करता है कि उक्त रिपोर्ट सम्मेलन पत्रिका तथा अन्य हिन्दी-पत्रों में प्रकाशित कर दी जाय। और, इस पर जो सम्मतियां पत्रों में प्रकाशित हों या सम्मेलन कार्यालय में प्राप्त हों उनका संग्रह करके स्थायी समिति कार्यालय आगामी वर्ष के सम्मेलन से ३ मास पूर्व पुस्तकाकार प्रकाशित कर दे और स्थायी समिति के सदस्यों के पास भेज कर उनकी सम्मतियों के साथ आगामी वर्ष के सम्मेलन में उपस्थित करे। संग्रह-कर्ता को सम्पादकत्व का सर्वाधिकार प्राप्त रहेगा।

(सभापति द्वारा)

(१०)

राजपूताने में नागरी का प्रचार ।

यह सम्मेलन निश्चय करता है कि स्थायी समिति एक उपयुक्त व्यक्ति को इस कार्य के लिए नियत करे कि वह राजपूताना और मध्यभारत के समस्त देशी राज्यों में घूम घूम कर इस बात की पूरी २ जांच करे कि किस राज्य में हिन्दी तथा नागरी प्रचार की क्या अवस्था है। और वहां के मुख्य २ हिन्दी प्रेमियों की सम्मति के अनुसार उनका पूर्ण प्रचार किस प्रकार हो सकता है। यह रिपोर्ट आगामी सम्मेलन के तीन मास पूर्व प्रकाशित करदी जाय और उस पर आगामी सम्मेलन में विचार हो।

प्रस्तावकर्ता—पं० अमृतलालजी चक्रवर्त्ती।

(११)

नागरी प्रचार ।

(क) यह सम्मेलन हिन्दू राजा महाराजाओं, जमींदारों, वकील मुख्तारों तथा महाजनों और व्यापारियों से सविनय प्रार्थना करता है कि वे अपने बालकों की प्रारम्भिक शिक्षा नागरी अक्षरों तथा हिन्दी भाषा द्वारा करावें और अपने अधीनस्थ सब कार्य चाहे वे राज्य, ज़मींदारी, दुकानदारी, अदालतों या दफ्तरों से सम्बन्ध रखते हों, नागरी अक्षरों में करना और कराना आरम्भ कर दें और क्रमशः उसके पूर्ण प्रचार का उद्योग करते रहें। सम्मेलन संस्कृत और महाजनी पढ़ाने वाली पाठशालाओं के अध्यापकों से भी प्रार्थना करता है कि वह अपने विद्यार्थियों को हिन्दी पढ़ाया करें।

(ख) एक डेपुटेशन निम्न लिखित सज्जनों का नियत किया जाता है कि वह स्थान २ पर यथाशक्ति और समय पाकर नागरी प्रचार के निमित्त उद्योग करे।

बा० भगवानदास हालना—संयोजक
ला० गौरीशंकरप्रसाद बी. ए., एल एल. बी.
बा० पुरुषोत्तमदास टंडन एम. ए., एल एल. बी.
पं० सूर्यनारायण दीक्षित बी. ए., एल एल. बी.
पं० मुरलीधर मिश्र बी. ए., एल एल. बी.
बा० श्यामसुन्दरदास बी. ए.
बा० कृष्णबलदेव वर्मा
स्वामी सत्यदेवजी
पं० गणेशबिहारी मिश्र.
पं० महेशदत्त शुक्ल बी. ए., एल एल. बी.
पं० हरिश्चन्द्रजी विद्यालंकार
पं० विश्वेश्वरदयाल त्रिवेदी

(१२)

संयुक्त प्रदेश में प्रारम्भिक शिक्षा ।

(क) यह सम्मेलन गवर्नमेंट की ता० २९ अगस्त १९१४ के प्रारम्भिक शिक्षासम्बन्धी मन्तव्य के इस सिद्धान्त का विरोध करता है कि प्रारम्भिक शिक्षा को हिन्दी और उर्दू पुस्तकें सामान्य मिश्रित

भाषा में लिखाई जाय और केवल लिपि का अन्तर रहे। यह सम्मेलन गवर्नमेण्ट से निवेदन करता है कि संयुक्त प्रान्त की हिन्दी जानने वाली और हिन्दी में काम करनेवाली बहुसंख्यक प्रजा की शिक्षा की ओर ध्यान देकर हिन्दी पढ़नेवाले बालकों के लिए आरम्भ से ही शुद्ध किन्तु बहुत सरल हिन्दी भाषा में पाठ्य पुस्तकें तैय्यार कराई जांय।

(ख) यह सम्मेलन सर जेम्स मेस्टन महोदय को स्वर्गीय बाबू गंगाप्रसाद वर्मा जी का प्रोफ़िशिएन्सी (प्रवीणता) परीक्षाओं के सम्बन्ध में प्रस्ताव स्वीकार करने को सन्नद्ध होने के लिए धन्यवाद देता है और निवेदन करता है कि-गवर्नमेण्ट प्रस्ताविक परीक्षा क्रम को स्वीकार करने के पहिले प्रकाशित करदे। यह सम्मेलन गवर्नमेंट की सेवा में उपस्थित करने के हेतु हिन्दी परीक्षा का क्रम बनाने के लिए निम्न लिखित सज्जनों की एक समिति नियुक्त करता है।

१—प्रोफेसर रामदास गौड़ एम० ए० प्रयाग. संयोजक
२—पं० रामनारायण मिश्र बी० ए० काशी
३—बाबू श्याम दास सुन्दर बी० ए० लखनऊ।
४—बा० पुरुषोत्तमदास टंडन एम० ए०, एल० एल०, बी०
५—श्रीयुक्त हरिश्चन्द्र जी विद्यालङ्कार देहली
६—ठाकुर शिवकुमार सिंह जी प्रयाग
७—राय देवी प्रसादजी पूर्ण बी० ए०, एल०एल० बी० कानपूर
८—पं० गोविन्दनारायण मिश्र कलकत्ता
९—पं० रामजीलाल शर्मा प्रयाग
१०—पं० शुकदेवविहारी मिश्र बी. ए., छत्रपुर।
११—पं० श्यामविहारी मिश्र एम. ए. बुलन्दशहर।

(ग) इस सम्मेलन को इसलामिया स्कूलों और मकतबों के खोलने के सम्बन्ध में गवर्नमेण्ट से विरोध नहीं है किन्तु दुःख है कि गवर्नमेण्ट ने हिन्दी की शिक्षा के लिए उस प्रकार का कोई प्रबन्ध नहीं किया है जैसा, उसने इसलामिया स्कूल खोलकर उर्दू शिक्षा के लिये किया है। अतः यह सम्मेलन गवर्नमेन्ट से निवेदन करता है कि हिन्दी की पढ़ाई के लिये भी हिन्दी बोलने वालों की

संख्या के अनुसार वैसी ही सुविधाएं कर दे जैसी उसने उर्दू के लिये की हैं।

(१३)

यह सम्मेलन इस बात पर अपना अतीव आश्चर्य प्रकट करता है कि पिगट कमेटी (आरंभिक शिक्षा सम्बन्धी कमेटी) के एक मेम्बर ने हिन्दी भाषा को, जो अधिकांश भारतवासियों की प्रधान भाषा है "Dead Language" अर्थात् "मृतभाषा" कहने का साहस किया है और मिस्टर कराम्रत हुसेन कमेटी ने यह निर्मूल आक्षेप किया है कि हिन्दी के प्रचारक राजनैतिक उद्देश्य से हिन्दी साहित्य को गढ़ रहे हैं—यह सम्मेलन प्रान्तिक गवर्नमेण्ट को धन्यवाद देता है कि उसने उक्त निर्मूल कथनों पर ध्यान नहीं दिया।

प्रस्तावकर्ता—राय देवीप्रसाद जी पूर्ण, बी.ए., बी. एल. कानपुर
अनुमोदनकर्ता—बा० कृष्णबलदेव वर्मा, बी. ए. कालपी
समर्थनकर्ता—पं० जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी, कलकत्ता
" —श्रीयुक्त हरिश्चन्द्र—विद्यालङ्कार

(१४)

नियमावली संशोधन

(क) यह नया नियम बनाया जाय—

"यदि किसी समय कोई ऐसी अवस्था उपस्थित हो जाय जो नियमावली की किसी धारा के अन्तर्गत न हो तो स्थायी समिति को अधिकार होगा कि अपने एक विशेष अधिवेशन में उस सम्बन्ध में निश्चय करके कार्य्य करे परन्तु इसकी सूचना सम्मेलन के आगामी अधिवेशन में लेनी होगी और भविष्यत् में सम्मेलन के निश्चित सिद्धान्तों के अनुसार कार्य्य होगा"।

(ख) वर्त्तमान नियम (१) में "इस सम्मेलन" के स्थान में "हिन्दी साहित्य सम्मेलन" रक्खा जाये।

"सम्मेलन पत्रिका" के नियम।

१—"सम्मेलन पत्रिका" हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन कार्य्यालय, प्रयाग, से प्रतिमास प्रकाशित होगी।

२—इसका वार्षिक मूल्य १) इसलिये रक्खा गया है कि सर्व-साधारण इसके ग्राहक हो सकें।

३—इस समय इसमें प्रतिमास कुल २४ पृष्ठ ही रहा करेंगे। परन्तु आवश्यकता होने पर कभी कभी पृष्ठ संख्या बढ़ा भी दी जाया करेगी। आगे चल कर यदि इसकी सेवा साहित्यसेवियों को रुचिकर हो, और इसके ग्राहकों की यथोचित संख्या हो जाय तो यही पत्रिका अधिकतर पृष्ठ-संख्याओं में और अधिकतर उन्नत दशा में प्रकाशित की जायगी।

४—इसके प्रबन्ध-विभाग के पत्र—ग्राहक बनने के लिये आवेदन, विज्ञापन-संबन्धी पत्र, मनीआर्डर इत्यादि—मन्त्री, साहित्य-सम्मेलन कार्य्यालय, जानसेनगंज प्रयाग, के नाम भेजे जाने चाहियें।

५—सम्पादक के नाम की चिट्ठियां, बदले के समाचार-पत्रादि समालोचना की पुस्तकें, पत्रिका में प्रकाशित होने के लिये लेखादि भी ऊपर ही के पते से भेजे जाने चाहियें।

विज्ञापनदाताओं के लिये नियम।

१—"सम्मेलनपत्रिका में अश्लील विज्ञापनों को स्थान नहीं मिलेगा।

२—विज्ञापन साधारणतः पूरे और आधे पृष्ठ से कम स्थान के लिये स्वीकृत न होंगे।

१—पृष्ठ का मासिक मूल्य ... ४।) होगा
२—आधे पृष्ठ का ... २॥) होगा

३—जो लोग १२ संख्याओं में विज्ञापन छपवाने का मूल्य एक साथ भेज देंगे उनका विज्ञापन एक संख्या में बिना मूल्य छाप दिया जायगा, अर्थात् १२ की जगह १३ बार उनका विज्ञापन छापा जायगा।

४—किसी दशा में पेशगी मूल्य बिना मिले कोई भी विज्ञापन नहीं छापा जायगा।

५—विक्रयार्थ पुस्तकों के विज्ञापनों पर ऊपर दिये हुए मूल्य से कम मूल्य न लिया जायगा।

१ पृष्ठ का मूल्य १ मास के लिये ३॥) और
आधे ,, ,, २) होगा।

६—अदालतों मे लेखकों की नौकरी, अध्यापक-अध्यापिकाओं की नौकरी, इत्यादि हिन्दी-प्रचारार्थ नौकरियों के विज्ञापन एक बार बिना मूल्य छाप दिये जायंगे। दूसरी बार और अधिकबार के लिये ऐसे विज्ञापनों का मूल्य केवल १) प्रतिमास होगा। विज्ञापन ८ पंक्तियों से अधिक न हो।

मन्त्री, हि० सा० स० कार्यालय, प्रयाग।

पं० ओंकारनाथ वाजपेयी के प्रबन्ध से ओंकार प्रेस प्रयाग में छपा।